श्री पट्टावली-समुच्चयः

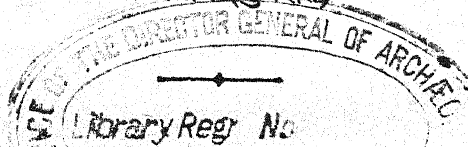
प्रथमो भागः

सं०--मुनिदर्शनविजयः

प्रकाशयित्री —

श्री चारित्र-स्मारक-ग्रन्थमाला

वीरमगाम (गुजरात)



वी० नि० सं० २४५६	मूल्यं-सार्धरूप्यकम्	विक्रमाब्द १९८९
कमलचारित्राब्द १५	१-८-०	यिस्त्राब्द १९३३

Published by:—
MAFATLAL MANEKCHAND,
Hony. Secretary,
S. C. M. B. S.
VIRAMGAM (Gujrat)

Printed by:—
BHOOP SINGH SHARMA,
SARASWATI PRINTING PRESS,
Belanganj, AGRA.

उपक्रम

यह एक अति स्पष्ट बात है कि किसी भी धर्म—समाज या राष्ट्र का जीवन केवल वर्तमान कालीन परिस्थिति में ही परिसीमित नहीं होता, वरन् उसके पीछे अतीव विस्तृत भूतकाल होता है और आगे निःसीम भविष्यकाल। भूतकाल को सुचारुतया ज्ञात करने का एक मात्र साधन है उसके इतिहास का तुलनात्मक ज्ञान एवं ऐतिहासिक महापुरुषों का चरित्रावलोकन। भविष्य की रूपरेखाका ज्ञान भी पूर्व इतिहास की बुनियाद के ऊपर चुने हुए विचारपूर्ण मनोमंथन के ऊपर निर्भरित है। इस तरह भूत और भविष्य दोनों ही के लिये इतिहास का ठोस ज्ञान अनिवार्य है, और इसी कारण से इतिहास एक अति महत्वपूर्ण एवं आवश्यकीय विषय माना जाता है।

इतिहास के धुरिण पौर्वात्य व पाश्चात्य विद्वानों का यह अनुभवपूर्ण कथन है कि-जैन इतिहास के अलावा भारतीय इतिहास अपूर्ण है। अतएव जैन इतिहास के अभ्यास में उपयुक्त हों ऐसे-शिलालेख, पट्टावली, प्रशस्ति, सिक्के एवं राससंग्रह आदि विषयक ग्रन्थरत्न तैयार कराना जैन समाज के लिये अतीव आवश्यक है। इसी विचारजन्य प्रेरणा से, उपलब्ध किन्तु अमुद्रित पट्टावलियों के प्रकाशनरूप में 'पट्टावली समुच्चय" नामक ग्रन्थ तैयार करने की योजना की गई है। यह ग्रन्थ क्रमशः कई भागों में प्रकाशित होगा, और इसमें निष्पक्षरित्या, केवल ऐतिहासिक दृष्टि से यथोपलब्ध हरेक जैन मत एवं गच्छ की पट्टावलियों का समावेश होगा।

आज मैं इसी योजना के फलस्वरूप "पट्टावली समुच्चय" के प्रथम भाग को पुरातत्व के अभिलाषियों के सम्मुख प्रस्तुत करता हूँ। इसमें कुल तेरह पट्टा-वलियां दी गई हैं।

"कल्पसूत्र स्थविरावली" व "नंदिसूत्र पट्टावली" ये दोनों देवर्धिगणि क्षमाश्रमण की (१) गणधरवंशीय तथा (२) वाचकवंशीय पट्टावलियां हैं, जिनके ऊपर, जैनधर्म के क्रमिक विकास की ओर दृष्टिपात करने वाले की दृष्टि प्रथम ही स्थिर होती है।

मैंने उपर्युक्त दोनों पट्टावलियों को मुख्य मान कर १३ पट्टावलियां, इस भागमें संगृहीत एवं संपादित की हैं। जिनमें तीन वाचकवंश की हैं और शेष दस गणधरवंश की। इन सब का क्रम इस प्रकार है—

(१) कप्पसुत्त थेरावली (प्राकृत)—चतुर्दशपूर्वधारी श्री भद्रबाहु स्वामी ने नवम पूर्वसे दशा श्रुतस्कंध उद्धृत किया, जिसके आठवें अध्ययन में कल्पसूत्र की रचना हुई। प्रस्तुत ग्रन्थ का समावेश उसी कल्पसूत्र में होता है। पश्चात् उस परंपरा में, देवर्धिगणि क्षमाश्रमण ने वी० नि० सं० ९८० की वल्लभीवाचना में विद्यमान एवं अपने नाम तक के गणनायकों की पट्टावली योजित करदी।

दे० ला० सुरत मुद्रित कल्पसूत्र, सुखबोधिका; आ० स० भावनगर मुद्रित कल्पकिरणावली, सुखबोधिका; भी० मा० बंबई मुद्रित कल्पसूत्र; श्रीचारित्रविजय जी के ज्ञानभन्डार का सचित्र हस्तलिखित कल्पसूत्र तथा हर्मन जेकोबी द्वारा मुद्रित कल्पसूत्र से इस थेरावली का संशोधन किया है। ग्रन्थकर्ता का परिचय इस ग्रन्थ के पृ० ४४ में दिया है।

(२) नंदी सूत्र पट्टावली (प्राकृत)—नंदीसूत्र के कर्ता श्री देवर्धिगणिक्षमाश्रमण ने भगवान् महावीर से प्रारंभकर अपने समय तक के वाचनाचार्यों की नामावली नंदीसूत्र के प्रारंभ में दी है। जिसका रचना काल वी० नि० सं० ९८० है। आ० स० सुरत मुद्रित श्री नंदीसूत्र तथा डेला के उपाश्रय अहमदाबाद की हस्तलिखित व० डा० नं० १४ नं० ४१ की ५३ पत्र वाली प्रति में उपलब्ध श्री आवश्यक नियुक्ति के आदि-मंगल पाठ से यह पट्टावली उद्धृत की गई है। तथा हस्तलिखित प्रति से उपलब्ध अधिक गाथाएँ ब्रेकिट-(   )- में दी गई हैं।

(३) दुसमाकालसमणसंघथयं (प्राकृत)—इस ग्रन्थ में वाचकवंश के आचार्यों की नामावली है। श्रीधर्मघोषसूरि ने तेरहवीं शताब्दि में इसकी रचना की। यह स्तोत्र वि० ध० ल० ज्ञा० आगरा से अशुद्ध एवं अपूर्ण प्राप्त हुआ था, जिसे अवचूरी के आधार पर यथाशक्य शुद्ध करके मुद्रित किया है। पश्चात् पू० पा० प्रवर्तक श्री कांतिविजय जी महाराज से प्राप्त प्रति के शुद्ध पाठ को भी संयोजित कर दिया है। ग्रन्थकर्ता का परिचय पृ० २८ व ३० में दिया है।

(४) श्रीगुरुपर्वक्रमः (संस्कृत)—महावैयाकरण श्रीगुणरत्नसूरि ने "क्रियारत्नसमुच्चय" नामक ग्रन्थ वि० सं० १४६६ में निर्माणित किया था। जो, य० ग्र० मा० बनारस से प्रकाशित हुआ है। उसी से यह पट्टावली उद्धृत की है। ग्रन्थकर्ता का परिचय पृ० ६५ में है।

(५) गुर्वावली-पट्टपरंपरासूरिनामानि (संस्कृत)—युगप्रधान श्रीमुनिसुन्दरसूरि रचित यह ग्रन्थ य० ग्रं० मा० बनारस से प्रकाशित हुआ है। उसके ४९६ पद्यमय छन्दों में से केवल पट्टपरंपरा के आचार्यों के नाम मात्र ही फेरिस्त के रूप में यहां दिये गये हैं। रचनाकाल वि० सं० १४६६ है। ग्रन्थकर्ता का परिचय पृष्ठ ६६ में दिया है।

(६) सोमसौभाग्य-पट्टावली (संस्कृत)—मुनि प्रतिष्ठासोमने श्रीसोमसुन्दरसूरि के चरित्र रूप "सोमसौभाग्य" काव्य की वि० सं० १५२४ में रचना की। जो जै० ज्ञा० प्र० सं० बंबई से भाषायुक्त मुद्रित हो चुका है। उसी के तीसरे सर्ग से यह पट्टावली ली गई है। ग्रन्थकर्ता की प्रशस्ति पृ० ४० में है।

(७) तपगच्छ पट्टावली सूत्रवृत्ति (प्राकृत-संस्कृत)—उपाध्याय श्रीधर्मसागर जी ने भगवान् महावीर से प्रारंभ कर जगद्गुरु श्रीहीरविजयसूरि तक के निर्ग्रन्थ, कौटिक, चंद्र, वनवासी वड़ व तपगच्छ का श्रृंखलाबद्ध इतिहास दिया है। इसकी वृत्ति स्वोपज्ञ है। श्रीहीरविजयसूरिजी ने चार गीतार्थों की परिषद् में इसका निरीक्षण व संशोधन किया था, अतएव यह ग्रन्थ अधिक प्रामाणिक गिना जाता है। यह पट्टावली वि० ध० ल० ज्ञा० आगरा से प्राप्त ह० लि० प्रति से संग्रहीत की है। रचनाकाल वि० सं० १६४६ है। ग्रन्थकर्ता का परिचय पृ० १७३ में है। इसी के साथ हमने निम्न तीन अनुपूर्तियां भी सम्मिलित करदी हैं।

(१) तपागणपतिगुणपद्धति (प्राकृत संस्कृत) उपा० श्रीगुणविजयगणि ने श्रीविजयसेनसूरि व श्रीविजयदेवसूरि के चरित्र वर्णन के रूपमें पूर्व पट्टावली की अनुपूर्ति की है। इसे मैंने वि० ध० ल० ज्ञा० आगरा से प्राप्त ह० लि० प्रति व जै० सा० सं० प्र० अहमदाबाद से प्रकाशित श्रीविजयदेवमहात्म्य के परिशिष्ठ से सम्पादित की है। गून्थकर्ता का परिचय पृ० ८२ में है।

(२) तपगच्छपट्टावली सूत्रवृत्ति अनुसंधान (संस्कृत-प्राकृत) उपा० श्री मेघविजयजी ने स्वोपज्ञवृत्तियुक्त चारगाथाओं द्वारा श्रीविजयसेनसूरि प्रमुखचार आचार्यों की जीवनी प्रदर्शित की है। यह, वि० ध० ल० ज्ञा० आगरा से प्राप्त, कर्ता ने स्वहस्त से लिखित शुद्ध किन्तु जीर्ण प्रति से, मुद्रित की गई है। रचनाकाल वि० सं० १७३२ है। गून्थकर्ता का परिचय पृष्ठ १०१ में है।

(३) गुरुमाला (संस्कृत)—श्री० य० जै० गु० पालिताना के संस्थापक गुरुदेव श्रीचारित्रविजय जी महाराज ने इस गून्थ में भगवान् महावीर से लेकर अपने दादागुरु श्रीविजयकमलसूरि तक के पट्टधरों का परिचय दिया है। साथ ही में पट्टधरों के समकालीन साधुओं की भी गणना दी है। मैंने उस गून्थ में से केवल हीरविजयसूरि से प्रारंभ कर अंत तक के भाग को उद्धृत किया है।

(८) श्रीमहावीर पट्टपरंपरा (संस्कृत)—श्रीदेवविमलगणि विरचित एवं नि० सा० प्रेस बम्बई से मुद्रित "हीरसौभाग्य" काव्य के चौथे सर्ग को यहां पर मैंने अक्षरशः उद्धृत किया है। जिसमें भगवान् महावीर से लेकर श्रीविजयहीरसूरि तक के आचार्यों की नामावली है। उसकी विशद एवं सोपज्ञ वृत्ति से मैंने यहां पर उपयुक्त भागमात्र ही गृहण किया है। इसकी रचना के विषय में यह विशेषता है कि इसका प्रारंभ करीब वि०सं० १६३१ में हुआ था और अंत करीब १६५६ में। क्योंकि धर्मसागरगणि रचित तपागच्छ पट्टावली में इसका उल्लेख है और १६५६ तक की कुछ घटनाओं का वर्णन भी इसमें मिलता है। गून्थकर्ता का परिचय पृ० १७३ में है।

(६) युगप्रधानाः (संस्कृत)—उपा० श्रीविनयविजय जी रचित व पं० ही० हं० जामनगर द्वारा प्रकाशित "लोकप्रकाश" के ३४ वें सर्ग में दुसमाकालसमणसंघ-थयं का विशद अवतरण संस्कृत भाषा में दिया है। अतएव मैंने इसे वहां से संगृहीत किया है। रचनाकाल वि० सं० १७०८ है। गून्थकर्ता का परिचय पृ० १०५ में है।

(१० श्री सूरिपरंपरा (संस्कृत)—"लोकप्रकाश" के ३७ वें सर्ग में कर्ता ने अपनी सूरि परंपरा रूप गणधरवंश का उल्लेख किया है। मैंने इसे वहीं से उद्धृत किया है।

(११) पट्टावली सरोद्धार (संस्कृत)—उपा० श्रीरविवर्द्धन रचित इस गून्थ में स्वसमयवर्ती गणनायक श्रीविजयरत्नसूरि तक की सूरिपट्टावली अवतरित की है। इसे मैंने वि० ध० ल० ज्ञा० आगरा से लब्ध प्रति से संगृहीत किया है। इसकी अनुपूर्ति में प्रदत्त परंपरा शायद् गून्थकर्ता की गुरुपरंपरा हो, ऐसा प्रतीत होता है। रचनाकाल वि० सं १७३९ के करीब है।

(१२) श्री गुरुपट्टावली (संस्कृत)—आगरा के श्रीचिंतामणि जी के भण्डार से आठपत्र की श्रीविजयप्रभसूरि तक की पट्टावली की एक प्रति उपलब्ध हुई है। जिस पर कर्ता का नाम अदृश्य है। कतिपय विशेषता होने से मैंने उसे संगृहीत की है। लेखक ने बाद में जिन नामों की वृद्धि की है, उनका भी अनुपूर्ति में शंयोजन कर दिया है। तथा उनके फुटनोट भी "टिप्पनकं" स्वरूप अक्षरशः दे दिये हैं। पिछले भागमें उल्लिखित वर्तमानकाल तक की भट्टारक परंपरा भी अनुपूर्ति में संयोजित करदी है।

(१३) उकेश गच्छीया पट्टावली (संस्कृत)—इसमें भगवान् पार्श्वनाथ से बीसवीं शताब्दी के कवलागच्छ के भट्टारक पर्यंत का इतिहास दिया है। गून्थकर्ता के नाम का पता नहीं है। यह पट्टावली मैंने जैनसाहित्य संशोधक त्रैमासिक से शुद्धाशुद्ध जैसी थी उद्धृत की है।

इस प्रकार इस प्रथमभाग में १३ पट्टावलियां, १० अनुपूर्तियां तथा ७ आवश्यक परिशिष्ठ दिये गये हैं। और यथोचित स्थानों पर विशेष फुटनोट व पाठान्तर देने के साथ साथ विद्वानों की सरलता की दृष्टि से इस गून्थ में आये हुए विशेष शब्दों के सात प्रकार के भिन्न भिन्न अकारादि अनुक्रम दिये गये हैं इस प्रकार इस गून्थ को यथाशक्य पूर्ण करने की कोशिश की गई है।

इस उपक्रम को समाप्त करने से पूर्व—मैं उन उदार एवं सहृदय विद्वद्वरों का नामोल्लेख करना उचित समझता हूँ, जिनकी प्रेमपूर्ण—हार्दिक प्रेरणाने इस गून्थ को शीघ्र तैयार करने में सहायता की है। वे हैं—(१) पटना निवासी श्रीयुत

के॰ पी॰ जयस्वाल (२) महान् वैज्ञानिक सर जगदीशचंद्र बौस, जिनका प्रत्यक्ष परिचय मुझे राजगृही में हुआ था और जिनकी जैनतत्वज्ञान एवं जैन इतिहास विषयक जिज्ञासा ने मुझे आकर्षित किया था। (३) कृष्णनगर के डिस्ट्रिक्ट इंजीनियर व बंगला के प्रखर लेखक तथा कवि श्रीयुत भूपदेवेन्द्र सोवाकर चटर्जी और (४) मथुरा म्युज़्युम के क्यूरेटर श्रीमान् बाबू वासुदेवशरण M., A.।

इस ग्रन्थ के प्रत्येक कार्य में पू० हेतमुनि जी महाराज, मुनिवर्य श्री ज्ञानविजय जी तथा मुनि श्री न्यायविजय जी का उत्साहपूर्ण एवं हार्दिक सहभाव रहा है। तथा रतिलाल जी देसाई न्यायतीर्थ तर्कभूषण, भिखालाल जी देसाई न्यातीर्थ तर्कभूषण तथा पं॰ रामकुमार जी न्यायतीर्थ विद्याभूषण हिन्दी प्रभाकर ने अकारादि क्रम के तैयार करने में उल्लेखनीय समय का भोग दिया है। अतएव उनका तथा अन्य ग्रन्थ–प्राप्ति में सहायक महानुभावों का हृदय से ऋणी हूँ। साथ ही में इस ग्रन्थ के मुद्रक पं० भूपसिंह जी शर्मा मैनेजर सरस्वती प्रेस को भी धन्यवाद देना जरूरी समझता हूँ।

"पट्टावली समुच्चय" के सब हिस्से प्रकट होने के पश्चात् ऐतिहासिक विचार पूर्ण एक विस्तृत प्रस्तावना लिखने का विचार होने से इस ग्रन्थ में तत्सम्बन्धी ऊहापोह नहीं किया है।

जैन इतिहास के विस्तृत क्षेत्र के अभ्यासियों को किसी भी अंश में यह ग्रन्थ मार्गदर्शक एवं सहायक होगा तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूंगा।

अन्त में इस ग्रन्थ के दूसरे भाग को भी मैं शीघ्रातिशीघ्र पुरातत्व के अभिलाषियों के कर कमल में रख सकूँ ऐसी परमात्मा महावीर से प्रार्थना करते हुए, मैं अपने कथन को पूर्ण करता हूं।

रोशन मोहल्ला आगरा, वी. नि. सं. २४५६
वसंत पंचमी

—मुनि दर्शनविजय।

विशेष नोट—उपक्रम प्रथम संस्कृत में ही लिखने का विचार था किन्तु वर्तमान राष्ट्रीय प्रवृत्ति व हिन्दी भाषा का, राष्ट्रभाषा बनने की दृष्टि से, बढ़ता हुआ प्रचार देख कर हिन्दी में ही लिखना उचित समझा गया है।

अनुक्रमणिका ॥

परिशिष्टानि ॥

समर्पितः

श्री

पट्टावली-समुच्चयः

प्रथमो भागः

पुरातत्त्वविदां
पाणिपद्मेषु
—दर्शनविजयः

श्रीमान् सेठ ऋखबचन्द जी के सुपुत्र सेठ जेठमल जी
कोठारी पोकरण वाले की तरफ से
श्री ज्ञानपंचमी के उद्यापन
निमित्त भेट



श्रीमान् सेठ जेठमल जी कोठारी

जन्म वि० सं० १६३६ आषाढ़ शुक्ला ११ पोकरण (मारवाड़)

णमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स ॥

(१)

चउद्दस-पुव्वधारग-अन्तिमसुअकेवली-जुगप्पहाण

सिरि-भद्दबाहु सामि विरइअस्स, सिरिकप्पसुत्तस्स ॥

थेरावली

(श्री कल्पसूत्र स्थविरावली)

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स नवगणा, इक्कारस गणहरा हुत्था ॥ १ ॥

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा, इक्कारस गणहरा हुत्था ? ॥ २ ॥

समणस्स भगवओ महावीरस्स जिट्ठे इंदभूई अणगारे गोयम (गोयमस) गुत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, मज्झिमए अग्गिभूई अणगारे गोयमगुत्तेणं पचसमणसयाइं वाएइ, कणीअसे अणगारे वाउभूई गोयमगुत्तेणं (नामेणं) पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे अज्जवियत्ते भारद्दाए गुत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे अज्जसुहम्मे अग्गिवेसायणे गुत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ थेरे मंडितपुत्ते वासिट्ठे गुत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ, थेरे मोरिअपुत्ते कासवे गुत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ, थेरे अकंपिए गोयमे (गोयमस) गुत्तेणं—थेरे अयलभाया हारिआयणे गुत्तेणं—पत्तेयं एते दुण्णिवि थेरा तिण्णि तिण्णि समणसयाइं वाएंति, थेरे अज्जमेइज्जे थेरेपभासे—एए दुण्णिवि थेरा कोडिन्ना गुत्तेणं तिण्णि तिण्णि समणसयाइं वाएंति। से तेणट्ठेणं अज्जो ! एवं वुच्चइ-समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा, इक्कारस गणहरा हुत्था ॥ ३ ॥

सव्वेवि णं एते समणस्स भगवओ महावीरस्स एक्कारसवि गणहरा दुवालसंगिणो चउद्दसपुव्विणो समत्तगणिपिडगधारगा रायगिहे नगरे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं कालगया जाव सव्वदुक्खप्पहीणा, थेरे इंदभूई, थेरे अज्जसुहम्मेय सिद्धिगए महावीरे पच्छा दुण्णिवि थेरा परिनिव्वुया ॥ जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति, एए णं सव्वे अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स आवच्चिज्जा, अवसेसा गणहरा निरवच्चा वुच्छिन्ना ॥ ४ ॥

१—समणे भगवं महावीरे कासवगुत्ते णं। समणस्स णं भगवओ महावीरस्स कासवगुत्तस्स अज्जसुहम्मे थेरे अंतेवासी अग्गिवेसायणगुत्ते ॥

२—थेरस्स णं अज्जसुहम्मस्स अग्गिवेसायणगुत्तस्स अज्जजंबुनामे थेरे अंतेवासी कासवगुत्तेणं ॥

३—थेरस्स णं अज्जजंबुणामस्स कासवगुत्तस्स अज्जप्पभवे थेरे अंतेवासी कच्चायणसगुत्ते ॥

४—थेररस्स णं अज्जप्पभवस्स कच्चायणसगुत्तस्स अज्जसिज्जंभवे थेरे अंतेवासी मणगपिया वच्छसगुत्ते ॥

५—थेरस्स णं अज्जसिज्जंभवस्स मणगपिउणो वच्छसगुत्तस्स अज्ज-जसभद्दे थेरे अंतेवासी तुंगियायणसगुत्ते × ॥

संखित्तवायणाए अज्जजसभद्दाओ अग्गओ एवं थेरावली भणिया।

६—तंजहा-थेरस्स णं अज्जजसभद्दस्स तुंगियायणसगुत्तस्स अंते-वासी दुवे थेरा—थेरे अज्जसंभूअविजए माढरसगुत्ते, थेरे अज्जभद्दबाहू पाईणसगुत्ते।

७—थेरस्स णं अज्जसंभूअविजयस्स माढरसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जथूलभद्दे गोयमसगुत्ते।

८—थेरस्स णं अज्जथूलभद्दस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा-थेरे अज्जमहागिरी एलावच्चसगुत्ते, थेरे अज्जसुहत्थी वासिट्ठसगुत्ते।

× अत्र चतुर्दशपूर्वधारीणः दशाश्रुतस्कंध—कल्पसूत्र रचयितुः भगवतः श्रीभद्रबाहु स्वामिनः पट्टावली समाप्ता।

९—थेरस्स णं अज्जसुहत्थिस्स वासिट्ठसगुत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा सुट्ठियसुप्पडिबुद्धा कोडियकाकंदगा वग्घावच्चसगुत्ता।

१०—थेराणं सुट्ठियसुप्पडिबुद्धाणं कोडियकाकंदगाणं वग्घावच्चसगुत्ताणं अंतेवासी थेरे अज्जइंददिन्ने कोसियगुत्ते।

११—थेरस्स णं अज्जइंददिन्नस्स कोसियगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जदिन्ने गोयमसगुत्ते।

१२—थेरस्सणं अज्जदिन्नस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जसीहगिरी जाइस्सरे कोसियगुत्ते।

१३—थेरस्सणं अज्जसीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कोसियगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरे गोयमसगुत्ते।

१४—थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरसेणे उक्कोसियगुत्ते।

१५—थेरस्स णं अज्जवइरसेणस्स उक्कोसिअगुत्तस्स अंतेवासी चत्तारि थेरा—थेरे अज्जनाइले १ थेरे अज्जपोमिले २ थेरे अज्जजयन्ते ३ थेरे अज्जतावसे ४॥ थेराओ अज्जनाइलाओ अज्जनाइला साहा निग्गया, थेराओ अज्जपोमिलाओ अज्जपोमिला साहा निग्गया, थेराओ अज्जजयन्ताओ अज्जजयन्ती साहा निग्गया, थेराओ अज्जतावसाओ अज्जतावसी साहा निग्गया ४ इति॥ ६॥

वित्थरवायणाए पुण अज्जजसभद्दाओ पुरओ थेरावली एवं पलोइज्जइ (विलोज्जइ)। तंजहा—

६—थेरस्स णं अज्जजसभद्दस्स तुंगियायणसगुत्तस्स इमे दो थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था॥ तंजहा—थेरे अज्जभद्दबाहू पाईणसगुत्ते, थेरे अज्जसंभूअविजए माढरसगुत्ते,

७—थेरस्स णं अज्जभद्दबाहुस्स पाईणसगुत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा—थेरे गोदासे १, थेरे अग्गिदत्ते २, थेरे जण्णदत्ते ३, थेरे सोमदत्ते ४ कासवगुत्ते णं॥ थेरेहिन्तो गोदासेहिंतो कासव गुत्तेहिंतो इत्थं णं गोदासगणे नामं गणे निग्गए, तस्स णं

इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति; तंजहा—तामलित्तिया १, कोडीवरिसिया २ पंडुवद्धणिया (पोंडवद्धणिआ) ३, दासी खब्बडिया ४।

७ थेरस्स णं अज्जसंभूयविजयस्स माढरसगुत्तस्स इमे दुवालस थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था तंजहा—

नंदणभद्दु १ वनंदण—भद्दे २ तह तीसभद्द ३ जसभद्दे ४
थेरे य सुमणभद्दे (सुमिणभद्दे) ५, मणिभद्दे (गणिभद्दे) ६ पुण्णभद्दे ७ य ॥१॥
थेरे अ थूलभद्दे ८ उज्जुमई ६ जंबुनामधिज्जे १० य ॥
थेरे अ दीहभद्दे ११, थेरे तह पंडुभद्दे १२ य ॥२॥

थेरअस्स णं अज्जसंभूअविजयस्स माढरसगुत्तस्स इमाओ सत्त अंतेवासिणीओ अहावच्चाओ अभिण्णायाओ हुत्था,

तंजहा जक्खा १ य जक्खदिण्णा २, भूया ३ तह चेव भूयदिण्णा य ४॥
सेणा ५ वेणा ६ रेणा ७ भगिणीओ थूलभद्दस्स ॥ १ ॥

८-थेरस्स णं अज्जथूलभद्दस्स गोयमसगुत्तस्स इमे दो थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तञ्जहा—थेरे अज्जमहागिरी एलावच्चसगुत्ते १ थेरे अज्जसुहत्थी वासिट्ठसगुत्ते २

थेरस्स णं अज्जमहागिरिस्स एलावच्चसगुत्तस्स इमे अट्ठ थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तञ्जहा—थेरे उत्तरे १ थेरे बलिस्सहे २, थेरे धणड्ढे ३ थेरे सिरिड्ढे ४ थेरे कोडिन्ने ५ थेरे नागे६,थेरे नागमित्ते ७,थेरे छलूए रोहगुत्ते कोसियगुत्ते णं ८॥ थेरेहिन्तो णं छलूएहिन्तो रोहगुत्तेहिन्तो कोसियगुत्तेहिन्तो तत्थ णं तेरासिया निग्गया। थेरेहिन्तो णं उत्तर बलिस्सहेहिन्तो तत्थ णं उत्तर बलिस्सहे नामं गणे निग्गये। तस्सणं इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति,

तंजहा—कोसम्बिया १, सोइत्तिया (सुत्तिवत्तिआ) २. कोडंबाणी ३, चन्दनागरी ४

१—थेरस्स णं अज्जसुहत्थिस्स वासिट्ठसगुत्तस्स इमे दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था,

तंजहा-थेरे अ अज्जरोहण १, जसभद्दे २, मेहगणी ३ य कामिड्ढी ४
सुट्ठिय ५, सुप्पडिबुद्धे ६, रक्खिय ७ तह रोहगुत्ते ८ अ ॥१॥

इसिगुत्ते ९ सिरिगुत्ते १०, गणी अ बम्भे ११ गणी य तह सोमे १२ ॥
दस दो अ गणहरा खलु, एए सीसा सुहत्थिस्स ॥२॥

थेरेहिन्तो णं अज्जरोहणेहिन्तो णं कासवगुत्तेहिन्तो णं तत्थ णं उद्देहगणे नामं गणे निग्गए, तस्सिमाओ चत्तारि साहाओ निग्गयाओ। छच्च कुलाइं एवमाहिज्जंति ॥

के किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तञ्जहा—उदुंबरिज्जिया १, मासपूरिआ २, मइपत्तिया ३, पुण्णपत्तिआ (पण्णपत्तिआ) ४ से तं साहाओ॥

से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति ॥ तंजहा—

पढमं च नागभूयं। बिइयं पुण सोमभूइयं होइ ॥
अह उल्लगच्छ तइअं ३, चउत्थयं हत्थलिज्जं तु ॥१॥
पंचमगं नन्दिज्जं ५, छट्ठं पुण पारिहासयं ६ होइ ॥
उद्देह गणस्सेए, छच्च कुला हुंति नायव्वा ॥ २ ॥

थेरेहिन्तो णं सिरिगुत्तेहिन्तो हारियसगुत्तेहिन्तो इत्थ णं चारणगणे नामं गणे निग्गए, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, सत्त य कुलाइं एवमाहिज्जंति.

से किं तं साहाओ ? साहाओ–एवमाहिज्जंति तंजहा—हारियमालागारी १, संकासीआ २, गवेधुया ३, वज्जनागरी ४। से तं सहाओ ॥

से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति तंजहा—

पढमित्थ वत्थलिज्जं १ बीयं पुण पीइधम्मिअं २ होइ ॥
तइअं पुण हालिज्जं ३ चउत्थयं पूसमित्तिज्जं ॥१॥
पंचमगं मालिज्जं ५, छट्ठं पुण अज्जवेडयं ६ होइ ॥
सत्तमयं कण्हसहं ७, सत्त कुला चारणगणस्स ॥२॥

थेरेहिन्तो भद्दजसेहिन्तो भारद्दायसगुत्तेहिन्तो इत्थ णं उडुवाडियगणे नामंगणे निग्गये, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ तिण्णि कुलाइं एवमाहिज्जंति ॥

से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा – चंपिज्जिया १ भद्दिज्जिया २ काकन्दिया ३ मेहलिज्जिया ४ से तं साहाओ ॥

से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति तंजहा--
भद्दजसियं १ तह भद्द-गुत्तियं २ तइयं च होइ जसभद्दं ३ ॥
एयाइँ उडुवाडिय-गणस्स तिएणेव य कुलाइं ॥ १ ॥

थेरेहिंतो णं कामिड्ढीहिंतो कोडालस गुत्तेहिंतो इत्थ णं वेसवाडियगणे नामं गणे निग्गये, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति।

से किं तं साहाओ ? सा० तंजहा-- सावत्थिया १, रज्जपालिया २, अन्तरिज्जिया ३, खेमिलज्जिया ४। से तं साहाओ

से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जन्ति, तंजहा--
गणियं १ मेहिय २ कामड्ढिअं ३ च तह होइ इन्दपुरगं ४ च ॥
एयाइं वेसवाडिय गणस्स चत्तारि य कुलाइं ॥ १ ॥

थेरेहिंतो णं इसिगुत्तेहिन्तो काकन्दएहिन्तो वासिट्ठसगुत्तेहिन्तो इत्थ णं माणवगणे नामं गणे निग्गये, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, तिण्णि य कुलाइं एवमाहिज्जंति ॥

से किं तं सहाओ ? सहाओ एवमाहिज्जंति, तञ्जहा—कासवज्जिया १, गोयमज्जिया २, वासिट्ठिया ३, सोरट्ठिया ४। से तं साहाओ ॥

से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जन्ति, तञ्जहा--

इसिगुत्ति इत्थ पढमं १, बीयं इसिदत्तिअं मुणेयव्वं २ ॥
तइयं च अभिजयन्तं ३, तिण्णि कुला माणवगणस्स ॥१॥

थेरेहिंतो सुट्ठिय-सुप्पडिबुद्धेहिंतो कोडिय-काकंदएहिंतो वग्घावच्चसगुत्तेहिंतो इत्थणं कोडियगणे नामं गणे णिग्गए, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति ॥ २ ॥

से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति

तंजहा—उच्चा नागरि १ विज्जाहरी य २ वइरी य ३ मज्झिमिल्ला ४। य
कोडियगणस्स एया, हवंति चत्तारि साहाओ ॥ १ ॥ से तं साहाओ ॥
किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति
तंजहा-पढमित्थ बंभलिज्जं १, बिइयं नामेण वत्थलिज्जं तु ॥ २ ॥
तइयं पुण वाणिज्जं ३, चउत्थयं पण्हवाहणयं ४ ॥ १ ॥

१०—थेराणं सुट्ठियसुप्पडिबद्धाणं कोडियकाकंदयाणं वग्घावच्चसगुत्ताणं इमे पंच थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था तंजहा-थेरे अज्जइंददिन्ने १, थेरे पियगंथे २, थेरे विज्जाहर गोवाले कासवगुत्ते णं ३, थेरे इसिदिन्ने (इसिदत्ते) ४, थेरे अरिहदत्ते थेरेहिंतो णं पियगंथे हिन्तो एत्थणं मज्झिमा साहा णिग्गया, थेरेहिंतो णं विज्जाहरगोवालेहिंतो कासवगुत्तेहिंतो एत्थणं कासवगुत्तेहिंतो एत्थ णं विज्जाहरी साहा निग्गया॥

११—थेरस्स णं अज्जइंददिन्नस्स कासवगुत्तस्स अज्जदिन्ने थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते।

१२—थेरस्स णं अज्जदिन्नस्स गोयमसगुत्तस्य इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा—थेरे अज्जसंतिसेणिये माढरसगुत्ते १, थेरे अज्जसीहगिरी जाइस्सरे कोसिय गुत्ते २ ॥ थेरेहिंतो णं अज्जसंतिसेणिएहिंतो माढरसगुत्तेहिंतो एत्थणं उच्चानागरी साहा निग्गया।

१३—थेरस्स णं अज्जसंतिसेणियस्य माढरसगुत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अन्तेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा—थेरे अज्जसेणिए, थेरे अज्जतावसे, थेरे अज्जकुबेरे, थेरे अज्जइसिपालिए। थेरेहिंतो णं अज्जसेणिएहिंतो एत्थ णं अज्जसेणिया साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जतावसेहिंतो एत्थ णं अज्ज तावसी साहा निग्गया, थेरे हिंतो णं अज्जकुबेरे हिंतो एत्थ णं-अज्जकुबेरा (अज्जकुबेरि) साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जइसिपालिएहिंतो एत्थ णं अज्जइसिपालिया साहा निग्गया।

१३—थेरस्स णं अज्जसीहगिरस्स जाइस्सरस्स कोसिय गुत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा-थेरे धणगिरी,

थेरे अज्जवइरे× थेरे अज्जसमिए, थेरे अरिहदिन्ने। थेरेहिंतो णं अज्जसमिएहिंतो गोयमसगुत्तेहिंतो इत्थ णं बंभदीविया साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जवइरेहिंतो गोयमसगुत्तेहिंतो इत्थ णं अज्जवइरी साहा निग्गया।

१४—थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमसगुत्तस्स इमे तिण्णि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था तंजहा–थेरे अज्जवइरसेणे, थेरे अज्जपउमे, थेरे अज्जरहे। थेरेहिंतो णं अज्जवइरसेणेहिंतो इत्थ णं अज्जनाइली साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जपउमेहिंतो इत्थ णं अज्जपउमा साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जरहेहिंतो इत्थ णं अज्जजयंतीसाहा निग्गया।

१५—थेरस्स णं अज्जरहस्स वच्छसगुत्तस्स अज्जपूसगिरी थेरे अंतेवासी कोसियगुत्ते।

१६—थेरस्स णं अज्जपूसगिरिस्स कोसियगुत्तस्स अज्ज फग्गुमित्ते थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते।

१७—थेरस्स णं अज्जफग्गुमित्तस्स गोयमसगुत्तस्स अज्जधणगिरी थेरे अंतेवासी वासिट्ठसगुत्ते।

१८—थेरस्स णं अज्जधणगिरिस्स वासिट्ठसगुतस्स अज्जसिव भुई थेरे अंतेवासी कुच्छसगुत्ते।

१९—थेरस्स णं अज्जसिवभूइस्स कुच्छसगुत्तस्य अज्जभद्दे थेरे अन्तेवासी कासवगुत्ते।

× अत्रहि श्रीवज्रस्वामिपर्यन्ते संक्षिप्तवाचनाविस्तरवाचनाचेति पट्टावल्यौ समाप्ते। श्रीआर्यवज्रसेनसूरिशासने चत्वारो अनुयोगाः संजाताः॥

यदुक्तं—जावंत अज्जवइरा, अपुहुत्तं कालिआणुओगस्स।

तेणारेण पुहुत्तं, कालिअसुइ दिट्ठिवाए अ॥ आ० नि० ७६३॥

देविंद वंदिएहिं, महाणुभावेहिं रक्खिअ अज्जेहिं।

जुगमासज्ज विहत्तो, अणुओगो ताकओ चउहा॥ आ० नि० ७७४॥

अत: श्रीआर्यवज्रसेन प्रभवा पट्टावली निदर्शिता, परं श्रीआर्यरथ संतानीय-श्रीदेवर्धिगणी क्षमाश्रमण पर्यंत गद्य–पद्यपट्टावलीयुग्मं दर्शितमस्ति॥ सं०॥

२०—थेरस्स णं अज्जभद्दस्स कासवगुत्तस्स अज्जनक्खत्ते थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते।

२१—थेरस्स णं अज्जनक्खत्तस्स कासवगुत्तस्स अज्जरक्खे थेरे अन्तेवासी कासवगुत्ते।

२२—थेरस्स णं अज्जरक्खस्स कासवगुत्तस्स अज्जनागे थेरे अंतेवासी गोअमसगुत्ते।

२३—थेरस्स णं अज्जनागस्स गोअमसगुत्तस्स अज्जजेहिले थेरे अंतेवासी वासिट्ठसगुत्ते।

२४—थेरस्स णं अज्जजेहिलस्स वासिट्ठसगुत्तस्स अज्जविण्हू थेरे अंतेवासी माढरसगुत्ते।

२५—थेरस्स णं अज्जविण्हुस्स माढरसगुत्तस्स अज्जकालए थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते।

२६—थेरस्स णं अज्जकालयस्स गोयमसगुत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी गोयमसगुत्ता-थेरे अज्जसंपलिए १ थेरे अज्जभद्दे २।

२७—एएसि णं दुण्हवि थेराणं गोयमसगुत्ताणं अज्जवुड्ढे थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते।

२८—थेरस्स णं अज्जवुड्ढस्स गोयमसगुत्तस्स अज्जसंघपालिए थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते।

२९—थेरस्स णं अज्जसंघपालिअस्स गोयमसगुत्तस्स अज्जहत्थी थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते।

३०—थेरस्स णं अज्जहत्थिस्स कासवगुत्तस्स अज्जधम्मे थेरे अन्तेवासी सावयगुत्ते (सुव्वयगुत्ते)।

३१—थेरस्स णं अज्जधम्मस्स सावयगुत्तस्स (सुव्वयगुत्तस्स) अज्जसिंहे थेरे अन्तेवासी कासवगत्ते।

३२—थेरस्स णं अज्जसिंहस्स कासवगुत्तस्स अज्जधम्मे थेरे अन्तेवासी कासवगुत्ते।

३३—थेरस्स णं अज्जधम्मस्स कासवगुत्तस्स अज्जुसंडिल्ले थेरे अन्तेवासी ॥

वन्दामि फग्गुमित्तं च, गोयमं धणगिरिं च वासिट्ठं ।
कुच्छं सिवभूइम्पिय, कोसिय दुज्जंत कण्हे अ ॥१॥

ते वन्दिऊण सिरसा, भद्दं वन्दामि कासवसगुत्तं (कासवंगोत्तं) ।
नक्खं कासवगुत्तं, रक्खम्पि य कासवं वन्दे ॥२॥

वन्दामि अज्जनागं च, गोयमं जेहिलं च वासिट्ठं ।
विण्हुं माढर गुत्तं, कालगमवि गोयमं वन्दे ॥३।

गोयमगुत्तकुमारं, सम्पलियं तहय भद्दयं वन्दे ।
थेरं च अज्जवुड्ढं, गोयमगुत्तं नमंसामि ॥४॥

तं वन्दिऊण सिरसा, थिरसत्तचरित्तनाणसम्पन्नं ।
थेरं च संघवालिय, गोयम (कासव) गुत्तं पणिवयामि ॥५॥

वन्दामि अज्जहत्थिं च, कासवं खन्तिसागरं धीरं ।
गिम्हाण पढममासे, कालगयं चेव सुद्धस्स ॥६॥

वन्दामि अज्जधम्मं च, सुव्वयं सीललद्धिसम्पन्नं ।
जस निक्खमणे देवो, छत्तं वरमुत्तमं वहइ ॥७॥

हत्थिं (हत्थं) कासवगुत्तं, धम्मं सिवसाहगं पणिवयामि ।
सीहं कासवगुत्तं धम्मंपिय कासवं वन्दे ॥८॥

तं वन्दिऊण सिरसा, थिरसत्तचरित्तनाणसम्पन्नं ।
थेरं च अज्जजम्बुं, गोयमगुत्तं नमंसामि ॥९॥

मिउमद्दवसंपन्नं, उवउत्तं नाणदंसणचरित्ते ।
थेरं च नन्दियंपिय, कासवगुत्तं पणिवयामि ॥१०॥

तत्तो य थिरचरित्तं, उत्तमसम्मत्तसत्त संजुत्तं ।
देसिगणि खमासमणं, माढरगुत्तं नमंसामि ॥११॥

तत्तो अणुओगरं, धीरं मइसागरं महासत्तं ।
थिरगुत्त खमासमणं, वच्छसगुत्तं पणिवयामि ॥१२॥
तत्तो य नाणदंसण--चरित्ततवसुट्ठियं गुणमहन्तं ।
थेरं कुमारधम्मं, वन्दामि गणिं गुणोवेयं ॥१३॥
सुत्तत्थरयणभरिए, खमदममद्दवगुणेहिं सम्पन्ने ।
देविड्ढिखमासमणे, कासवगुत्ते पणिवयामि ॥१४॥

सिरि थेरावली समत्ता

(श्री स्थविरावली समाप्ताः)

सिरि नंदीसुत्त-पट्टावली

[कर्ता—श्रीमद् देववाचकगणी]



उसभं अजियं संभवमभिनंदण सुमइ सुप्पभ सुपासं ।
ससि पुप्फदंतं सीग्रल सिज्जंसं वासुपुज्जं च ॥१८॥

विमलमणंत य धम्मं, सन्ति कुथुं अरं च मल्लि च ।
मुनिसुव्वय नमि नेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥१६॥

पढमित्थ इंदभूई, बीए पुण होइ अग्गिभूइत्ति ।
तईए य वाउभूई, तम्रो वियत्ते सुहम्मे य ॥२०॥

मंडिग्र मोरियपुत्ते, अकंपिए चेव अलयभाया य ।
मेअज्जे य पहासे य, गणहरा हुन्ति वीरस्स ॥२१॥

निव्वुइपहसासणयं, जयइ (उ) सया सव्वभावदेसणयं ।+
कुसमयमयनासणयं, जिणिंदवरवीरसासणयं ॥२२॥

सुहम्मं अग्गिवेसाणं, जंबूनामं च कासवं ।
पभवं कच्चायणं वन्दे, वच्छं सिज्जंभवं तहा ॥२३॥

जसभद्दं तुंगियं वंदे, संभूयं चेव माढरं ।
भद्दबाहुं च पाइन्नं, थूलभद्दं च गोयमं ॥२४॥

एलावच्चसगोत्तं, वंदामि महागिरिं सुहत्थिं च ।
तत्तो कोसिअगोत्तं, बहुलस्स सरिव्वयं वंदे ॥२५॥

हारियगुत्तं साइं च, वंदिमो हारियं च सामज्जं ।
वन्दे कोसियगोत्तं, संडिल्लं अज्जजीयधरं ॥२६॥

तिसमुद्दखायकित्तिं दीवसमुद्देसु गहियपेयालं ।
वन्दे अज्जसमुद्दं, अक्खुभियसमुद्दगंभीरं ॥२७॥
भणगं करगं झरगं, पभावगं णाणदंसणगुणाणं ।
वंदामि अज्जमंगुं, सुयसागरपारगं धीरं ॥२८॥
वंदामि अज्जधम्मं, वंदे तत्तो अ भद्दगुत्तं च ।
तत्तो अ अज्जवयरं, तवनियमगुणेहिं वयरसमं ॥ ❀
वंदामि अज्जरक्खिअ—खमणे रक्खिअचरित्त सव्वस्से ।
रयणकरंडगभूओ, अणुओगो रक्खिओ जेहिं ॥ ❀
नाणंमि दंसणंमि अ तवविणए णिच्चकालमुज्जुत्तं ।
अज्जं नन्दिलखमणं, सिरसा वंदे पसन्नमणं ॥२९॥
वड्ढउ वायगवंसो जसवंसो अज्जनागहत्थीणं ।
वागरणकरणभंगिय—कम्मपयडीपहाणाणं ॥३०॥
जच्चंजणधाउसमप्पहाण मुद्दियकुवलयनिहाणं ।
वड्ढउ वायगवंसो, रेवइनक्खत्तनामाणं ॥३१॥
अयलपुरा णिक्खंते, कालियसुयआणुओगिए धीरे ।
बंभद्दीवगसीहे, वायगपयमुत्तमं पत्ते ॥३२॥
जेसि इमो अणुओगो, पयरइ अज्जावि अड्ढभरहम्मि ।
बहुनयरनिग्गयजसे, ते वन्दे खंदिलायरिए ॥३३॥
तत्तो हिमवन्तमहन्त—विक्कमे धिइपरक्कममणंते ।
सज्झायमणंतधरे, हिमवंते वंदिमो सिरसा ॥३४॥
कालियसुयअणुओगस्स, धारए धारए य पुव्वाणं ।
हिमवंतखमासमणे, वंदे णागज्जुणायरिए ॥३५॥
मिउमद्दवसंपन्ने आणुपुव्वि वायगत्तणं पत्ते ।
ओहसुयसमायारे, नागज्जुणवायए (गं) वन्दे ॥३६॥
गोविंदाणं पि नमो, अणुओगे विउलधारणिंदाणं ।
निच्चं खंतिदयाणं, पढ्ढविणे दुल्लभिंदाणं ॥ ❀

तत्तो अ भूयदिन्नं, निच्चं तवसंजमेअ निविन्नं ।
पंडिअजणसामण्णं, वंदामि अ संजमविहन्नुं ।। ❀
वरकणगतवियचंपग—विमउलयर कमल गब्भ सरिवन्ने ।
भविअजण हियदइए, दयागुणविसारिए धीरे ॥३७॥
अड्ढभरहप्पहाणे बहुविहसज्झाय सुमुणियपहाणे ।
अणुओगियवरवसभे, नाइलकुलवंसनंदिकरे ॥३८॥
भूयहिअप्पगब्भे वंदेऽहं भूयदिन्नमायरिए ।
भवभयवुच्छेयकरे, सीसे नागज्जुणरिसीण ॥३९॥
सुमुणियनिच्चानिच्चं सुमुणियसुत्तत्थधारयं वंदे ।
सब्भावुब्भावणयातत्थं लोहिच्चणामाणं ॥४०॥
(सुमुणिय निच्चानिच्चं, सुणियसुत्तत्थधारयं निच्चं ।
वंदेहं लोहिच्चं, सब्भावुब्भावणा तत्थं) ।। +
अत्थमहत्थक्खाणिं सुसमणवक्खाणकहणनिव्वाणिं ।
पयईइ महुरवाणिं पयओ पणमामि दूसगणिं ।।४१॥
तवनियमसच्चसंजम—विणयज्जवखंतिमद्दवरयाणं ।
सीलगुण गद्दियाणं, अणुओगजुगप्पहाणाणं ।। ❀
सुकुमालकोमलतले तेसिं पणमामि लक्खणपसत्थे ।
पाए पावयणीणं पडिच्छ (ग) सयएहिं पणिवइए ॥४२॥
जे अन्ने भगवंते कालिअसुयआणुओगिए धीरे ।
ते पणमिऊण सिरसा नाणस्स परूवणं वोच्छं ॥४३॥

इति पट्टावली समत्ता
(इति श्रीनंदीसूत्र पट्टावली समाप्ता)

❀ कस्मिंश्चित् ग्रंथे एता गाथा अपि दृश्यंते ।

+ (   ) एतच्चिन्हांकितानि पाठान्तराणि।

सिरि दुसमाकाल समणसंघ थयं

(दुःषमाकाल श्रीश्रमणसंघस्तोत्रम्)

[कर्ता—श्री धर्मघोष सूरिः]

वीरजिण भुवण विस्सुत्र पवयण गयणिक्कदिणमणि समाणो ॥
वट्टन्त सुत्रनिहाणे, थुणामि सूरी जुगप्पहाणे ॥१॥
वीस तिवीस दुनवइ, अडसयरी पञ्चसयरी गुणनवई ॥
सउ सगसी पणनउइ सगसी छयस्सरी अडसयरी ॥२॥
चउनवइ अठ तित्र, सग चउ पन्नुरुत्तरसयं ॥
तित्तिससयं सउ पणनउई, नवनवई चत्त तेवीसुदय सूरी ॥३॥
अह उदयाणं पढमे, जुगपवरे पणिवयामि तेवीसं ॥
सिरिसुहम्म वयर पडिवय हरिस्सयं नंदिमित्तं च ॥४॥
सिरिसूरसेण रविमित्त सिरिपहं मणिरहं च जसमित्तं ॥
धणसिंहं सचमितं, धम्मिल्लं सिरिविजयाणंदं ॥५॥
वंदामि सुमंगल धम्मसिह जयदेव सूरि सूरदिन्नं ॥
वइसाहं कोडिलं, माहुर वणिपुत्त सिरिदत्तं ॥६॥
उदयांतिम सूरी, पुसमित्त मरहमित्त वइसाहं ॥
वंदे सुकीत्ति थावर रहसुत्र जयमंगलमुणिंदं ॥७॥
सिद्धत्थं ईसाणं, रहमित्तं भरणिमित्त दढमित्तं ॥
सिरि संगयमित्तं सिरिधरं च मागह ममरसूरिं ॥८॥
सिरिरेवइमित्तं कित्तिमित्त सुरमित्तं फग्गुमित्तं च ॥
कल्लाण देवमित्तं, णमामि दुप्पसह मुणिवसहं ॥९॥
वंदे सुहम्म जंबू पभवं सिज्जंभवं च जसभद्दं ॥
संभूयविजय सिरिभद्द—बाहु सिरिथूलभद्दं च ॥१०॥

महगिरि सुहत्थि गुणसुंदरं च सामज्ज खंदिलायरिजं ॥
रेवइ मित्तं धम्मं च' भद्दगुत्तं सिरिगुत्तं ॥११॥
सिरिवयर मज्जरक्खिअ सूरिं पणमामि पूसमित्तं च ॥
इअ सत्तकोडिनामे पढम मुदए वीस जुगपवरे ॥१२॥
बीए तिवीस वइरं च, नागहत्थिं च रेवइमित्तं ॥
सीहं नागज्जुणं, भूइदिन्नियं कालयं वंदे ॥१३॥
सिरिसच्चमित्त हारिलं, जिणभद्दं वंदिमो उमासाइं ॥
पुसमित्तं संभूइं. माढर संभूइ धम्मरिसिं ॥१४॥
जिट्ठंग फग्गुमित्तं, धम्मघोसं च विणयमित्तं च ॥
सिरि सीलमित्त रेवइ–मित्तं सूरि सुमिणमित्त हरिमित्तं ॥१५॥
इय सव्वोदयजुगपवर सूरिणो चरणसंजूए वंदे ॥
चउत्तर दुसहस्सा, दुप्पसहंते सुहम्माई ॥१६॥
इय सुहम्म जंबू तब्भव सिद्धा एगावयारिणो सेसा ॥
सड्ढदुजोअण मज्झे जयंतु दुभिक्खडमरहरा ॥१७॥
जुगपवर सरिस सूरी, दुरीकय भवियमोह तमपसरे ॥
वंदामि सोलसुत्तर इगदस लक्खे सहस्सेय ॥१८॥
पंचमअरम्मि पणवन्नलक्ख पणवन्नसहस कोडीणं ॥
पंचसयकोडि पन्ना, नमामि सुचरण सयलसूरी ॥१९॥
तह सत्तरिकोडिलक्खा, नवकोडिसय बार कोडियं ॥
छप्पन्न लक्ख बत्तीस—सहस्स एगूण दुन्निसया ॥२०॥
तह सोल कोडिलक्खा, तियकोडिसहस्सा तिन्निकोडिसया ॥
सत्तरस कोडि चुलसी लक्खा सुसावगाणं तु ॥२१॥
पणतीसकोडिलक्खा, सुसाविया कोडिसहस्स बाणउई ॥
पणकोडिसया बत्तीस कोडि तह बारब्भहिया ॥२२॥
एवं देविंदनयं, सिरविजयाणंद धम्मकीत्तिपयं ॥
वीरजिण पवयण ठिइं, दूसमसंघं णमह निच्चं ॥२३॥
॥ इय दुसमाकाल सिरि समणसंघ थयं ॥

अवचूरिः—॥ ८० ॥ सिरि जिणनिव्वाणगमण रयणिए उज्जोणीए चंडपज्जोअमरणे पालओ राया अहिसित्तो ॥ तेण य अपुत्त उदाइमरणे कोणिअरज्जं पाडलिपुरं पि अहिट्ठिअं ॥

तस्स य वरिस ६० रज्जे—गोयम १२ सुहम्म ८ जंबू ४४ जुगप्पहाणा ।

पुणो पाडलीपुरे ११, १०, १३, २५, २५, ६, ६, ४, ५५ नवनंद एवं वर्ष १५५ रज्जे—जंबू शेषवर्षाणि ४ प्रभव ११ शय्यंभव २३ यशोभद्र ५० संभूतिविजय ८ भद्रबाहु १४ स्थूलभद्र ४५, एवं वीरनिर्वाणात् २१५ ॥

मोरिअरज्जं १०८ तत्र—महागिरि ३० सुहस्ति ४६ गुण सुन्दर ३२, उनवर्षाणि १२ ॥ प्रकृष्टलब्धीनां प्रकीर्णकसहस्राणां व्यवच्छेदः ॥ एवं वर्षाणि ३२३ ॥

राजा पुष्यमित्र ३० बल मित्र-भानु मित्र ६० (तत्र)—गुण सुन्दरस्येव शेषवर्षाणि १२ कालिके ४ (४१) खंदिल ३८ ॥ एवं वर्षाणि ४१३ ॥

राजानरवाहन ४० गर्दभिल्ल १३ शाक ४ (तत्र)—रेवतिमित्र ३६ आर्यमंगुधर्माचार्य २० ॥ एवं वर्षाणि ४७० ॥

अत्रांतरे—बहुल सिरिव्वय स्वामि (स्वाति) हारिन श्यामाऽऽर्य शांडिल्य आर्य आर्यसमुद्रादयो भविष्यन्ति ॥

तह गद्दभिल्लरज्जस्स, छेयगो कालगारिओ होही ॥
छत्तीसगुणोवेओ, गुणसय कलिओ पहाजुत्तो ॥ १ ॥

वीरनिर्वाणात् ४५३ भरुअच्छे खपुटाचार्याः वृद्धवादी पंचकल्पविच्छेदो जीतकल्पोद्धारः प्रत्येकबुद्धस्वयंबुद्धविच्छेदो बुद्धबोधिताऽल्पता ॥

धर्माचार्यस्येव शेषवर्षाणि २४ भद्रगुप्त ३६ श्रीगुप्त १५ वज्रस्वामी ३६ । एवं सर्वांक ५८४ ॥ गर्द (भिल्ल) निव सुत विक्रमादित्य ६० धर्मादित्य ४० भाइल्ल ११ ॥ एवं ५८१ ॥

अत्रांतरे—धर्माचार्य शिष्य श्रीसिद्धसेन प्रभावकः । तथा तोषलिपुत्राचार्य प्रभावकः ॥

आर्यरक्षितः १३ ॥ राजाभाइल्ल १४ ॥ अत्रांतरे—विलासपुरे रुद्रदत्ताचार्यः प्रभावको युगप्रधानसमः ६ ॥

पुष्पमित्र (दुर्बलिका पुष्प मित्र) २० ॥ तथा राजा नाहडः ॥१०॥ (एवं) ६०५ शाकसंवत्सरः ॥ अत्रांतरे बोटिका निर्गता। इति ६१७ प्रथमोदयः ॥०॥

वयरसेण ३ नागहस्ति ६६ रेवतिमित्र ५६ बंभदीवगसिंह ७८ नागार्जुन ७८॥

पणसयरी सयाइं तिन्निसय समन्निआइं अइकमिऊं ॥
विक्कमकालाओ तओ बहुली (वलभी) भंगो समुप्पन्नो ॥ १ ॥
बालन्न (वालभ्य) संघकज्जे उज्जमिओ जुगपहाण तुल्लेहिं ॥
गंधव्ववाइवेआल—संतिसूरिइ बहुलाए (वलहीए) ॥ १ ॥
एवं वर्षाणि ६०४ ॥ भूतदिन्न ७६ कालिकार्य्य ११ ॥
तेणउय नवसएहिं, समइकंतेहिं वद्धमाणाओ ॥
पज्जोसवणाचउत्थी, कालगसूरिहिं तो ठविआ ॥ १ ॥
सत्यमित्र ७ हारिल ५४ ॥ (एवं वर्षाणि १०५५ वि० ५८५)
पंचसए पणसीए विक्कमकाला उझ (झ) त्ति अत्थमिओ ॥
हरिभद्दसूरि सूरो, भविआणं दिसउ कल्लाणं ॥ १ ॥

जिनभद्रगणिः ६० उमास्वाति ७५ ❀पुष्यतिष्य ६० संभूति यति ५० माढरसंभूति गुप्त ६० ॥ (एवंवर्षाणि १३६०)

❀ संभवन्ति चैत सभाष्यतत्वार्थाधिगमसूत्र पूजाप्रकरादि ग्रंथ निर्मातारः श्रीउमास्वातिसूरयः। तेषां पितृ-मातृ-जन्मभूमि-गणधर-वाचक वंशानां सबंधश्चैवं ॥

वाचकमुख्यस्य शिवश्रियः प्रकाशयशः प्रशिष्येण ॥
शिष्येण घोषनंदिक्षमणस्यैकादशांगविदः ॥ १ ॥
वाचनया च महावाचक क्षमण मुँडपाद शिष्यस्य ॥
शिष्येण, च वाचकाचार्य मूलनाम्नः प्रथितकीर्तेः ॥ २ ॥
न्यग्रोधिकाप्रसूतेन विहरता पुरवरे कुसुमनाम्नि ॥
कौभीषणिना स्वातितनयेन वात्सीसुतेनार्घ्यम् ॥ ३ ॥

९८० श्री कल्पसूत्रं श्री महागिर संतानीय श्री देवर्धिगणि क्षमाश्रमणैर्लिखितं । तस्मिन्वर्षे आनंदपुरे ध्रुवसेननृपस्य पुत्रमरणे शोकार्तस्य समाध्यर्थं सभासमक्षं श्री कल्पवाचना जाता इति बहुश्रुताः ॥ ×

तेरस वास सएहिं, वीराओ समंतिएहिं अइक्कमिउं ॥
सिरिबप्पभट्टसूरी, विउसाण सिरोमणी जाओ ॥ १ ॥

इत्यादि । द्वितीयोदयः ॥ छ ॥ श्री ॥

इति दुष्षमाकाल श्री श्रमण संघस्तोत्रं समाप्तं ॥१॥

इदमुच्चैर्नागरवाचकेन सत्वानुकंपया दृब्धं ॥
तत्वार्थाधिगमाख्यं स्पष्टमुमास्वातिना शास्त्रम् ॥ ५ ॥

× "नववाससयाइं विइक्कंताइं०" चायमर्थो, यथा श्रीवीरनिर्वाणादशीत्यधिकनववर्षशतातिक्रमे पुस्तकारूढः सिद्धांतो जातस्तदा कल्पोपि पुस्तकारूढो जात इति, तथोक्तं—वल्लहिपुरंमि नयरे, देवड्ढिपमुहसयलसंघेहिं ॥
पुत्थे आगम लिहिओ, नवसय असीआओ वीराओ ॥ १ ॥

अन्येवदंति---नवशतअशीतिवर्षे, वीरात् सेनांगजार्थमानन्दे ॥
संघसमक्षं समहं, प्रारब्धं वाचितुं विज्ञैः ॥ १ ॥

इत्यादि अन्तर्वाच्यवचनात् ॥

"वायणंतरेपुण०" तथाचायमर्थः---नवशताशीतितमवर्षे कल्पस्य पुस्तके लिखनं, नवशत त्रिनवतितमवर्षे च कल्पस्य पर्षद्वाचनेति । तथोक्तं श्रीमुनिसुंदरसूरिभिः स्वकृतस्तोत्ररत्नकोशे—

वीरात्त्रिनंदांक (९९३) शरद्यचीकरत्, त्वच्चैत्यपूते ध्रुवसेनभूपतिः ।
यस्मिन् महैः संसदि कल्पवाचना—माद्यां तदानंदपुरं न कः स्तुते ? ॥ १ ॥

—इति महोपाध्याय श्रीविनयविजयविरचितायां सुखबोधिकायां ।

१ एतद्ग्रंथकर्तॄणां श्रीधर्मघोषसूरीणां वि० सं० १३२७ तमवर्षेसूरिपदं, वि० सं० १३५७ तमवर्षे स्वर्गमनं ।

त्रयोविंशत्युदययुग प्रधान काल यंत्रः

उदय २३	सर्वाचार्य संख्या		युगप्रधानाः	उदयवर्षप्रमाणसंख्या	मास	दिन
१	सूरिकोटिं	७०	२०	६१७	१०	१७-२७
२	सूरिकोटि	३०	२३	१३६०-८०-४६	१०	२६
३	कोटिलक्ष	१०	६८	१४६४-१५००	११	२०
४	कोटिलक्ष	१०	७८	१५४५	८	२६
५	कोटिलक्ष	१०	७५	१६००	३	२६
६	कोटिलक्ष	१०	८६	१६५०	६	२२
७	कोटिलक्ष	१०	१००	१७७०	७	२७
८	कोटिलक्ष	५-१०	८७	१०१०	१०	१५
९	कोटिसहस्र	१०	६५	८८०	१	१८
१०	कोटिसहस्र	१०	८७	८५०	२	१२
११	कोटिसहस्र	१०	७६	८००	३	१४
१२	कोटिसहस्र	१०	७८	४४५	४	१६
१३	कोटिसहस्र	१०-५	६४	५५०	७	२२
१४	कोटिसहस्र	५	१०८	५६२	५	२५
१५	कोटिशत	१०	१०३	६६५	६	२६
१६	कोटिशत	१०	१०७	७१०	६	२०
१७	कोटिशत	१०	१०४	६५५	६	२४
१८	कोटिशत	१०	११५	४६०	६	२
१९	कोटिशत	१०	१३३	३५६	१	१७
२०	कोटिशत	१	१००	४०८-८६	४	७-२
२१	कोटिशत	१	६५	५७०	३	६
२२	कोटिशत	१	६६	५६०	५	५
२३	कोटिशत	१	४०	४४०	११	१७

सर्व २००४

सर्वेषामुदयानां यंत्रलिखितेषु वर्षमासदिनेषु सप्तप्रहर-सप्तघटिका-सप्तपल-उदयांकमीताक्षराणां वृद्धिः कार्या ॥

उदयादिम २३ युगप्रधान यंत्रः

उदयस्य आद्यसूरि नामानि		गृहवासः	व्रतपर्यायः	युगप्रधान कालः	सर्वायुः
१	सुधर्मास्वामी	५०	३०–४२	२०–८	१००
२	वयरसेन	९	११६	३	१२८
३	पाडिवय	९	८२	९	१००
४	हरिस्सह	९	६०	१३	८२
५	नंदिमित्र	१३	३०	२४	६७
६	सूरसेन	१३	४०	१०	६३
७	रविमित्र	१३	४०	१०	६३
८	श्रीप्रभ	१३	४२	८	६३
९	मणिरथ	१३	४२	८	६३
१०	यशोमित्र	१४	४१	८	६३
११	धणसिंह	१४	४०	१०	६४
१२	सत्यमित्र	१४	४०	१२	६६
१३	धम्मिल्ल	२०	३०	१२	६२
१४	विजयानन्द	१२	३०	१४	५६
१५	सुमंगल	१२	२०	२४	५६
१६	धर्मसिंह	१२	२०	१८	५०
१७	जयदेव	१२	२७–२०	११–१८	५०
१८	सुरदिन्न	१७	२७	१०	५४
१९	वैशाख	१०	२०	२०	५०
२०	कौडिल्य	१०–११	२१	१९–१८	५०
२१	माथुर	१०	२५	१५	५०
२२	वाणिपुत्त	१०	२०	१७	४७
२३	श्रीदत्त	१०	१५–२५	२५–१५	५०

उदयान्तिम २३ युगप्रधान यंत्रः

उ०	सूरिनामानि	गृहवासः	व्रतपर्यायः	युगप्रधान कालः	सर्वायुः
१	दुर्बलिकापुष्पमित्र	१७	३०	२०-१३	६७-६०
२	अरह मित्र	२०	१६	४५-२५	८१-६१
३	वैशाख	२५	१०	१९	५४
४	सत्कीर्ति	१६	२२	१८	५६
५	थावर	१३	२०	१७	५०
६	रहसुत	१३	२८	१३	५४
७	जयमंगल	१५	२०	१३	४८
८	सिद्धार्थ	१५	२०	१३	४८
९	ईशान	१५	३०	१०	५५
१०	रथमित्र	२२	१०-२०	८	४०-५०
११	भरणिमित्र	१०	२०	२०	५०
१२	दृढ़मित्र	१४	१५	२६	५५
१३	संगत मित्र	१२	१५	२२	४९
१४	श्रीधर	१८	२०-१०	१८	५६-४६
१५	मागध	१३	११	९	३३
१६	अमर	१५	२४	१३	५२
१७	रेवतिमित्र	२२	२९-१९	१८	६९-५९
१८	कीर्तिमित्र	२०	१०	१०	४०
१९	सिंहमित्र	२०	१४	६	४०
२०	फलगुमित्र	१३	१०	७	३०
२१	कल्याणमित्र	८	१६	१४	३८
२२	देवमित्र	१२	१२	१२	३६
२३	दुप्पसहसूरि	१२	४	४	२०

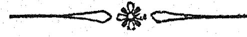
प्रथमोदय युगप्रधान यंत्रम्



२० प्रथमोदय युगप्रधान	गृहवास	व्रतपर्याय	युगप्रधान	सर्वायुः	मास	दिन
१ सुधर्मास्वामी	५०	४२	८	१००	३	३
२ जंबू स्वामी	१६	२०	४४	८०	५	५
३ प्रवभ स्वामी	३०	६४–४४	११	१०५–८५	२	२
४ शय्यंभवसूरि	२८	११	२३	६२	३	३
५ यशोभद्र	२२	१४	५०	८६	४	४
६ संभूतिविजय	४२	४०	८	९०	५	५
७ भद्रबाहु	४५	१७	१४	७६	७	७
८ स्थुलभद्र	३०	२४	४५	९९	५	५
९ महागिरि	३०	४०	३०	१००	५	५
१० सुहस्ति	२४-३०	३०–२४	४६	१००	६	६
११ गुणसुन्दर सूरि	२४	३२	४४	१००	२	२
१२ श्यामाचार्य	२०	३५	४१	९६	१	१
१३ स्कंदिल	१२–२२	५८–४८	३८–३६	१०८–१०६	५	५
१४ रेवतिमित्र	१४	४८	३६	९८	५	५
१५ धर्मसूरि	१८–१४	४०–४४	४४	१०२	५	५
१६ भद्रगुप्त	२१	४५	३९	१०५	४	४
१७ श्रीगुप्त	३५	५०	५०	१००	७	७
१८ वज्रस्वामी	८	४४	३६	८८	७	७
१९ आर्यरक्षित	११–२२	५१–४०	१३	७५	७	७
२० दुर्बलिकापुष्पमित्र	१७	३०	२०–१३	६७–६०	७	७



द्वितीयोदयुगप्रधान यंत्रम्



द्वितीयोदयुगप्रधान २३	गृहवास	व्रतपर्याय	युगप्रधान वर्ष०	सर्वायुः वर्ष०	मास	दिन
१ वयरसेन	९	११६	३	१२८	३	३
२ नागहस्ति	१९	२८	६९	११६	५	५
३ रेवतिमित्र	२०	३०	५९	१०९	२	२
४ सिंहसूरि (ब्रह्मद्वीपक)	१८	२०	७८	११६	३	३
५ नागार्जुन	१४	१९	७८	१११	५	५
६ भूतिदिन्न	१८	२२	७९	११९	४	४
७ कालिकाचार्य	१२	६०	११	८३	७	७
८ सत्यमित्र	१०	३०	७	४७	५	५
९ हारिल	१७-२७	३०-३१	५४	१०१-११२	५	५
१० जिनभद्रगणीक्षमाश्रमण	१४	३०	६०	१०४	६	६
११ उमास्वातिवाचक	२०	१५	७५	११०	२	२
१२ पुष्पमित्र	८	३०	६०	९८	०	०
१३ संभूति	१०	१९	५०-४९	७९-७८	२	२
१४ माढरसंभूति गुप्त	१०	३०	६०	१००	५	५
१५ धर्मऋषि (रक्षित)	१५	२०	४०	७५	४	४
१६ ज्येष्ठांगगणि	१२	१८	७१	१०१	३	३
१७ फल्गुमित्र	१४	१३	४९	७६	७	७
१८ धर्मघोष	८	१५	७८	१०१	७	७
१९ विनयमित्र	१०	१९	८६	११५	७	७
२० शीलमित्र	११	२०	७९	११०	७	७
२१ रेवतिमित्र	९	१६	७८	१०३	०	०
२२ सुमिणमित्र	१२	१८	७८	१०८	०	०
२३ हरिमित्र	२०	१६	४५	८१	०	०

श्रीगुरुपर्वक्रमवर्णनम्

(कर्त्ता–श्रीगुणरत्नसूरिः)

अनन्तं तज्ज्ञानं स हि निरुपमो दोषविलयो
नतिः शक्रादीनामहमहमिकापूर्वमिह सा ।
विसंवादातीतं तदपि च वचो दैवतगणे
न यस्मादन्यस्मिन् स जयतितरां वीरजिनपः ॥१॥
जयति विजितदोषः श्रीसुधर्मा गणेशो
जनितजनकजायाचौरबोधोऽथ जम्बूः ।
प्रभवविभुरथो यश्चौर्यलब्धत्रिरत्नो
मखगतजिनबुद्धः सूरिशय्यम्भवोऽतः ॥२॥
यशोभद्रः सूरिस्तदनु समभूद्विश्वविदितः
ततः सूरिः ख्यातोऽजनि जगति सम्भूतिविजयः ।
तथा भद्राद्बाहू रचितवरनिर्युक्तिततिको
वराहाऽमर्त्योत्थं ह्यशिवमहरद्यः स्तवनतः ॥३॥
योगीन्द्रः स्थूलभद्रोऽभूदथान्त्यः श्रुतकेवली ।
सिंहं स्वं दर्शयामास भगिनीविस्मयाय यः ॥४॥
तस्मान्महागिरिरभूज्जिनकल्पिकल्पः
श्रीसम्प्रतेर्नरपतेश्च गुरुः सुहस्ती ।
शिष्योत्तमावथ सुहस्तिविभोरभूतां
श्रीसुस्थितस्थविर–सुप्रतिबद्धसूरी ॥५॥
तदा च सूरिमन्त्रस्य ध्याता ज्ञानचतुष्कवान् ।
सर्वज्ञदृष्टद्रव्याणां कोट्यंशमवलोकते ॥६॥

तेन तौ कौटिकौ ख्यातौ ततोऽभूत्कौटिको गणः ।
तत्रेन्द्रदिन्न-दिन्नर्षी सूरिः सिंहगिरिस्ततः ॥७॥
जातिस्मृतिजृम्भकदत्तविद्यो श्रीसङ्घवात्सल्यमनीहता च ।
यस्मिन्नतुल्यान्यभवंस्ततोऽभूद् विभुः स वज्रो दशपूर्ववेदी ॥८॥
श्रीवज्रशाखाधुरिवज्रसेनान्नागेन्द्रचन्द्रादिकुलप्रसूतिः ।
चान्द्रे कुले पूर्वगतश्रुताढ्यःसामन्तभद्रो विपिनादिवासी ॥९॥
ततोऽपि वृद्धोऽजनि देवसूरिः प्रद्योतनः सूरिरथो शमाढ्यः ।
श्रीमानदेवोऽथ पदस्य काले यदंसयोर्वीक्ष्य रमागिरौ द्वे ॥१०॥
भ्रष्टोह्ययं ही भवितेति खिन्ने गुरौ विधिज्ञः किल योऽभ्यगृह्णात् ।
भक्ताङ्गिभक्तिं विकृतीश्च सर्वा आजन्म भोक्ष्ये न हि सर्वथेति ॥११॥
पद्माजयादिदेवीभिर्नतो नड्डूलपूःस्थितः ।
शाकम्भरीपुरे मारिं जह्रे शान्तिस्तवाच्च यः ॥१२॥

—*त्रिभिर्विशेषकम्* ।

भक्तामराद्यद्भुतकाव्यसिद्धिः श्रीमानतुङ्गोऽथ बहुप्रसिद्धिः ।
श्रीवीरसूरिर्जयदेवदेवानन्दौ क्रमेण प्रभुविक्रमश्च ॥१३॥
नरसिंहपुरे बोधितहिंसकयक्षोऽथ सूरिनरसिंहः ।
नागह्रदतीर्थकृते क्षपणकजेता समुद्रोऽथ ॥१४॥
ख्यातः श्रीहरिभद्रमित्रमभवत् श्रीमानदेवस्ततो
मान्द्याद्विस्मृतसूरिमन्त्रमिह यो लेभेऽम्बिकाया मुखात् ।
तस्मात् श्रीविबुधप्रभोऽजनि जयानन्दस्ततः संयमी
भव्याम्भोजरवी रविप्रभगुरुर्जज्ञेऽथ विज्ञेश्वरः ॥१५॥
सरस्वतीकण्ठसुवर्णभूषणख्यातिर्यशोदेवयतीश्वरोऽमुतः ।
प्रद्युम्नसूरिर्जिनशासनाम्बरप्रद्योतनैकद्युमणिस्ततोऽभवत् ॥१६॥
श्रीमानदेवोऽप्युपधानवाचकग्रन्थप्रणेताऽजनि विश्वपावकः ।
वादे जिते गोपगिरीशपूजितः सत्स्वर्णसिद्धिर्विमलेन्दुरप्यतः ॥१७॥

युगाङ्कनन्दप्रमिते ६६४ गतेऽब्दे श्रीविक्रमार्कात्सह संघलोकैः ।
पूर्वावनीतो विहरन् धरायामुद्द्योतनः सूरिरथार्बुदाधः ॥१८॥
आगत्य टेलीपुरसीमसंस्थपद्मासमासन्नबृहद्वटाधः ।
शुभे मुहूर्त्ते स्वपदेऽष्टसूरीनतिष्ठिपत्सौवकुलोदयाय ॥१६॥
॥ युग्मम् ॥

ततो (३५) गणोऽयं वटगच्छसंज्ञोऽप्यभूद् बृहद्गच्छ इति प्रसिद्धः ।
श्रीसर्वदेवो विदितोऽतिभूरिप्रशस्यशिष्यः प्रथमोऽत्र सूरिः ॥२०॥

रूपश्रीविरुदख्यातो देवसूरिस्ततोऽभवत् ।
श्रीसर्वदेवसूरीन्द्रः पुनरासीद्गुणोदधिः ॥२१॥

तस्माद्यशोभद्रयतीशचन्द्रः श्रीनेमिचन्द्रश्च विनिद्रभद्रः ।
ततोऽजनि श्रीमुनिचन्द्रसूरिः प्रज्ञापराभूतसुपर्वसूरिः ॥२२॥

नित्यं पपौ काञ्जिकमेकमम्भस्तत्याज सर्वा विकृतीश्च सम्यग् ।
जिगाय यो भावरिपूंश्च सोऽयं श्लाघ्यो न केषां मुनिचंद्रसूरिः ॥२३॥

तस्याभवन्नजितदेवमुनीन्द्रवादि—
श्रीदेवसूरिवृषभप्रमुखा विनेयाः ।
आद्यादभूद्विजयसिंहगुरुर्गरीयान्—
निस्सङ्गतादिकगुणैरनिशं वरीयान् ॥२४॥

ततः शतार्थिकः ख्यातः श्रीसोमनप्रभसूरिराट् ।
सूरिः श्रीमणिरत्नश्च भारत्यास्तनयाविव ॥२५॥

मणिरत्नगुरोः शिष्याः श्रीजगच्चन्द्रसूरयः ।
सिद्धान्तवाचनोद्भूतवैराग्यरसवार्द्धयः ॥२६॥
विधोश्चैत्रगणाम्भोधौ तपोज्ञानक्रियानिधेः ।
वाचकानाममङ्कारात् देवभद्रगणीश्वरात् ॥२७॥
चारित्रमुपसम्पद्य यावज्जीवमभिग्रहात् ।
आचामाम्लतपस्तेनुस्तपागच्छस्ततोऽभवत् ॥२८॥
—त्रिभिर्विशेषकम्

तत्पट्टोदयभूधरे शशिरवी वागीश्वरीमन्दिरे
सेनान्यौ वृषभूपतेः शमरमाकर्णावतंसाभुवौ ।
श्रीदेवेन्द्रमुनीश्वरोऽमलमना आद्यो द्वितीयः पुनः
सुरीशो विजयेन्दुरुत्तमगुणः सेव्यावभूतां सताम् ॥२६॥

श्रीदेवेन्द्रगुरोः शिष्यौ तमस्तौमैकभेदकौ ।
महाप्रभावजायेतां जम्बूद्वीपरवी इव ॥३०॥

विद्यानन्दमुनीन्दुरादिम इह प्रह्लादने पत्तने
यस्याचार्यपदेऽमुचन् दिविषदो गन्धोदकं मण्डपात् ।
दुष्टस्त्रीदमनः सुशास्त्ररचनः श्रीधर्मघोषः पुनः
पाथोधिप्रकटीकृताद्भुतमणिः श्रीगोमुखोद्बोधकृत् ॥३१॥

तदाच—

योगी कश्चन शिष्यवृन्दकलितोऽवन्त्यां स्थितोगर्वभृ
न्नानासिद्धिबहुप्रसिद्धिहृतहृद्भूपप्रजाऽभ्यर्चितः ।
तत्र स्थातुमयं न जैनयतिनां दत्ते कदाऽपि कचि—
च्चेदागच्छति कोऽपि साधुरिह यस्तं प्रत्यसौ मत्सरात् ॥३२॥

आसन्नोऽप्यथ दूरगोऽपि सहसा सौवप्रभावोद्धुरो
हुङ्कारात्तृणतन्तुधूलिकणिकाक्षेपात्तथा स्वाङ्कतः ।
मार्जारान्नकुलोन्दुराहिसरटान् गोधावृकान् वृश्चिकान्
फेरण्डप्रभृतींश्च मुञ्चतितमां लक्षादिसङ्ख्यान् क्षणात् ॥३३॥

॥ *युग्मम्* ॥

अन्याश्चापि बिभीषिकाः प्रकटयत्युच्चैः स नानाविधा
स्तद् दृष्ट्वा भयविप्लुताँश्छलयति क्षुल्लान् स पापः क्षणात् ।
साधुः कोऽपि न तत्र तिष्ठति ततः श्रीधर्मघोषोऽन्यदा
सूरिस्तत्र समीयिवान् बहुपरीवारो विहारक्रमात् ॥३४॥

साधूनध्वनि सङ्गतान् स सहसा दृष्ट्वाऽथ दुष्टो रुषा
दन्तैर्दष्टरदच्छदोऽवददऽदः श्वेताम्बराः किंधराः ।
शून्यास्ते सकलाऽपरा यदिह भोः प्राप्ता विशङ्का हठात्
दृष्टोऽहं यदि नो, श्रुतोऽपि किमु रे नात्र स्थितो नन्वहम् ॥३५॥

बाहुभ्यां जलधिं तरामि यदि वा तं शोषयामि क्षणा—
दाकाशं विपुलं प्रयामि खगवद्रात्रौ च कुर्यां दिनम् ।
शेषाहिं दृढयोगपट्टतुलया बध्नानि सौवासने
फूत्कृत्यापि गिरीन् नयानि गगने वायू रजोवद् रयात् ॥३६ ॥

॥ युग्मम् ॥

भो भो यात पलाय्य दृष्टिपथतो मां माऽवमन्ध्वं हठा—
न्नो चेत्स्थेयमिह स्थिरैर्भवति यत्तद् दृश्यतां सम्प्रति ।
व्याहार्षुर्मुनयो मुधाऽऽत्मनि मदं धत्से विधत्से न किं
क्षान्तिं ब्रूम इदं हिताय भवतो जानासि चेत्किंचन ॥३७॥

नोचेद्यन्नतु रोचते प्रकुरु तत् तावत् स्थिताः स्मो वयं
योगिन्नुच्छलितोऽपि यन्न चणको भाण्डं प्रभेत्तुं क्षमः ।
क्रुद्धस्तद्वचसा विधाय विकृतं वक्त्रं स भीत्यावहं
दन्तान् स्थूलतरानदीदृशदथो जान्वग्रजाग्रन्मुखान् ॥३८॥

किं नो भीषयसे तृणाय न वयं मन्यामहे त्वादृशं
व्याहृत्येति भयोज्झिता मुनिवरास्तत्पातसंसूचनीम् ।
उद्गीर्य्य स्वकफोणिमुन्नततरां जग्मुस्ततः श्रीगुरो—
रभ्यर्णे जगदुश्च तद्गुरुरथो प्रोवाच सर्वान् यतीन् ॥ ३९ ॥

चेद्योगीह बिभीषिकां विकुरुते माभैष्ट तद्भो मनाक्
त्राताऽहं वरिवर्मि वोऽथ वसतौ दोषागमे लक्षशः ।
शूच्याख्या अतिवज्रतुण्डनखरा अन्यान्यदेहोर्ध्ववगाः
कल्लोला इव वारिधेर्दशदिगुद्भूताः प्रसस्रुः क्षणात् ॥४०॥

अङ्गारोहणवस्त्रपात्रवलकस्तम्भादनैकादरान्
दृष्ट्वा तान् वसतेर्बहिश्च परितः श्वानौतुसर्पध्वनीन् ।
श्रुत्वा रौद्रतमान् प्रकंप्रतनवो भीतेर्भरात्साधवो—
ऽन्योन्याह्वानपराश्च नालमभवन् स्थातुं प्रणष्टुं तथा ॥४१॥
वस्त्रच्छन्नमुखे घटे प्रथमतः सज्जीकृते श्रीगुरु—
र्दत्त्वा हस्तमथाजपद्गतभयो यावत्स तावच्छठः ।
सर्वाङ्गेऽप्युदितं व्यथासमुदयं हर्तुं विषोढुं प्रणि—
ह्नोतुं वाऽप्यसहस्ततोऽनुगजनानूचे म्रिये भो म्रिये ॥ ४२ ॥
धिक् मामनात्मज्ञमदीर्घदर्शिनं येनाभिमानादपमानितो गुरुः ।
क्वाणुः क मेरुः क सरः क सागरः काहं हहा कैष च सर्वसिद्धिभृत् ॥४३॥
भीतः सोऽविकलं निजं विलसितं संहृत्य पीडावशा—
दाक्रन्दंश्च क्वणंश्च तत्र वसतौ गत्वा मुखात्ताङ्गुलिः
ऊचेऽज्ञानवशाद्यदत्र विहितं तत्क्षम्यतां क्षम्यतां
नातो वो विदधामि किञ्चिदशुभं साक्षी जनोऽत्राखिलः॥ ४४ ॥
निरीक्ष्य दीनं स्वपदोर्विलीनं तं योगिराजं सुसमाधिभाजम् ।
चकार शान्तः प्रभुधर्मघोषः पुण्यप्रभायाश्च बभूव पोषः ॥ ४५ ॥
श्रीसोमप्रभसूरयो ऽजनिषतार्थैकादशाङ्गीस्फुर—
त्सूत्रार्थाः किल कार्त्तिके समधिके कृत्वा चतुर्मासकम्
अन्याचार्यगणे निषेधति भृशं ये भीमपल्या ययु
र्भङ्गं भाविनमेक्ष्य मन्त्रनिवहं नालुर्गुरुभ्यश्च ये ॥ ४६ ॥
तेषां विनेया वरभागधेयाश्चत्वार आसन् स्वगुणैरमेयाः ।
चतुर्गतिभ्योऽसुमतां सुखेनोद्धाराय धर्मस्य वपूंषि किं नु ॥ ४७ ॥
श्रीविमलप्रभुसूरिः श्रीपरमानन्दसूरिगुरुराजः ।
वचनातिगयतनावान् सूरिः श्रीपद्मतिलकगुरुः ॥ ४८ ॥
श्रीसोमतिलकाख्याश्च सूरयो यद्यशोऽर्णवे ।
ज्योत्स्ना जलं ग्रहाः फेनपिण्डा वेलावलिर्दिशः ॥ ४९ ॥
युग्मम् ॥

विश्वख्याततपागणाधिपतयः सार्वत्रिकख्यातयः
सद्वैराग्यपयोधयस्त्रिजगतीदीव्यद्गुणश्रेणयः ।
आसन् ग्रन्थकृतः सदागमभृतश्चारित्रलक्ष्मीवृतः
सद्भाग्याभ्यधिकाश्च सोमतिलकाः सूरीशवृन्दारकाः ॥ ५० ॥

तेषां शिष्यास्त्रयः ख्याता अभूवन्नद्भुतैर्गुणैः ।
ज्ञानदर्शनचारित्रयी मूर्त्तिमती किल ॥ ५१ ॥

संक्षुब्धसागरगभीररवेण नित्यमावर्जिताखिलजगज्जनमानसालिः ।
श्रीचन्द्रशेखरगुरुर्गरिमैकधाम विद्याविलासवसितः प्रथमो बभूव ॥५२॥

भव्यप्राणिशिवश्रियोः परिणये सांवत्सराधीश्वराः
गाम्भीर्यादिगुणैर्निजैरुदधिवत्केनाप्यलब्धान्तराः ।
ते ऽजायन्त यतीश्वराइह जयानन्दा द्वितीयाः क्रमात् ।
येषां देवतया करेण निहतो भ्राता ऽनुमेने व्रतम् ॥ ५३ ॥

वैराग्यं विमलं शमोऽतिविशदः शास्त्रज्ञता चाद्भुता,
सिद्धान्तैकरुचिर्मनोहरतरा भव्योपकारः परः ।
चारित्रं त्रिजगत्यनुत्तरतमं भाग्यं ह्यसाधारणं,
येषां श्रीयुत देवसुन्दरवराः ख्यातास्तृतीयास्तु ते ॥५४॥

एकद्वित्रिमुखैर्गुणैः कृतमदा देहेऽपि गेहेऽपि ये,
नो मान्ति प्रचुरा नरा जगति ते सन्तु प्रकामं परे ।
ये सर्वेषु गुणेषु सत्स्वपि मदं कुर्वन्ति नो कर्हिचित् ।
ते ऽमी श्रीयुतदेवसुन्दरवराः सन्त्येक एवावनौ ॥५५॥

न यन्निन्दास्तुती कर्त्तुं शक्येते खल सज्जनैः ।
असद्भावेन दोषाणां गुणानां चाप्रमाणतः ॥५६॥

तच्छिष्याः सूरयः पञ्च मेरुपञ्चकसन्निभाः ।
सुवर्णभरविख्याता विद्यन्ते गरिमास्पदम् ॥५७॥

१—यद्वैराग्यमखण्डितं बहुविधं नित्यं तपो यत्परं,
बाहुश्रुत्यमुदारविस्मयकरं यच्च शान्तं मनः ।

योऽन्यो वाऽप्यभवद्गुणो गुरुवरे श्रीज्ञानतः सागरे
तत्सर्वं नहि वीक्ष्यते गणिगणेऽन्यस्मिन् कदाऽपि क्वचित् ॥५८॥
२—दाक्षिण्यैकपयोधयश्चतुरसच्चेतश्चमत्कृद्गुणाः
सिद्धान्तार्णवगाहनैकरसिका उत्सर्गमार्गाध्वगाः ।
प्रागल्भ्यप्रवरास्तपोविधिरताः सन्मत्युदाराशयाः
आसन् श्रीकुलमण्डनाह्वयगुरूत्तंसा द्वितीया इमे ॥५९॥
३—भूतभाविभवत्सूरिक्रमरेणुकणोपमः
सूरिः श्रीगुणरत्नाह्वस्तृतीयः समजायत ॥६०॥
४—श्री सोमसुन्दर इति प्रथिताभिधानाः
सौभाग्यभाग्यविशदाः क्षमया प्रधानाः
तुर्याः सुधामधुरिमाञ्चितवाग्विलासाः
सूरीश्वरा गुणिगुणैः कृतनित्यवासाः ॥६१॥
५—श्री साधुरत्नाश्च ततो मुनीन्द्रास्तदद्भुतं यत्सुगुणा यदीयाः ।
नान्यत्र सन्तोऽपि जगज्जनानां सर्वत्र कर्णातिथयो भवन्ति ॥६२॥
काले षड्रस पूर्व १४६६ वत्सरमिते श्रीविक्रमार्काद्गते
गुर्वादेशवशाद्विमृश्य च सदा स्वान्योपकारं परम् ।
ग्रन्थं श्रीगुणरत्नसूरिरतनोत्प्रज्ञाविहीनोऽप्यमुं
निर्हेतूपकृतिप्रधानजननैः शोध्यस्त्वयं धीधनैः ॥ ६३ ॥

इति श्रीगुरुपर्वक्रमवर्णनम्

अपरनाम श्रीक्रियारत्नसमुच्चयप्रशस्तिः समाप्ता

श्रीमुनिसुंदरसूरिभिः संदर्शितानि

गुर्वावलीपट्टपरंपरासूरिनामानि

१ भगवान महावीर स्वामी

[निग्रन्थ गच्छः]

२ श्री सुधर्मा स्वामी

३ श्री जंबू स्वामी

४ श्री प्रभव स्वामी

५ श्री शय्यंभव स्वामी

६ श्री यशोभद्र सूरिः

७ श्री संभूति विजयः
श्री भद्रबाहु स्वामी + }

८ श्री स्थुलभद्र स्वामी

९ श्री आर्य महागीरिः +

९ श्री आर्य सुहस्ति सूरिः

[कौटिक गच्छः]

१० श्री सुस्थित सूरिः
श्री सुप्रतिबध्ध सूरिः + }

११ श्री इंद्रदिन्न सूरिः

१२ श्री दिन्न सूरिः

१३ श्री सिंहगिरि सूरिः

१४ श्री वज्र स्वामी

१५ श्री वज्रसेन सूरिः

[चंद्र गच्छः]

१६ श्री चन्द्र सूरिः

[वनवासी गच्छः]

१७ श्री सामन्त भद्र सूरिः

१८ श्री वृध्धदेव सूरिः

१९ श्री प्रद्योतन सूरिः

२० श्री मानदेव सूरिः

२१ श्री मानतुंग सूरिः

२२ श्री वीर सूरिः

२३ श्री जयदेव सूरिः

२४ श्री देवानंद सूरिः

२५ श्री विक्रम सूरिः

२६ श्री नरसिंह सूरिः

२७ श्री समुद्र सूरिः

२८ श्री मानदेव सूरिः

२९ श्री विबुधप्रभ सूरिः

३० श्री जयानंद सूरिः

३१ श्री रविप्रभ सूरिः

३२ श्री यशोदेव सूरिः

३३ श्री प्रद्युम्न सूरिः

३४ श्री मानदेव सूरिः +

३५ श्री विमलचंद्र सूरिः +

३६ श्री उद्योतन सूरिः

[वडगच्छः]

३७ श्री सर्वदेव सूरिः

३८ श्री देव सूरिः

३९ श्री सर्वदेव सूरिः

४० श्री यशोभद्र सूरिः }
श्री नेमिचंद्र सूरिः }

४१ श्री मुनिचंद्र सूरिः

४२ श्री अजितदेव सूरिः

४३ श्री विजयसिंह सूरिः

४४ श्री सोमप्रभ सूरिः

श्री मणिरत्न सूरिः

[तपागच्छः]

४५ श्री जगच्चंद्र सूरिः

४६ श्री देवेंद्र सूरिः

श्री विजयेन्दु सूरिः

४७ श्री विद्यानन्द सूरिः

श्री धर्मघोष सूरिः

४८ श्री सोमप्रभ सूरिः

(४९) श्री विमलप्रभ सूरिः

(,,) श्री परमानंद सूरिः

(,,) श्री पद्मतिलक सूरिः

४९ श्रीसोमतिलकसूरिः ‡

(५०) श्री चंद्रशेखर सूरिः

(,,) श्री जयानंद सूरिः +

५० श्री देवसुंदर सूरिः +

(५१) श्री ज्ञानसागर सूरिः

(,,) श्री कुलमंडन सूरिः

(,,) श्री गुणरत्न सूरिः

५१ श्री सोमसुंदर सूरिः

(,,) श्री साधुरत्न सूरिः

५२ श्री मुनिसुंदर सूरिः

(   ) एतेषां पट्टपरंपरा गुर्वावल्यां संदर्भिता नोपलभ्यते ।

‡ एतेषां चत्वारः पट्टधरा आसन् ! इति तपागच्छपट्टावलीसूत्रे ।

+ केषांचित् मते श्रीभद्रबाहुस्वामियुग्म—आर्यमहागीरिसूरियुग्म-श्रीसुस्थित-सूरियुग्मानां एकपट्टगणने चंद्रसूरेरंकः १६, अन्येषां मते पृथक्पृथक्गणने अंकः १९ ॥ अनया गणनया वृहद्गच्छादिमाचार्यश्रीसर्वदेवसूरेरंकौ ३५,३८ । श्रीप्रद्युम्नसूरि-श्रीमान-देवसूरियोरपि पट्टगणनेऽकौ ३७,४० ॥ अतः देवसुंदरसूरेरपिपट्टांकाः ४८,५०,५१,५३ । श्रीजयानंदसूरेरपि पट्टगणने अंकः ५४ ॥ (४५) श्री जगच्चंद्रसूरेरारभ्य विशिष्ट-गणनयातु श्रीदेवसुंदरसूरेः ५०,५६,६१ अपि अंकाः । किंतु संततिगणनया ५० एव ॥

—इति मतांतराणि ५९, ४८५, ४८६, ४८७ श्लोकेषु ।

५२—श्रीमुनिसुंदरसूरिभिः विक्रमीय १४६६ वर्षे ४९६ पद्यदेहा गुर्वावली गुंफितास्ति, तस्याः पट्टपरंपरा एवात्र मुद्रितास्ति ॥

श्रीसोमसौभाग्य-पट्टावली

[कर्ता—मुनिश्रीप्रतिष्ठासोमः]

ततो गणः शिष्यततो वटाख्याख्यातोऽभवत्कापि बृहद्गणाह्वः ।
तस्मिंश्च गच्छे प्रवरेषु भूरिसूरिष्वतीतेषु बहुश्रुतेषु ॥२३॥
श्रीमान् जगच्चन्द्र इति प्रतीतनामा सुधामाजनि सूरिराजः ।
षट्त्रिंशदाचार्यगुणाः गणेंद्रं तं शिश्रियुः प्रेमभरप्रणुन्नाः ॥२४॥ युग्मम्
स्वगोभरैर्ध्वस्तसमस्तपापतमाः क्षमादर्शितपुण्यमार्गः ।
जगज्जनानां प्रमदं वितन्वन् श्रीचन्द्रवद्योऽजनि सार्थकाह्वः ॥२५॥
वैराग्यवान् द्वादश हायनान्याचामाम्लनिर्माणतपो ह्यतप्त ।
यो दुस्तपं तेन तपागणेति गणस्य सत्ख्यातिरभूत् क्षमायां ॥२६॥
श्रीमज्जगच्चन्द्रगुरोर्विनेयस्त्वमेयसद्गेयगुणैर्विनिद्रः ।
देवेंद्रमर्त्येंद्रमुनींद्रवंद्यो देवेंद्रसूरिः समभूत् प्रभाढ्यः ॥२७॥
व्याख्याकलां यस्य कलां विलोक्य श्रीवस्तुपालादिमहेभ्यसभ्याः ।
के घूर्णयन्ति स्म न पूर्णचित्ताः शीर्षाणि हर्षेण च विस्मयेन ॥२८॥
कर्मसरूपप्रथनाढ्य कर्मग्रंथादिसद्ग्रंथविधानवेधाः ।
मेधाप्रधानो जगतां गतांहा व्यभासयज्जैनमतं मतं यः ॥२९॥
संशुद्धसाधुस्थितिदुर्गमार्गं प्ररूपयंश्चारु समाचरंश्च ।
अनल्पसंकल्पितदानकल्पद्रुमो ऽभवद्यो जिनकल्पिकल्पः ॥३०॥
ख्यातो दिगंते वितते तदंतेवासी स्वदासीकृतदेवसूरिः ।
निस्सीमगंभीरिमहृद्यविद्यानंदाह्वसूरींद्र इहाबभासे ॥३१॥
अनोकहं नव्यलताः श्रिता वा सरित्पतिं वा सरितस्तता वा ।
मरालबाला इव मानसं वा यं हृद्यविद्या हि तथा प्रथाढ्याः ॥३२॥

प्रह्लादनस्पृक्पुरपत्तने श्रीप्रह्लादनोर्वीपतिसद्विहारे ।
श्रीगच्छधुर्यैः किल यस्य वर्यश्रीसूरिमंत्रे सति दीयमाने ॥३३॥
सत्पात्रमात्रातिगसद्गुणातिप्रहृष्टहृल्लेखभृदग्र्यलेखाः ।
कर्पूरकाश्मीरजकुंकुमादिगंधोदकं श्राक् ववृषुस्तदानीम् ॥३४॥ युग्मम्
तत्पट्टपूर्वाद्रिविनिद्रभानुर्जगत्रयाह्लादनशीतभानुः ।
श्रीधर्मघोषः स्फुटदब्दघोषः स नन्दतान्निर्मितपुण्यपोषः ॥३५॥
प्रबोधितो येन नयेन साधुः पृथ्वीधरः साधुधुरंधरोऽसौ ।
स्फारान् विहारांश्चतुरश्चतुर्भिः समन्विताशीतिमितानकार्षीत् ॥३६॥
षट् पूर्वपंचाशदतुल्यहेमघटीभिरिभ्यो रुचिरेंद्रमालाम् ।
कंठे निजे यो विनिवेश्य वश्यां मुक्तिं वशां तां हृदि मन्यते स्म ॥३७॥
माधुर्यधुर्यां च सुधासदेश्यां यद्देशनां श्रोतपुटैर्निपीय ।
पृथ्वीधरांगोद्भवझंझणोऽसौ श्रीतीर्थयात्रां रचयन् पवित्रतां ॥३८॥
सुवर्णदुर्वर्णमयीं किलैकामेवाद्भुतश्रेणिकरीं पताकाम् ।
ददौ सदौचित्यधरः सुतीर्थे शत्रुंजयाद्रावपि चोज्जयंते ॥३९॥ युग्मम्
श्रीधर्मघोषो गुरुरन्यदोर्व्यां गुर्व्यां विहारं रचयन् समागात् ।
श्रीउज्जयिन्यामलकाजयिन्यामनन्यसामान्यघनप्रभावः ॥४०॥
गुरून्नतिं लोकनतिप्रसूतामतिप्रभूतां पुरि वीक्ष्य कश्चित् ।
योगी विपश्चित् कुपितः समागात् गुर्वाश्रमं संश्रित आप्तशिष्यैः ॥४१॥
सर्पान् सदर्पान् वदनोत्थतारफूत्कारवारैर्भरितांतरिक्षान् ।
परः सहस्रात् स मुमोच विद्याकृतानि चान्यान्यपि वैकृतानि ॥४२॥
पद्मासने ध्यानमथ प्रपूर्य सूर्यग्रणीर्गेयगुणोऽनणीयः ।
विनेयवृन्दैः सह तं बबंध स क्रौंचबंधं बुधसार्वभौमः ॥४३॥
म्रिये म्रियेऽहं सह शिष्यलक्षैर्मां मुंच सद्यः सुगुरो ? प्रसद्य ।
कारुण्यपुण्यः श्रितसाम्यकाम्यस्त्वं वर्तसे यद् व्रतिनामिनश्च ॥४४॥
ततो व्यमुंचद्गुरुचक्रवर्ती तं योगिनं योजितपाणिपद्मम् ।
ततो मनः साम्यभृतां नितान्तं कांतं घृणासांद्ररसैः प्रशस्यैः ॥४५॥

विद्यापुरे क्षुद्रविनिद्रविद्याविदः सदःसंश्रितचारुपट्टाः ।
श्राद्धीः प्रदुष्टा हृदि शाकिनीः श्रागस्तंभयद्यश्चतुरश्चतस्रः ।।४६।।
यः पूर्जनाभ्यर्थनया नयानुसारी च ताः स्तंभनतो मुमोच ।
श्रदर्शयद्यस्य च रत्नमेकं रत्नाकरः स्वं तटसंश्रितस्य ।।४७।।
विनिर्मिता येन च भव्यनव्यग्रंथा श्रनेके सरसार्थसार्थाः ।
प्रदीप्रदीपा इव तत्वमार्गमद्यापि हृद्याः किल दर्शयन्ति ।।४८।।
गिरीशगिर्युज्वलतोत्थगर्वखर्वीकृतौ पेशलकौशलाढ्याः ।
सदावदाताः प्रवरावदाता वक्तुं न शक्याः कविभिर्यदीयाः ।।४९।।
तस्य क्षमाभृत्प्रणतस्य पट्टे सोमप्रभ सोमसमानकीर्त्तिः ।
सूरिर्बभौ यो भुवि सच्चकोरलोकं चकारास्तसमस्तशोकम् ।।५०।।
गलत्कलंकं भुवि यो निजांकं काव्यप्रभः काव्यनिबद्धशास्त्रम् ।
घनं विपश्चिज्जनरंजनं तद्विनिर्ममे निर्मलनिर्ममेशः ।। ५१ ।।
श्रीसोमकीर्तिनिकरः करणौघजेता श्रीयुक्तसोमतिलकाभिधसूरिराजः ।
तत्पट्टपूर्ववसुधाधरतुंगश्रृंगं विध्वस्ततामसभरोऽरचयद्रुचाढ्यम् ॥ ५२ ॥
श्रीसोममौलिसुरमौलिमलंकरोति स्मासौ नभोङ्गणविभूषणतुल्यसोमः ।
श्रीसोमपुंङ्गसुगुरुस्त्वकरोत्सवासं स्फूर्जन्मनः सुमनसां विगतैनसां सः ।।५३
दीव्यद्दयाः सहृदया हृदयावदातविद्योदया घनतरा भुवनेष्वभूवन् ।
श्रीस्तोमसोमतिलकस्य मुनीश्वरस्य साम्यं न केऽपि तु दधुर्दधिशुभ्रकीर्तेः।।५४

जयानंदः सूरिस्त्रिदशपतिसूरिर्न्निजधिया
विनेयस्तस्यासीन्नयविनयसौभाग्यकलितः ।
श्रभंगं वैराग्यं दृढ़तमतमस्तोममथनं
यदीयांगे चंगे प्रणयवशतो वासमकरोत् ॥ ५५ ॥
गुरौ यस्मिन् स्मेरद्युतिदिनकरे संयमरमा—
लसद्रामापाणिग्रहणमहमातन्वतितराम् ।
लघुभ्राता देव्या जिनमतजुषा मुर्ध्नि निहत—
श्चपेटाभिः प्रादादनुमतिमसौ तद्ग्रहणजाम् ॥ ५६ ॥

सुधर्मश्रीजंबूप्रभृतिसुगुरून् धीधनगुरून् ।
महौन्नत्यान् नित्याभ्युदयजयसत्कीर्तिकलितान् ।
दृशोऽतीतान् स्फीतान् नयति यतिराट् यः स्मृतिपथम् ।
गुणैश्चंद्रोन्निद्रैर्गिरिशगिरिशुभ्रैरिह शुभैः ॥ ५७ ॥
सदर्पः कंदर्पः प्रसृमरभुजौजाः स समरे
ऽवधि क्रोधो योधो निकृतिमदमात्सर्यसहितः ।
जयानंदश्रीमद्गुरुभिरपरेऽपीह रिपवो
ऽन्तरंगास्तेऽखर्वास्सपदि हृतगर्वा विदधिरे ॥ ५८ ॥
ये श्रीमद्गुरवो रवोर्जितजितप्रावृट्घनाः श्रीघनाः
श्रीमद्गौतमसंनिभा हृदि निभान्मुक्ताश्च युक्ता गुणैः ।
विश्वं कीर्तिजलैः समुज्ज्वलतरैः प्रक्षालयंतः स्फुर—
न्मूर्तिस्फूर्तिजुषः सृजंति सुकृतश्रीप्राज्यराज्यं क्षितौ ॥ ५९ ॥

इति श्री युगप्रधानावतारश्रीबृहत्तपागच्छशृंगारहारभट्टारकपुरं—दरपूज्यश्रीसोमसुंदरसूरिसौभाग्यवर्णने सोमसौभाग्यनाम्नि काव्ये श्रीतपागच्छपूर्वाचार्यसंहतिप्रकटनो नाम तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥

अथ अनुपूर्तयः—

स्वर्गं ययुर्युयुचलेंद्रियजिज्जयाद्याऽऽनंदाह्वसूरिमुकुटाः प्रकटाभिधानाः ॥
श्रीदेवसुंदरगुरुप्रभवोऽभवंश्च, श्रीगच्छनायकतया विदितास्तदानीं ॥
—सर्ग ५ श्लो० १

अद्रीश्वराग्न्यंबुधिचंद्रसंमिते, भृते प्रमोदप्रकरेण वत्सरे ॥
समं भगिन्या गिरिदेवताद्युता, सोमेन दीक्षा जगृहे महामहैः ॥
श्रीसोमसुंदरमुनिस्त्विवति नाम धाम,श्रेयःश्रियां वितरतिस्म यतीश्वरोऽसौ ॥
सोमाभिधानपुरुषप्रवरस्य तस्य, दीव्यद्गुणैः प्रसृमरस्य नतामरस्य ॥
(दीक्षा वि० सं० १४३७) सर्ग ४, श्लो० ५९-६०,

श्रीवाचकोत्तमपदं खशराब्धिचंद्रसंवत्सरे विगतमत्सरचित्तवृत्तेः ॥
अब्दैः समस्य समभूत् नखसंमिताब्दे
शाब्देन सन्मधुरिमाऽतिशयेन तस्य ॥ १ ॥

श्रीसोमसुंदरगुणाद्भुतवाचकेंद्राः केंद्रास्पदाश्रितशुभग्रहशुद्धलग्ने ॥
संस्थापिताः किल तदैव सदैव पुण्याः,
प्राचीं दिशं प्रति विनेययुता विजह्रुः ॥ २ ॥
श्रीदेवसुंदरगुरुर्गरिमाभिरामः, श्रीवाचकस्य कलिशत्रुभयानकस्य ॥
कर्णेसकर्णमुकुटस्य 'स' सूरिमंत्रं, संन्यस्यतिस्म भुवि विस्मयकारिशक्तिं॥ ३
वर्षे कुलाचलशिलीमुखवारिराशिपीयुषदीधितिमितेऽप्रमिते प्रमोदैः ॥
श्रीसोमसुंदरगुरोज्वलवाचकानामाचार्यवर्यपदमद्भुतकारि जज्ञे ॥४॥
(वाचकपदं वि० सं० १४५०, सूरिपदं वि० सं० १४५७)
सर्ग ५, श्लो० १४, १५, ५०, ५१,

स्वर्गंगते सद्गुणसंगते श्री—बृहद्गुरौ जज्ञुरथो प्रथाढ्याः ॥
श्रीगच्छनाथा महसा सनाथाः, श्रीसोमयुक् सुंदर सूरिराजाः ॥
सर्ग–६, श्लोक–१

स्वच्छे श्रीयुतसोमसुंदरगुरोर्गच्छे ऽप्यतुच्छे गुणैः ।
संख्या नो वरिवर्ति पंडितगणिक्षुल्लादिसंख्यावृताम् ॥
रत्नानामिव कांतकांतिसजुषां रत्नाकरस्य स्फुर—
त्ताराणां च यथापृथुद्युतिभृतां श्रीतारकाधीशितुः ॥ १ ॥
× सर्ग–१०, श्लोकः ६४,

× श्रीसोमसुंदरसूरीणां बहवः पट्टधरा वाचकाः शिष्याश्चासन् तेषु केषांचित् नामानि यथा—श्रीमुनिसुंदरसूरिः, कृष्णसरस्वतीश्रीजयसुंदरसूरिः, श्रीभुवनसुंदरसूरिः एकादशांगसूत्रार्थधारकश्रीजिनसुंदरसूरिः, जिनकीर्तिसूरिः, श्रेष्ठिगोविंदकृतपदोत्सव; श्रीविशालराजसूरिः, महादेवश्रेष्ठिकृतपदोत्सवो दक्षिणदिग्वादिजेता श्रीरत्नशेखरसूरिः, गंधारनगरश्रेष्ठिलक्षसंघपतिकृतपदोत्सवः श्रीउदयनंदिसूरिः, रत्नशेखरसूरिशिष्यलक्ष्मी-सागरसूरिः, महावादी समर्थव्याख्याता मेवाडाधिपतिकुंभकर्ण–जीर्णदुर्गाधिपतिमंडलिक—चांपानेराधिपतिजयसिंहपूजितः समर्थकविः श्रीसोमदेवसूरिः, रत्नमंडनसूरिः, सप्तनय-रहस्यज्ञाता श्रीरत्नमंडनसूरिः, शुभरत्नसूरिः, महातार्किकसोमजयसूरिः । उपाध्याय-साधुराजः, महोपाध्यायजिनमंडनः मुख्यशिष्यकृष्णसरस्वतीउपाध्यायश्रीचारित्ररत्नः, उपाध्यायसत्यशेखरः, वादीज्वरधन्वंतरी उपाध्याय श्रीहेमहंसः । दक्षिणदिग्वादिजेता पं०

वर्षे नंदनिधानवारिधिहिमज्योतिर्मिते स्वर्ययुः ।
केचित् सातिशया वदंत्विति मुनिश्रेष्ठा गरिष्ठा धिया ॥
श्रीसीमंधरतीर्थनाथचरणांभोरुट्पवित्रीकृते ।
जाताः पूर्वमहाविदेहनगरे ते सूरयः सत्कुले ॥१॥
(वि० सं० १४९९ स्वर्गगमनं) सर्ग-९ श्लोक १०९

श्रीसोमसुंदरयुगोत्तमसूरिपट्टे, श्रीमान् रराज मुनिसुंदरसूरिराजः ॥
श्री सूरिमंत्रवरसंस्मरणैकशक्ति-र्यस्याऽभवद् भुवनविस्मयदानदक्षा ॥१॥
श्रीरोहिणीति विदिते नगरे ततीति पश्चात्कृतेः किल चमत्कृतहृत्पुरेशः ।
ऊरीचकार मृगयाकरणे निषेधं, प्रावर्तयन्निखिलनीवृति चाप्यमारिं ॥२॥
प्रागेव देवकुलपाटकपत्तने यो, मारेरुपद्रवदलं दलयांचकार ॥
श्रीशांतिकृत्स्तवनतोऽवनतोत्तमांग-भूपालमौलिमणिघृष्टपदारविंदः ॥३॥
श्रीमानदेवशुचिमानसमानतुङ्ग-मुख्यान् प्रभावकगुरून् स्मृतिमानयद्यः ॥
श्रीशासनाऽभ्युदयदप्रथितावदातै-स्तैस्तैश्चमत्कृतिकरैः कुमुदावदातैः ॥४॥
पारावारकरस्मरेषुहिमरुक्वर्षेति हर्षाद् व्यधात् ।
विज्ञानां हृदयंगमं च सुगमं क्लृप्तेंदिरासंगमम् ॥
काव्यं नव्यमिदं विदंभहृदयः शिष्यः प्रतिष्ठादिमः ।
सोमः श्रीयुतसोमसुंदरगुरोर्मेरोर्गरिम्णः श्रिया ॥
(रचना वि० सं० १५२४) सर्ग १०, श्लो० १, २, ३, ४, ७३,
इति समाप्तमिदम्

विवेकसागरः, श्रीदक्षिणदिग्वादिजेता राजवर्धनः, श्रीचारित्रराजः, वादीश्रीपुण्यराजः, श्रीश्रुतशेखरः, श्रीवीरभूतशेखरः, श्रीसोमशेखरः, श्रीज्ञानकीर्तिः, श्रीशिवमूर्तिः, श्रीधर्ममंडनः, ज्योतिर्विद् श्रीहर्षमूर्तिः, श्रीहर्षकीर्तिः, श्रीहर्षभूषणः, श्रीहर्षवीरः, गणितज्ञः श्रीविजयशेखरः, संस्कृतजल्पपटुश्रीअमरसुंदरः, महावैयाकरणो लक्ष्मीभद्रः, वादीश्रीसिंहदेवः, प्रवरव्याख्यातारत्नप्रभः, श्रीशीलभद्रः, दुर्गमशास्त्रज्ञनंदिधर्मः, शांतिजिनैकस्मरणमहातपस्वी शांतिचंद्रगणिः, पंचाशत्क्षपणादिदुःस्तपतपःकर्ता विनयसिंहगणिः, महाशब्दैः स्वाध्यायकारको हर्षसेनगणिः, नित्यैकभक्तपानग्राहक आतापनातत्परः श्रीहर्षसिंहगणिः, श्रीप्रतिष्ठासोमः ॥ इति सोमसौभाग्यकाव्ये दशमस्वर्गे

अस्य सूरेः १८०० साधूनां परिवारः ॥ इति तपागच्छपट्टावलीसूत्रे

श्रीतपागच्छपट्टावली सूत्रम्

स्वोपज्ञया वृत्या समलंकृतम्

(*कर्ता—महोपाध्यायश्रीधर्मसागरगणिः*)

॥६०॥ तपागच्छाधिराजश्रीहीरविजयसूरिगुरुभ्यो नमः ।

अथ गुरुपरिपाटीकथनाय संगतिमाह ।

सिरिमंतो सुहहेऊ, गुरुपरिवाडीइ आगओ संतो ॥
पज्जोसवणाकप्पो, वाइज्जइ तेण तं वुच्छं ॥१॥

व्याख्या—सिरमंत्तोत्ति, यत्तदोर्नित्याभिसंबंधात् येन कारणेन श्रीमान् सश्रीकः श्रियां मंत्रो वा पर्युषणाकल्पो गुरुपरिपाट्या समागतः सन् वाच्यते । उपलक्षणात् श्रूयते च । किंलक्षणः! शुभहेतुः स्वर्गापवर्गकारणं । तेन कारणेनाहं तां गुरुपरिपाटीं वक्ष्ये इत्यन्वयः । श्रीमानिति विशेषणं तीर्थंकरचरित्रस्थविरावलीनामकीर्तनपुरस्सरं साध्वाचारप्रतिपादनेन सर्वेष्वपि मंगलभूतेषु श्रुतेषु सश्रीकत्वमस्यैवेति ख्यापनपरमिति । गुरुपरिपाट्यागत इति च विशेषणं । गुरुपरिपाट्यागतयोगाद्यनुष्ठानविधिनैव वाच्यमानः । एगग्गचित्ताजिणसासणम्मि, पभावणापूअपरायणा जे । इत्यादि विधिना च श्रूयमाणः शुभहेतुर्मोक्षफलहेतुर्नान्यथेति ज्ञापनपरमिति गाथार्थः ॥१॥

गुरुपरिवाडीमूलं, तित्थयरो वध्धमाणनामेणं ॥
तप्पट्टोदयपढमो, सुहम्मनामेण १ गणसामी ॥२॥
श्रीवर्धमानतीर्थंकरः ॥ १—तत्पट्टे श्रीसुधर्मस्वामी ॥

व्याख्या—गुरुपडिवाडिन्ति, गुरुपरिपाट्या मूलमाद्यं कारणं वर्धमाननाम्ना तीर्थंकरः । तीर्थकृतो हि आचार्यपरिपाट्या उत्पत्तिहेतवो भवंति नपुनस्तदंतर्गताः । तेषां स्वयमेवतीर्थप्रवर्तनेन कस्यापि पट्टधरत्वाभावात् ॥

१ तस्मात् श्रीमहावीरस्य पट्टे उदये च प्रथमः श्रीसुधर्मस्वामी पंचमो गणधरः। सच किंलक्षणो ? गणस्वामी यत एकादशानामपि गणधरपदस्थापनावसरे श्रीवीरेण श्रीसुधर्मस्वामिनं पुरस्कृत्य गणोऽनुज्ञातः दुष्प्रसहं यावत् श्रीसुधर्मस्वाम्यपत्यानामेव प्रवर्तनात् ॥ तत्पट्टोदयेत्यत्रोदयपदं प्रथमोदयस्यापि प्रथमाचार्यः श्रीसुधर्मेति सूचकं ॥ स च पंचाषद्वर्षाणि५०गृहस्थपर्याये, त्रिंशद्वर्षाणि ३० श्रीवीरसेवायां, वीरे निर्वृते वा द्वादशवर्षाणि १२ छाद्मस्थ्ये, अष्टौ ८ वर्षाणि केवलिपर्याये चेति, सर्व्वायुः शतमेकं १०० परिपाल्य श्रीवीराद्विंशत्या २० वर्षैः सिध्धिं गतः ॥ श्रीवीरज्ञानोत्पत्तेश्चतुर्दश१४वर्षे जमालिनामा प्रथमो निह्नवः । षोडश१६वर्षे तिष्यगुप्तनामा द्वितीयो निह्नवः ॥ २ ॥

बीओ जंबू २ तईओ, पभवो ३ सिज्जंभवो चउत्थो ४ अ
पंचमओ जस भद्दो ५, छट्ठो संभूय-भद्दगुरू ६ ॥३॥
२—तत्पट्टे श्रीजंबूस्वामी ॥ ३—तत्पट्टे श्रीप्रभवस्वामी ॥
४—तत्पट्टे श्रीशय्यंभवस्वामी ॥ ५—तत्पट्टे श्रीयशोभद्रस्वामी ॥
६—तत्पट्टे श्रीसंभूतविजयश्रीभद्रबाहुस्वामिनौ ॥

व्याख्या—२—बीओ जंबूत्ति, श्रीसुधर्म्मस्वामिपट्टे द्वितीयः श्रीजंबूस्वामी। सच नवनवतिकोटिसंयुक्ता अष्टौ कन्यकाः परित्यज्य श्रीसुधर्म्मस्वाम्यंतिके प्रव्रजितः । स च षोडश१६वर्षाणि गृहस्थपर्याये, विंशतिवर्षाणि २० व्रतपर्याये, चतुश्चत्वारिंशद्वर्षाणि ४४ युगप्रधानपर्याये चेति, सर्वायुरशीतिवर्षाणि ८० परिपाल्य श्रीवीरत् चतुःषष्ठि ६४ वर्षैः सिद्धः ॥ अत्र कविः—

मत्कृते जंबुना त्यक्ता, नवौढा नवकन्यकाः।
तन्मन्ये मुक्तिवध्वाऽन्यो, नवृतो भारतो नरः ॥ १ ॥
चित्तं न नीतं वनिताविकारै—र्वित्तं न नीतं चतुरैश्च चौरैः ॥
यद्देहगेहे द्वितयं निशीथे,जंबूकुमाराय नमोस्तु तस्मै ॥ २ ॥

मण १ परमोहि २ पुलाए ३, आहार ४ खवग ५ उवसमे ६ कप्पे, ॥
संजमतिग ८ केवल ९ सि—ज्झणा य १० जंबुम्मि वुच्छिएणा ॥१॥

३—तईओत्ति, श्रीजंबूस्वामिपट्टे तृतीयः श्रीप्रभवस्वामी। स च त्रिंशद्वर्षाणि ३० गृहस्थपर्याये, चतुश्चत्वारिंशत् ४४ वर्षाणि व्रतपर्याये, एकादश११युग०चेति। सर्वायुः पंचाशीति८५वर्षाणि परिपाल्य, श्रीवीरात् पंचसप्तति७५वर्षातिक्रमे स्वर्गभागिति ॥छ॥

४—सिज्जंभवोत्ति, श्रीप्रभवस्वामिप्रहितसाधुमुखात् "अहोकष्टमहोकष्टं तत्वं न ज्ञायते परम्" इत्यादि वचसा यज्ञस्तंभादधःश्रीशांतिनाथबिंबदर्शनादवाप्तधर्मा प्रव्रज्य, क्रमेण मनकनाम्नः स्वसुतस्य निमित्तं दशवैकालिकं कृतवान्। यतः—

कृतं विकालवेलायां, दशाध्ययनगर्भितम्।
दशवैकालिकमिति—नाम्ना शास्त्रं बभूव तत् ॥ १ ॥
अतःपरं भविष्यंति, प्राणिनो ह्यल्पमेधसः।
कृतार्थास्ते मनकवत्, भवतु त्वत्प्रसादतः ॥ २ ॥
श्रुतांभोजस्य किंजल्कं, दशवैकालिकं ह्यदः।
आचंम्पाचम्पमोदन्ता—मनगारमधुव्रताः ॥ ३ ॥
इति संघोपरोधेन, श्रीशय्यंभवसूरिभिः ॥
दशवैकालिको ग्रंथो, न संवव्रे महात्मभिः ॥४॥ इति।

स चाष्टाविंशति२८वर्षाणि गृहस्थपर्याये, एकादश११व्रते, त्रयोविंशति२३युगप्र०चेति सर्वायुर्द्वाषष्टि६२वर्षाणि परिपाल्य। श्री वीरादष्टनवति९८ वर्षातिक्रमे स्वर्गभाक् ॥छ॥

५ पंचमओत्ति, श्रीशय्यंभवस्वामिपट्टे पंचमः श्री यशोभद्रस्वामी। स च द्वाविंशति२२वर्षाणि गृहे, १४ व्रते, पंचाशत्५०व० युग० सर्वायुः षडशीति८६वर्षाणि परिपाल्य। श्रीवीरादष्टचत्वारिंशदधिके शते १४८ऽतिक्रांते स्वर्गभाक् ॥ छ ॥

६-छट्ठा संभूयत्ति, श्रीयशोभद्रस्वामिपट्टे षष्ठौ पदकैदेशे पदसमुदायोपचारात् संभूतेति, श्रीसंभूतिविजयः भद्दत्ति, श्रीभद्रबाहुस्वामी त्युभावपि षष्ठपदधरावित्यर्थः ॥ तत्र श्री संभूतिविजयो द्विचत्वारिंशत्४२व० गृहे, चत्वारिंशत्४०व्रते, अष्टौ ८ युग० चेति, सर्वायुर्नवति९०वर्षाणि परिपाल्य स्वर्गभाक् ॥

श्रीभद्रबाहुस्वामी तु श्री आवश्यकादिनिर्युक्तिविधाता । व्यंतरीभूतवराहमिहिरकृतसंघोपद्रवनिवारकोपसर्गहरस्तवनेन प्रवचनस्य महोपकारं कृत्वा पंचचत्वारिंशत्४५गृहे, सप्तदश १७ व्रते, चतुर्दश१४युगप्र० चेति सर्वायुः षट्सप्तति७६वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् सप्तत्यधिकशत१७० व स्वर्गभाक् । छ । ॥३॥

सिरिथूलभद्द सत्तम ७, अट्ठमगा महगिरी-सुहत्थी ८ अ ॥
सुट्ठिअ-सुप्पडिबद्ध, कोडिअकाकंदिगा नवमा ९ ॥४॥

७-तत्पट्टे श्रीथूलभद्रस्वामी ॥ ८-तत्पट्टे श्रीआर्यमहागिरि-श्रीआर्यसुहस्तिनौ ॥९-श्रीआर्यसुहस्तिपट्टे श्रीसुस्थितसुप्रतिबद्धौ ॥

व्याख्या--७—सिरिथूलभद्दत्ति, श्रीसंभूतविजय--भद्रबाहुस्वामिनोः सप्तमपट्ट श्रीस्थूलभद्रस्वामी कोशाप्रतिबोधजनितयशोधवलीकृताखिलजगत् सर्व्वजनप्रसिद्धः । चतुर्दशपूर्वविदां पश्चिमः । क्वचिच्चत्वार्यन्त्यानि पूर्वाणि सूत्रतोऽधीतवानित्यपि । स च त्रिंशत्० ३० गृहे, चतुर्विंशति२४व्रते, पंचचत्वारिंशत्४५युगप्रधाने, सर्वायुर्नवनवति९९वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् पंचदशाधिकशतद्वय२१५वर्षे स्वर्गभाक् ॥ अत्र कविः—

श्रीनेमितोपि शकटालसुतं विचार्य, मन्यामहे वयममुं भटमेकमेव ॥
देवोऽद्रिदुर्गमधिरुह्य जिघाय मोहं, यन्मोहनालयमयं तु वशी प्रविश्य॥१॥

श्रीवीरनिर्वाणात् चतुर्दशाधिकवर्षशतद्वये २१४ आषाढाऽऽचार्यात् अव्यक्त नाम तृतीयो निह्नवः॥छ॥

८--अट्ठमगत्ति, श्रीस्थूलभद्रपट्टेऽष्टमौ पट्टधरौ श्रीआर्यमहागिरिः श्रीसुहस्ती चेत्युभावपि गुरुभ्रातरौ । तत्र श्रीआर्यमहागिरिर्जिनकल्पिकतुलनामारूढो, जिनकल्पिककल्पः । त्रिंशत् ३० गृहे, चत्वारिंशत् ४० व्रते, त्रिंशत् ३० युग०, सर्वायुः शत १०० व० परिपाल्य स्वर्गभाक् ॥

द्वितीयेनाऽऽर्यसुहस्तिना पूर्वभवे द्रमकीभूतोपि संप्रतिजीवः प्रव्राज्य त्रिखंडाधिपतित्वं प्रापितः । येन संप्रतिना त्रिखंडमितापि मही जिनप्रासादमंडिता विहिता साधुवेषधारिनिजवंठपुरुषप्रेषणेनाऽनार्यदेशेपि साधुविहारः कारितः ॥ सच आर्यसुहस्ती त्रिंशत्३०गृहे, चतुर्विंशति२४व्रते, षट्चत्वारिंशत् ४६ युग प्र० सर्वायुः शतमेकं १०० परिपाल्य श्रीवीरात् एकनवत्यधिकशतद्वये २९१ स्वर्गभाक् ॥

यद्यपि श्रीस्थूलभद्रस्य पंचदशाधिकशतद्वय२१५वर्षे स्वर्गो गुर्वावल्यनुसारेणोक्तः । श्रीमहागिरि--सुहस्तिनौ तु त्रिंशत्३०वर्षगृहस्थपर्यायावपि शत१००वर्षजीविनौ दुष्षमासंघस्तोत्रयंत्रकानुसारेणोक्तौ ॥ तथा च सति श्रीआर्यसुहस्ती श्रीस्थूलभद्रदीक्षितो न संपद्येत, तथापि गृहस्थपर्यायवर्षाणि न्यूनानि व्रतवर्षाणि वाधिकानीति विभाव्य घटनीयमिति ॥

तथा श्रीसुहस्तिदीक्षिताऽवंतिसुकुमालमृतिस्थाने तत्सुतेन देवकुलं कारितं तस्य च "महाकाल" इति नाम संजातं ।

श्रीवीरनिर्वाणात् विंशत्यधिकवर्षशतद्वये २२० अश्वमित्रात् सामुच्छेदिकनामा चतुर्थो निह्नवः । तथा अष्टविंशत्यधिकशतद्वये २२८ गंगनाम्ना द्विक्रियः पंचमो निह्नवः ॥ छ ॥

९--सुट्ठिअत्ति, श्री सुहस्तिनः पट्टे नवमौ श्रीसुस्थित--सुप्रतिबध्धौ, कोटिक--काकंदिकौ । कोटिशःसूरिमंत्रजापात् कोट्यंशसूरिमंत्रधारित्वाद्वा । ताभ्यां कौटिक नाम्ना गच्छोऽभूत् अयं भावः--श्रीसुधर्मस्वामिनोऽष्टौसूरीन् यावत् निर्ग्रंथाः साधवोऽनगारा इत्यादि सामान्यार्थाभिधायिन्याख्याऽसीत् नवमे च तत्पट्टे कौटिका इति विशेषार्थाववोधकं द्वितीयं नाम प्रादुर्भूतं ॥

श्रीआर्यमहागिरेस्तु शिष्यौ बहुल-बलिस्सहौ यमलभ्रातरौ-तस्य बलिस्सहस्य शिष्यः स्वातिः तत्वार्थादयोग्रंथास्तु तत्कृता एव संभाव्यंते ।

तच्छिष्यः श्यामाचार्यः प्रज्ञापनाकृत् । श्रीवीरात् षट्सप्तत्यधिकशतत्रये ३७६ स्वर्गभाक् ॥ तच्छिष्यः सांडिल्यो जीतमर्यादाकृदिति नंदिस्थविरावल्यामुक्तमस्ति । परं सा पट्टपरंपराऽन्येति बोध्यं ॥४॥

सिरिइंददिन्नसूरी, दसमो १० इक्कारसो अ दिन्नगुरू ११॥
बारसमो सीहगिरी १२, तेरसमो वयरसामि गुरू १३॥५॥
१०-तत्पट्टे श्री इंद्रदिन्नसूरिः ११-तत्पट्टे श्रीदिन्नसूरिः ॥
१२-तत्पट्टे श्रीसीहगिरिः ॥ १३-तत्पट्टे श्री वज्रस्वामी ॥

व्याख्या-१० सिरि इंदत्ति, श्री सुस्थित-सुप्रतिबद्धयोः पट्टे दशमः श्रीइन्द्रदिन्नसूरिः ॥ अत्रांतरे श्रीवीर० त्रिपंचाशदधिकचतुःशतवर्षातिक्रमे ४५३ गर्दभिल्लोच्छेदी कालकसूरिः ॥ श्री वी० त्रिपंचाशदधिकचतुःशत व०४५३ भृगुकच्छे आर्यखपुटाऽऽचार्य इति पट्टावल्यां । प्रभावकचरित्रे तु चतुरशीत्यधिकचतुःशत४८४वर्षे आर्यखपुटाचार्यः ॥ सप्तषष्ठ्यधिक चतुःशत४६७वर्षे आर्यमंगुः ॥ वृद्धवादी पादलिप्तश्चात्र । तथा सिद्धसेन दिवाकरो, येनोज्जयिन्यां महाकालप्रसादरुद्रलिंगस्फोटनं विधाय कल्याणमंदिरस्तवेन श्रीपार्श्वनाथबिंबं प्रकटीकृतं, श्रीविक्रमादित्यश्च प्रतिबोधितस्तद्राज्यं तु श्रीवीर० सप्ततिवर्षशतचतुष्टये ४७० संजातं । तानि वर्षाणि चैवम्—

जं रयणिं कालगओ, अरिहा तित्थंकरो महावीरो ।
तं रयणिं अवणिवई, अहिसित्तो पालओ राया ॥१॥
सट्ठी पालयरण्णो६०, पणवण्णसयं तु होइ नंदाणं १५५॥
अट्ठसयं मुरियाणं १०८, तीस चिअ पूसमित्तस्स ३० ॥ २ ॥
बलमित्त-भाणुमित्ता, सट्ठी ६० वरिसाणि चत्त नहवाणे ४० ॥
तह गद्दभिल्लरज्जं, तेरस १३ वरिस सगस्स चउ (वरिसा) ४ ॥ ३ ॥छ॥

११-इक्कारसोत्ति, श्रीइन्द्रदिन्नसूरिपट्टे एकादशः श्रीदिन्नसूरिः ॥छ॥

१२-बारसमोत्ति, श्रीदिन्नसूरिपट्टे द्वादशमः श्रीसीहगिरिः ॥छ॥

१३--तेरसमोत्ति, श्रीसीहगिरिपट्टे त्रयोदशः श्रीवज्रस्वामी। यो बाल्यादपि जातिस्मृतिभाग्, नभोगमनविद्यया संघरक्षाकृत्, दक्षिणस्यां बौद्धराज्ये जिनेंद्रपूजानिमित्तं पुष्पाद्यानयनेन प्रवचनप्रभावनाकृत् देवाभिवंदितो दशपूर्वविदामपश्चिमो वज्रशाखोत्पत्तिमूलं ।। तथा स भगवान् षण्णवत्यधिकचतुःशत४९६वर्षांते जातः सन् अष्टौ ८ वर्षाणि गृहे, चतुश्चत्वारिंशत् ४४ वर्षाणि व्रते, षट्त्रिंशत्३६वर्षाणि युगप्र० सर्वायुरष्टाशीति८८वर्षाणि परिपाल्य, श्री वीरात् चतुरशीत्यधिकपंचशत५८४ वर्षान्ते स्वर्गभाक् ॥ श्रीवज्रस्वामिनो दशपूर्व-चतुर्थसंहनन-संस्थानानां व्युच्छेदः ।

चतुष्कुलसमुत्पत्ति—पितामहमहं विभुं
दशपूर्वविधिं वंदे, वज्रस्वामिमुनीश्वरं ॥१॥

अत्र श्रीआर्यसुहस्तिश्रीवज्रस्वामिनोरंतराले १ श्रीगुणसुंदरसूरिः, २ श्रीकालिकाचार्यः ३ श्रीस्कंदियाचार्यः ४ श्रीरेवतीमित्रसूरिः ५ श्रीधर्मसूरिः ६ श्रीभद्रगुप्ताचार्यः ७ श्रीगुप्ताचार्यश्चेति क्रमेण युगप्रधानसप्तकं बभूव। तत्र श्रीवीरात् त्रयस्त्रिंशदधिकपंचशत५३३वर्षे श्रीआर्यरक्षितसूरिणा श्रीभद्रगुप्ताचार्यो निर्यामितः स्वर्गभागिति पट्टावल्यां दृश्यते। परं दुषमासंघस्तवयंत्रकानुसारेण चतुश्चत्वारिंशदधिकपंचशत५४४वर्षातिक्रमे श्रीआर्यरक्षितसूरीणां दीक्षा विज्ञायते तथा चोक्तसंवत्सरे निर्यापणं न संभवतीत्येतद्बहुश्रुत गम्यं ॥

तथाऽष्टचत्वारिंशदधिकपंचशतवर्षांते ५४८ त्रिराशिकजित् श्रीगुप्तसूरिः स्वर्गभाक् ॥ तथा श्रीवीरात् सपादपंचशत५२५वर्षे श्रीशत्रुंजयोच्छेदः सप्तत्यधिकपंचशत५७०वर्षे जावड्युद्धार इति ।५॥

सिरिवज्जसेणसूरी, १४, चाउद्दसओ चंदसूरि पंचदसो १५ ॥
सामंतभद्दसूरी, सोलसमो १६ रण्णवासरई १६ ॥ ६
१४ — तत्पट्टे श्रीवज्रसेनः ॥ १५ — तत्पट्टे श्रीचंद्रसूरिः ॥
१६ - तत्पट्टे श्रीसामंतभद्रसूरिः (वनवासी) ॥

व्याख्या—१४ सिरिवज्जत्ति, श्रीवज्रस्वामिपट्टे चतुर्दशः श्रीवज्रसेनसूरिः॥ स 'च' दुर्भिक्षे श्री वज्रस्वामिवचसा सोपारके गत्वा जिनदत्तगृहे ईश्वरीनाम्न्यां तद्भार्यया लक्षपाकभोज्ये विषनिक्षेपविधानचिंतनश्रावणे सति प्रातः सुकालो भावीत्युक्त्या (क्त्वा) विषं निवार्य, १ नागेंद्र २ चंद्र ३ निर्वृति ४ विद्याधराख्यान् चतुरः सकुटुंबानिभ्यपुत्रान् प्रव्राजितवान्। तेभ्यश्च स्वस्वनामांकितानि चत्वारि कुलानि संजातानीति ॥ स च श्रीवज्रसेनो नव ९ वर्षाणिगृहे, षोडषाधिकशत११६व्रते त्रीणि ३ वर्षाणियुग० सर्वायुः साष्टाविंशतिशतं १२८ परिपाल्य श्रीवीरात् विंशत्यधिकषट्शत६२०वर्षांते स्वर्गभाक् ॥

अत्र श्रीवज्रस्वामिश्रीवज्रसेनयोरंतरालकाले श्रीमदार्यरक्षितसूरिः श्रीदुर्बलिकापुष्पश्चेति क्रमेण युगप्रधानद्वयं संजातं॥ तत्र श्रीमदार्यरक्षितसूरिः सप्तनवत्यधिकपंचशत ५९७ वर्षांते स्वर्गभागिति पट्टावलयादौ दृश्यते। परमावश्यकवृत्यादौ श्रीमदार्यरक्षितसूरीणां स्वर्गगमनानंतरं चतुरशीत्यधिकपंचशत५८४वर्षान्ते सप्तमनिह्नवोत्पत्तिरुक्तास्ति । तेनैतद्बहुश्रुतगम्यमिति ॥ नवाऽधिक षट्शत ६०९ वर्षान्ते दिगंबरोत्पत्तिः ॥

१५—चंदसूरित्ति, श्रीवज्रसेनपट्टे पंचदशः श्रीचंद्रसूरिः ॥ तस्माच्चन्द्रगच्छ इति तृतीयं नाम प्रादुर्भूतं । तस्माच्च क्रमेणाऽनेकगणहेतवोऽनेके सूरयो बभूवांसः ॥

१६—सामन्तभद्दत्ति, श्रीचंद्रसूरिपट्टे षोडशः श्रीसामंतभद्रसूरिः ॥ स च पूर्वगतश्रुतविशारदो वैराग्यनिधिर्निर्ममतया देवकुलवनादिष्ववऽप्यऽवस्थानात् लोके वनवासीत्युक्तस्तस्माच्चतुर्थं नाम वनवासीति प्रादुर्भूतं ॥ छ ॥६॥

सत्तरस बुड्ढदेवो १७, सूरी पज्जोअणो अढारसमो १८ ॥
एगुणवीसइ इमो सूरी सिरिमाणदेवगुरू १९ ॥७॥

१७—तत्पट्टे श्रीवृद्धदेवसूरिः ॥ १८—तत्पट्टे श्रीप्रद्योतनसूरिः ।
१९—तत्पट्टे श्रीमानदेवसूरिः ॥

व्याख्या—१७ सत्तरत्ति, श्रीसामंतभद्रसूरिपट्टे सप्तदशः श्रीवृद्धदेवसूरिः। वृद्धो देवसूरिरिति ख्यातः। श्री वीरात् पंचनवत्यधिकपंचशत५६५वर्षातिक्रमे कोरंटके नाहडमंत्रिनिर्मापितप्रासादे प्रतिष्ठाकृत् ॥

श्रीजज्जगसूरिणा च सप्तत्यधिकषट्शतवर्षे ६७० सत्यपुरे नाहडनिर्मितप्रसादे श्रीमहावीरः प्रतिष्ठितः ॥

१८—सुरिपज्जोअणत्ति, श्रीवृध्धदेवसूरिपट्टे ऽष्टादशः श्रीप्रद्योतनसूरिः ॥

१६—एगूणत्ति, श्रीप्रद्योतनसूरिपट्टे एकोनविंशतितमः श्रीमानदेव सूरिः ॥ सूरिपदस्थापनाऽवसरे यत्स्कंधयोरुपरि सरस्वतीलक्ष्म्यौ साक्षाद्विद्य चरित्रादस्यभ्रंशो भावीति विचारणया विषण्णचित्तं गुरुं विज्ञाय येन भक्तकुलभिक्षाः सर्वाश्च विकृतयस्त्यक्ताः ॥ तत्तपसा नड्डुलपुरे १-पद्मा २-जया ३-विजया ४-अपराजिताऽभिधानाभिः देवीभिः पर्युपासमानं दृष्ट्वा कथं नारीभिः परिकरितोऽयं सूरिरिति शंकापरायणः कश्चित् मुग्धस्ताभिरेव शिक्षित इति॥७॥

सिरिमाणतुंगसूरी २०, वीसइमो एगवीस सिरिवीरो २१ ॥
बावीसो जयदेवो २२, देवाणंदो य तेवीसो २३ ॥ ८ ॥
२०—तत्पट्टे श्रीमानतुंगसूरिः ॥ २१—तत्पट्टे श्रीवीरसूरिः ॥
२२—तत्पट्टे श्रीजयदेवसूरिः ॥ २३—तत्पट्टे श्रीदेवानंदसूरिः ॥

व्याख्या—२० सिरिमाणतुंगत्ति, श्रीमानदेवसूरिपट्टे विंशतितमः श्रीमानतुंगसूरिः ॥ येन भक्तामरस्तवनं कृत्वा बाण-मयूरपंडितविद्याचमत्कृतोऽपि क्षितिपतिः प्रतिबोधितः। भयहरस्तवनकरणेन च नागराजो वशीकृतः। भक्तिभरेत्यादि स्तवनानि च कृतानि ॥ श्रीप्रभावकचरित्रे प्रथमं श्रीमानतुंगचरित्रमुक्तं, पश्चाच्च श्रीदेवसूरिशिष्यश्रीप्रद्योतनसूरिशिष्यश्रीमानदेवसूरिप्रबंधा उक्ताः। परं तत्र नाऽऽशंका यतस्तत्राऽन्येपि प्रबंधा व्यस्ततयोक्ता दृष्यंते ॥

२१—एगवीसति, श्रीमानतुंगसूरिपट्टे एकविंशतितमः श्रीवीरसूरिः॥ स च श्रीवीरात् सप्ततिसप्तशत७७०वर्षे, विक्रमतः त्रिशती३००वर्षे नागपुरे श्रीनमिप्रतिष्ठाकृत्। यदुक्तम्—

नागपुरे नमिभवन---प्रतिष्ठया महितपाणिसौभाग्यः॥
अभवद्वीराचार्य---स्त्रिभिः शतैः साधिके राज्ञः॥ १॥

२२---बावीसत्ति, श्रीवीरसूरिपट्टे द्वाविंशतितमः श्रीजयदेवसूरिः ॥छ॥

२३---देवाणंदोत्ति, श्रीजयदेवसूरिपट्टे त्रयोविंशतितमः श्रीदेवानंदसूरिः॥ अत्रांतरे श्रीवीरात् पंचचत्वारिंशदधिकाष्टशत८४५वर्षातिक्रमे वलभीभंगः॥ द्व्यशीत्यधिकाष्टशत८८२वर्षातिक्रमे चैत्यस्थीतिः॥ षडशीत्यधिकाष्टशत८८६वर्षातिक्रमे ब्रह्मद्वीपिकाः॥ ८॥

॥ चउवीसो सिरिविक्कम २४, नरसिंहो पंचवीस २५ छव्वीसो॥
सूरीसमूद्द २६ सत्ता—वीसो सिरिमाणदेवगुरू २७॥ ९॥
२४—तत्पट्टे श्रीविक्रमसूरिः॥ २५—तत्पट्टे श्रीनरसिंहसूरिः॥
२६—तत्पट्टे श्रीसमुद्रसूरिः॥ २७—तत्पट्टे श्रीमानदेवसूरिः॥

व्याख्या---२४ चउवीसोत्ति, श्रीदेवानंदसूरिपट्टे चतुर्विंशतितमः श्रीविक्रमसूरिः॥

२५---नरसिंहोत्ति, श्रीविक्रमसूरिपट्टे पंचविंशतितमः श्रीनरसिंहसूरिः॥ यतः---नरसिंहसूरिरासीदतोखिलग्रंथपारगो येन॥

यक्षो नरसिंहपुरे, मांसरतिं त्याजितः स्वगिरा॥ १॥

२६—छव्वीसोत्ति, श्रीनरसिंहसूरिपट्टे षडिविंशतितमः श्रीसमुद्रसूरिः॥

खोमाणराजकुलजोपि समुद्रसूरि—र्गच्छं शशास किल यः प्रवणप्रमाणी॥
जित्वा तदा क्षपणकान् स्ववशं वितेने, नागह्रदे भुजगनाथनमस्यतीर्थं॥१॥

२७—सत्तावीसोत्ति, श्रीसमुद्रसूरिपट्टे सप्तविंशतितमः श्रीमानदेवसूरिः ॥ विद्यासमुद्रहरिभद्रमुनीद्रमित्रं, सूरिर्बभूव पुनरेवहि मानदेवः ॥
मांद्यात्प्रपातमपि योऽनघसूरिमंत्रं, लेभेंऽबिकामुखगिरा तपसो-
ज्जयंते ॥ १ ॥

श्रीवीरात् वर्षसहस्रे१००० गते सत्यमित्रे पूर्वव्यवच्छेदः ॥

अत्र च श्री १ नागहस्ती २ रेवतीमित्र ३ ब्रह्मद्वीपो ४ नागार्जुनो ५ भूतदिन्नः ६ श्रीकालकसूरिश्चेति षट् युगप्रधाना यथाक्रमं श्रीवज्रसेनसत्यमित्रयोरंतरालकालवर्तिनो बोध्याः ॥ एषु च युगप्रधनशक्राभिवंदितप्रथमानुयोगसूत्रणासूत्रधारकल्पश्रीकालिकाचार्यैः श्रीवीरात् त्रिनवत्यधिकनवशत९९३ वर्षातिक्रमे पंचमीतश्चतुर्थ्यां पर्युषणापर्वाऽऽनीतमिति॥ श्रीवीरात् पंचपंचाशदधिकसहस्र१०५५वर्षे, वि० पंचाशीत्यधिकपंचशत५८५वर्षे याकिनीसूनुः श्रीहरिभद्रसूरिः स्वर्गभाक् ॥ पंचदशाधिकैकादशशत१११५वर्षे श्रीजिनभद्रगणिर्युगप्रधानः ॥ अयं च जिनभद्रियध्यानशतकादेर्हरिभद्रसूरिभिर्वृत्तिकरणाद्भिन्न इति पट्टावल्यां । परं तस्य चतुरुत्तरशतवर्षायुष्कत्वेन श्रीहरिभद्रसूरिकालेपि संभवान्नाऽऽशंकावकाश इति ॥

॥ अट्ठावीसो विबुहो २८, एगुणतीसे गुरू जयाणंदो २९॥
तीसो रविप्पहो ३० इग-तीसो जसदेव सूरिवरो ३१ ॥ १०॥

२८—*तत्पट्टे श्रीविबुधप्रभसूरिः* ॥ २९—*तत्पट्टे श्रीजयानंदसूरिः* ॥
३०—*तत्पट्टे श्री रविप्रभसूरिः* ॥ ३१—*तत्पट्टे श्रीयशोदेवसूरिः* ॥

व्याख्या -२८ अट्ठावीसोत्ति, श्रीमानदेवसूरिपट्टेऽष्टावींशति- २८ तमः श्रीविबुधप्रभसूरिः ॥

२९—एगुणतीसोत्ति, श्रीविबुधप्रभसूरिपट्टे एकोनत्रिंशत्तमः जयानंदसूरिः ॥

३०—तीसोरवित्ति, श्रीजयानंदसूरिपट्टे त्रिंशत्तमः श्रीरविप्रभसूरिः ॥ स च श्रीवीरात् सप्तत्यधिकैकादशशत११७०वर्षे, वि० सप्तशत७००वर्षे

नड्डुलपुरे श्रीनेमिनाथप्रासादप्रतिष्ठाकृत् । श्रीवी० नवत्यधिकैकादशशत ११९० वर्षे श्रीउमास्वातिर्युगप्रधानः ॥

३१—इगतीसोत्ति, श्रीरविप्रभसूरिपट्टे एकत्रिंशत्तमःश्रीयशोदेवसूरिः॥ अत्र च श्रीवीरात् द्विसप्तत्यधिकद्वादशशत१२७२वर्षे, वि० द्व्युत्तराष्टशत-वर्षे ८०२ अणहिल्लपुरपत्तनस्थापना वनराजेन कृता ॥ श्रीवीर० सप्तत्यधिक द्वादशशत१२७०वर्षे, वि० अष्टशत८००वर्षे भाद्रशुक्लतृतीयायां बप्पभट्टे-र्जन्म, येनामराजा प्रतिबोधितः । स च श्रीवी० पंचषष्ठ्यधिकत्रयोदशशत-१३६५वर्षे वि० पंचनवत्यधिकाष्टशत८९५वर्षे भाद्रशुक्लषष्ठयां स्वर्गभाक् ॥१०॥

॥ बत्तीसो पजुण्णो ३२, तेतीसो माणदेव जुगपवरो ३३ ॥
चउतीस विमलचंदो ३४, पणतीसुज्जोअणो सूरी ३५ ॥११॥

३२—तत्पट्टे श्रीप्रद्युम्नसूरिः ३३—तत्पट्टे श्रीमानदेवसूरिः ॥
३४—तत्पट्टे श्रीविमलचन्द्रसूरिः ३५–तत्पट्टेश्री उद्योतनसूरिः ॥

व्याख्या—३२ बत्तीसोत्ति, श्रीयशोदेवसूरिपट्टे द्वात्रिंशत्तमः श्रीप्रद्युम्न सूरिः ॥

३३—तेत्तीसोत्ति, श्रीप्रद्युम्नसूरिपट्टे त्रयस्त्रिंशत्तमः श्रीमानदेवसूरिः॥ उपधानवाच्यग्रंथविधाता ।

३४—चउतीसत्ति, श्रीमानदेवसूरिपट्टे चतुस्त्रिंशत्तमः श्रीविमलचंद्र-सूरिः ॥ ×

× मथुरातः समागतैः श्रीविमलचन्द्रगणिभिः श्रीवीरसूरिः दीक्षितः अंग-विद्यया भूषितश्च पश्चात्तैः विमलगिरौ अनशनं प्रपेदे ॥ वीरसूरिस्वर्गमनं तु विक्रम-स्य ९९१ वर्षे । इतिप्रभावकचरित्रे वीरसूरिप्रबंधे ।

ततः प्रसिद्धोऽजनि चित्रकूटे, सहेमसिद्धिर्विमलेन्दुसूरिः ।
अपूजयद्यं विषमेपि वादे, सद्योजिते गोपगिरेनरेन्द्रः ॥४४॥

इति गुर्वावल्याम्, क्रियारत्नसमुच्चयप्रशस्त्यां च ।

३५—पणतीसोत्ति, श्रीविमलचंद्रसूरिपट्टे पंचत्रिंशत्तमः श्रीउद्योतन सूरिः ॥ स चाऽर्बुदाचलयात्रार्थं पूर्वावनितःसमागतः । टेलिग्रामस्य सीम्नि पृथोर्वटस्यछायायामुपविष्टो निजपट्टोदयहेतुं भव्यमुहूर्तमवगम्य श्रीवीरात् चतुष्षठ्यधिकचतुर्दशात१४६४वर्षे, वि० चतुर्नवत्यधिकनवशत ९९४ वर्षे निजपट्टे श्रीसर्वदेवसूरिप्रभृतानष्टौ सूरीन् स्थापितवान् । केचित्तु सर्वदेवसूरिमेकमेवेति वदंति ॥ वटस्याऽधः सूरिपदकरणात् वटगच्छ इति पंचमनाम लोकप्रसिध्धं । प्रधानशिष्यसंतत्या ज्ञानादिगुणैः प्रधानचरितैश्च बृहत्वाद्बृहद्गच्छ इत्यपि ॥११॥

॥ सिरि सव्वदेवसूरी, छत्तीसो ३६ देवसूरि सगतीसो ३७ ॥
अडतीसइमो सूरी पुणोवि सिरिसव्वदेवगुरू ३८॥१२॥

३६–तत्पट्टे श्रीसर्वदेवसूरिः ३७ तत्पट्टे श्रीदेवसूरिः ॥
३८—तत्पट्टे श्रीसर्वदेवसूरिः ॥

व्याख्या—३६ सिरिसव्वत्ति, श्रीउद्योतनसूरिपट्टे षट्त्रिंशत्तमः श्रीसर्वदेवसूरिः ॥ केचित् श्रीप्रद्युम्नसूरिमुपधानग्रंथप्रणेतृश्रीमानदेवसूरिं च पट्टधरतया न मन्यंते तदभिप्रायेण चतुस्त्रिंशत्तम इति ॥ स च गौतमवत् सुशिष्यलब्धिमान् । वि० दशाधिकदशशत१०१०वर्षे रामसैन्यपुरे श्री चंद्रप्रभप्रतिष्ठाकृत् । चंद्रावत्यां निर्मापितोत्तुंगप्रासादं कुंकुणमंत्रिणं स्वगिरा प्रतिबोध्य प्राव्राजयत् ॥ यदुक्तं—

चरित्रशुध्धिं विधिवज्जिनागमा—द्विधाय भव्यानभितः प्रबोधयन् ॥
चकार जैनेश्वरशासनोन्नतिं, यः शिष्यलब्ध्याभिनवो नु गौतमः ॥१॥

नृपाद्दशाग्रे शरदां सहस्रे १०१०, यो रामसैन्याह्वपुरे चकार ॥
नाभेयचैत्येऽष्टमतीर्थराज—बिंबप्रतिष्ठां विधिवत् सदर्च्यः ॥२॥

चंद्रावतीभूपतिनेत्रकल्पं, श्रीकुंकुणं मंत्रिणमुच्चऋध्धिं ॥
निर्मापितोत्तुंगविशालचैत्यं, योऽदीक्षयत् बुध्धगिरा प्रबोध्य ॥३॥

तथा वि० एकोनत्रिंशदधिकदशशत१०२९वर्षे धनपालेन देशीनाममाला कृता। वि० षण्णवत्यधिकसहस्र१०९६वर्षे श्रीउत्तराध्ययनटीकाकृत् थिरापद्रगच्छीयवादिवेतालश्रीशांतिसूरिः स्वर्गभाक् ॥

३७—देवसूरित्ति, श्रीसर्वदेवसूरिपट्टे सप्तत्रिंशत्तमः श्रीदेवसूरिः ॥ रूपश्रीरिति भूपप्रदत्तविरुदधारी ॥

३८—अडतीसइमोत्ति, श्रीदेवसूरिपट्टेऽष्टत्रिंशत्तमः पुनः श्रीसर्वदेव सूरिः यो यशोभद्रनेमिचंदादीनष्टौ सूरीन् कृतवान् ॥छ॥१२॥

॥ एगुणचालीसइमो, जसभद्दो नेमिचंदगुरुबंधू ३९ ॥
चालीसो मुणिचंदो ४०, एगुआलीसो अजिअदेवो ४१ ॥ १३॥
३९—तत्पट्टे श्रीयशोभद्रसूरि-श्रीनेमिचंद्रसूरी ॥
४०—तत्पट्टे श्रीमुनिचंद्रसूरिः ॥ ४१—तत्पट्टे श्रीअजितदेवसूरिः ॥

व्याख्या—३९ एगुणत्ति, श्रीसर्वदेवसूरिपट्टे एकोनचत्वारिंशत्तमौ श्रीयशोभद्र-नेमिचंद्रौ द्वौ सूरी गुरुभ्रातरौ ॥ वि० पंचत्रिंशदधिकैकादशशत ११३५वर्षे, केचित् एकोनचत्वारिंशदधिकैकादशशत११३९वर्षे नवांगवृत्ति कृत् श्रीअभयदेवसूरिः स्वर्गभाक् ॥ तथा कूर्च्चपुरगच्छीयचैत्यवासीजिनेश्वर सूरिशिष्यो जिनवल्लभश्चित्रकूटे षट्कल्याणकप्ररूपणया निजमतं प्ररूपितवान् ॥

४०—चालीसोत्ति, श्रीयशोभद्रसूरि-श्रीनेमिचंद्रसूरिपट्टे चत्वारिंशत्तमः श्रीमुनिचंद्रसूरिः ॥ स भगवान् यावज्जीवमेकसौवीरपायी। प्रत्याख्यात सर्वविकृतिकः। श्रीहरिभद्रसूरिकृताऽनेकांतजयपताकाद्यनेकग्रंथपंजिकोपदेशपदवृत्यादिविधानेन तार्किकशिरोमणितया ख्यातिभाक् ॥

यदुक्तम्—सौवीरपायीति तदेकवारि-पानाद्विधिज्ञो विरुदं बभार ॥
जिनागमांभोनिधिधौतबुद्धिर्यः शुध्धचारित्रिषु लब्धरेखः ॥१॥

संविज्ञमौलिर्विकृतीश्चसर्वा - स्त्यत्याज देहेप्यममः सदा यः ॥
विद्वद्विनेयाभिवृतः प्रभाव—प्रभागुणौघैः किल गौतमाभः ॥ २ ॥
हरिभद्रसूरिरचिताः, श्रीमदनेकांतजयपताकाद्याः ॥
ग्रंथनगा विबुधानामप्यधुना दुर्गमा येऽत्र ॥ ३ ॥
सत्पंजिकादिपद्या—विरचनाया भगवता कृता येन ॥
मंदधियामपि सुगमा—स्ते सर्व्वे विश्वहितबुध्या ॥ ४ ॥
अष्टहयेश११७८मिताब्दे, विक्रमकालाद्दिवं गतो भगवान् ॥
श्रीमुनिचंद्रमुनींद्रो, ददातु भद्राणि संघाय ॥ ५ ॥

अनेन चानंदसूरिप्रभृतयोऽनेके निजबांधवाः प्रव्राज्य सूरीकृताः ॥ अयं च श्रीमुनिचंद्रसूरिः श्रीनेमिचंद्रसूरिगुरुभ्रातृश्रीविनयचंद्रोपाध्यायस्य शिष्यः श्रीनेमिचंद्रसूरिभिरेव गणनायकतया स्थापितः ॥ यदुक्तं—

गुरुबंधुविनयचंद्राध्यापकशिष्यं स नेमिचंद्रगुरुः ॥
यं गणनाथमकार्षीत्, स जयति मुनिचंद्रसूरिरिति ॥ १ ॥

अत्र च एकोनषष्ठ्यधिकैकादशशत११५९वर्षे पौर्णिमीयकमतोत्पत्तिः तत्प्रतिबोधाय च मुनिचंद्रसूरिभिः पाक्षिकसप्ततिका कृतेति ॥

तथा श्रीमुनिचंद्रसूरिशिष्याः श्रीअजितदेवसूरि—वादिश्रीदेवसूरिप्रभृतयः ॥ तत्र वादिश्रीदेवसूरिभिः श्रीमदणहिल्लपुरपत्तने जयसिंहदेवराजस्याऽनेकविद्वज्जनकलितायां सभायां चतुरशीतिवादलब्धजययशसं दिगंबरचक्रवर्तिनं वादलिप्सुं कुमुदचंद्राचार्यं वादे निर्जित्य श्रीपत्तने दिगंबरप्रवेशो निवारितोऽद्यापि प्रतीतः ॥ तथा वि० चतुरधिकद्वादशशत१२०४ वर्षे फलवर्धिग्रामे चैत्यबिंबयोः प्रतिष्ठा कृता। तत्तीर्थं तु संप्रत्यपि प्रसिध्धं॥ तथा आरासणे च श्रीनेमिनाथप्रतिष्ठा कृता॥ चतुरशीतिसहस्र८४००० प्रमाणः स्याद्वादरत्नाकरनामा प्रमाणग्रंथः कृतः ॥ येभ्यश्च यन्नाम्नैव ख्यातिमत् चतुर्विंशतिसूरिशाखं बभूव ॥ एषां च वि० चतुस्त्रिंशदधिके एकादशशत११३४वर्षे जन्म, द्विपंचाशदधिके११५२ दीक्षा, चतुःसप्तत्यधिके११७४ सूरिपदं, षड्विंशत्यधिकद्वादशशत१२२६वर्षे श्रावणवदिसप्तम्यां ७ गुरौ स्वर्गः ॥

तत्समये श्रीदेवचंद्रसूरिशिष्यस्त्रिकोटिग्रंथकर्ता कलिकालसर्वज्ञ-ख्यातिमान् श्रीहेमचंद्रसूरिः तस्य वि० पंचचत्वारिंशदधिके एकादशशत-११४५वर्षे कार्तिकशुदिपूर्णिमायां १५ जन्म, पंचाशदधिके ११५० व्रतं, षड्षष्ठ्यधिके११६६ सूरिपदं, एकोनित्रिंशदधिकद्वादशशत१२२९वर्षे स्वर्गः ॥

४१—एगुआलीसोत्ति, श्रीमुनिचंद्रसूरिपट्टे एकचत्वारिंशत्तमः श्री-अजितदेवसूरिः ॥ तत्समये वि० चतुरधिकद्वादशशत१२०४वर्षे खरतरोत्पत्तिः ॥× तथा वि० त्रयोदशाधिके द्वादशशत१२१३वर्षे आंचलिकमतोत्पत्तिः ॥ वि० षट्त्रिंशदधिके १२३६ सार्धपौर्णिमीयकोत्पत्तिः ॥ वि० पंचाशदधिके१२५० आगमिकमतोत्पत्तिः ॥ श्रीवीरात् द्विनवत्यधिकषोडशत१६९२वर्षे बाहडोध्धारः +॥ छ ॥ १३ ॥

॥ बायालु विजयसीहो ४२, तेआला हुंति एगगुरुभाया ॥
सोमप्पह–मणिरयणा ४३, चउआलीसो अ जगचंदो ॥४४॥ १४ ॥
४२–तत्पट्टे श्रीविजयसिंहसूरिः ॥ ४३–तत्पट्टे श्रीसोमप्रभसूरिः श्रीमणिरत्नसूरिश्च ॥ ४४—तत्पट्टे श्रीजगच्चन्द्रसूरिः ॥

व्याख्या—४२–बायालुत्ति,श्रीअजितदेवसूरिपट्टे द्विचत्वारिंशत्तमः ॥ श्रीविजयसिंहसूरिः ॥ विवेकमंजरीशुध्धिकृत् ॥

यस्य प्रथमः शिष्यः, शतार्थितया विख्यातः ॥
श्रीसोमप्रभसूरिः, द्वितीयस्तु मणिरत्नसूरिः ॥ १ ॥

४३—तेआलत्ति, श्रीविजयसिंहसूरिपट्टे त्रयश्चत्वारिंशत्तमौ श्री सोमप्रभसूरि—श्रीमणिरत्नसूरी ॥

× वि० सं० १२०४वर्षे पत्तने पौषधशालि–वनवासिनोर्विवादे कवलागच्छः खरतरगच्छश्चेति नामनी अभूताम् ।

इति पूरणचंदजी नहार संग्रहित पट्टावल्यां
(श्रीजैन श्वे० कों० हे० पु० १४ अं० ४, ५, ६, पत्र १६३ मुद्रितयां)

+ श्रीवीरात् १६८१ वर्षे इति प्रबंधचिंतामणौ । श्रीवीरात् १६८३ वर्षे इति पं० वीरविजयगणिविरचितायां पूजायां ॥

४४—चउआलीसोत्ति, श्री सोमप्रभ-श्रीमणिरत्नसूरिपट्टे चतुश्चत्वारिंशत्तमः ४४ श्री जगच्चंद्रसूरिः ॥

यः क्रियाशिथिलमुनिसमुदायं ज्ञात्वा गुर्वाज्ञया वैराग्यरसैकसमुद्रं चैत्रगच्छीयश्रीदेवभद्रोपाध्यायं सहायमादाय क्रियायामौग्र्यात् हीरलाजगच्चंद्रसूरिरितिख्यातिभाक् बभूव। केचित्तु आघाटपुरे द्वात्रिंशता दिगंबराचार्यैः सह विवादं कुर्वन् हीरकवदभेद्यो जात इति राज्ञा हीरलाजगच्चंद्रसूरिरिति भणित इत्याहुः ॥ तथा यावज्जीवमाचामाम्लतपोऽभिग्रहीतद्वादशवर्षैस्तपा बिरुदमाप्तवान् ॥ ततः षष्ठं नाम वि० पंचाशीत्यधिकद्वादशशत१२८५वर्षे तपा इति प्रसिध्धं ॥

तथा च १—निर्ग्रंथ २—कौटिक ३—चंद्र ४—वनवासि ५—वटगच्छेत्यपरनामकबृहद्गच्छ ६—तपा इति षण्णां नाम्नां प्रवृत्तिहेतव आचार्याः क्रमेण १—श्रीसुधर्मस्वामि २—श्रीसुस्थित ३—श्रीचंद्र ४—श्रीसामंतभद्र ५—श्रीसर्वदेव ६—श्रीजगच्चंद्रनामानः षट् सूरयः ॥छ॥१४॥

॥ देविंदो पणयालो ४५, छायालीसो अ धम्मघोसगुरू ॥ ४६ ॥
सोमप्पह सगचत्तो, ४७ अडचत्तो सोमतिलगगुरू ४८॥१५॥
४५—तत्पट्टे श्रीदेवेन्द्रसूरिः ॥ ४६—तत्पट्टे श्रीधर्मघोषसूरिः
४७—तत्पट्टे श्रीसोमप्रभसूरिः ॥ ४८—तत्पट्टे श्रीसोमतिलकसूरिः ॥

व्याख्या—४५—देविंदोत्ति, श्रीजगच्चंद्रसूरिपट्टे पंचचत्त्वारिंशत्तमः श्रीदेवेंद्रसूरिः ॥ स च मालवके उज्जयिन्यां जिनभद्रनाम्नो महेभ्यस्य वीरधवलनाम्नस्तत्सुतस्य पाणिग्रहणनिमित्तं महोत्सवे जायमाने वीरधवलकुमारं प्रतिबोध्य, वि० द्व्युत्तरत्रयोदशशत१३०२वर्षे प्राव्राजयत् ॥ तदनु तद्भ्रातरमपि प्रव्राज्य चिरकालं मालवके एव विहृतवान्। ततो गूर्ज्जरधरित्र्यां श्रीदेवेंद्रसूरयः श्रीस्तंभतीर्थे समायाताः।

तत्र पूर्वं श्री विजयचंद्रसूरयः १-गीतार्थानां पृथक् पृथक् वस्त्रपुट्टलिकादानं, २-नित्यविकृत्यनुज्ञा, ३-चीवरक्षालनानुज्ञा, ४ फलशाकग्रहणं,

५-साधुसाध्वीनां निर्विकृतिकप्रत्याख्याने निर्वृकृतिकग्रहणं, ६-आर्यिकासमानीताऽशनादिभोगानुज्ञा, ७-प्रत्यहं द्विविधप्रत्याख्यानं, ८-गृहस्थावर्जननिमित्तं प्रतिक्रमणकारणानुज्ञा, ९-संविभागदिने तद्गृहे गीतार्थेन गंतव्यं, १०-लेपसंनिधप्रभावः, ११-तत्कालेनोष्णोदकग्रहणं, इत्यादिना क्रियाशैथिल्यरुचीन् कतिचिन् मुनीन् स्वायत्तीकृत्य सदोषत्वात् श्रीजगच्चंद्रसूरिभिः परित्यक्तायामपि विशालायां पौषधशालायां लोकाग्रहात् द्वादशवर्षाणि स्थितवंतः। प्रव्रज्यादिककृत्यमपि गुर्वाज्ञामंऽतरेणैव कृतवंतश्च ॥

श्रीविजयचंद्रसूरिव्यतिकरस्त्वेवं--

मंत्रिवस्तुपालगृहे विजयचंद्राख्यो लेख्यकर्मकृत् मंत्र्याऽऽसीत् ॥ क्वचनाऽपराधे कारागारे प्रक्षिप्तः। श्रीदेवभद्रोपाध्यायैः प्रव्रज्याग्रहणप्रतिज्ञया विमोच्य प्रव्राजितः। स च सप्रज्ञो बहुश्रुतीभूतो मंत्रिवस्तुपालेन नाऽयं साभिमानी सूरिपदयोग्य इत्येवं वार्यमाणैरपि श्रीजगच्चंद्रसूरिभिः श्रीदेवभद्रोपाध्यायानुराधात् श्रीदेवेंद्रसूरीणां सहायो भविष्यतीति विचिंत्य च सूरीकृतः॥ बहुकालं च श्रीदेवेंद्रसूरिषु विनयवानेवासीत्।

मालवदेशात्समागतानां श्रीदेवेंद्रसूरीणां तदा वंदनार्थमपि नाऽऽयातः गुरुभिर्ज्ञापितं कथमेकस्यां वसतौ द्वादशवर्षाणि स्थितमिति श्रुत्वा "निर्म्ममनिरहंकारा" इत्यादि प्रत्युत्तरं प्रेषितवान्॥ संविज्ञास्तु न तं प्रत्याश्रिताः। श्रीदेवेंद्रसूरियस्तु पूर्वमनेकसंविज्ञसाधुपरिकरिता 'उपाश्रय' एव स्थितवंतः॥ लोकैश्च वृद्धशालायां स्थितत्वात् श्रीविजयचंद्रसमुदायस्य "वृद्धशालिक" इत्युक्तं। तद्वशात् श्रीदेवेंद्रसूरिनिश्रितसमुदायस्य "लघुशालिक" इति ख्यातिः॥

स्तंभतीर्थे च चतुष्पथस्थितकुमारपालविहारे धर्मदेशनायामष्टादशशत १८०० मुखवस्त्रिकाभिर्मंत्रिवस्तुपालः चतुर्वेदादिनिर्णयदातृत्वेन स्वसमयपरसमयविदां श्रीदेवेंद्रसूरीणां वंदनकदानेन बहुमानं चकार॥ श्रीगुरवस्तु विजयचंद्रमुपेक्ष्य विहरमाणाः क्रमेण पाल्हणपुरे समायाताः। तत्र चानेकजनतान्विताः शीकुरीयुक्तसुखासनगामिनश्चतुरशीतिरिभ्या धर्मश्रोतारः। प्रल्हादनविहारे च प्रत्यहं मूटकप्रमाणा अक्षताः, क्रयविक्रयादौ नियतांशग्रहणात्॥ षोडशमण

प्रमाणानि पूगीफलानि चायांति। प्रत्यहं पंचशतीवीसलप्रियाणां भोगः ॥ एवं व्यतिकरे सति श्रीसंघेन विज्ञप्ता गुरवः यदत्र गणाधिपतिस्थापनेन पूर्यतामस्मन्मनोरथः। गुरुभिस्तु तथाविधमौचित्यं विचार्य प्रल्हादनविहारे वि० त्रयोविंशत्यधिके त्रयोदशशते १३२३ वर्षे,क्वचिच्चतुरधिके१३०४ श्रीविद्यानंदसूरिनाम्ना वीरधवलस्य सूरिपददानं। तदनुजस्य च भीमसिंहस्य धर्मकीर्तिनाम्नोपाध्यायपदमपि तदानीमेव संभाव्यते ॥ सूरिपददानावसरे सौवर्णिकपिशीर्षके प्रल्हादनविहारे मंडपात् कुंकुमवृष्टिः ॥ सर्वोपि जनो महाविस्मयं प्राप्तः। श्राद्धैश्च महानुत्सवश्चक्रे ॥ तैश्च श्रीविद्यानंदसूरिभिर्विद्यानंदाभिधं व्याकरणं कृतं ॥ यदुक्तम्--

विद्यानंदाभिधं येन कृतं व्याकरणं नवम् ॥
भाति सर्वोत्तमं स्वल्प-सूत्रं बह्वर्थसंग्रहं ॥१॥

पश्चात् श्रीविद्यानंदसूरीन् धरित्र्यामाऽऽज्ञाप्य, पुनरपि श्रीगुरवो मालवके विहृतवंतः। तत्कृताश्च ग्रंथास्त्वेते--

२—श्राद्धदिनकृत्यसूत्र-वृत्ती, २—नव्यकर्मग्रंथपंचकसूत्र-वृत्ती, २-सिध्धपंचाशिकासूत्र-वृत्ती, १-धर्मरत्नवृत्तिः, २-(१) सुदर्शनचरित्रं, ३-त्रीणि भाष्यानि, " सिरिउसहवध्धमाण " प्रभृतिस्तवाद्यश्च। केचित्तु श्रावकदिनकृत्यसूत्रमित्याहुः ॥ विक्रमात् सप्तविंशत्यधिकत्रयोदशशत १३२७-वर्षे मालवक एव देवेंद्रसूरयः स्वर्गं जग्मुः ॥

दैवयोगात् विद्यापुरे श्रीविद्यानंदसूरयोऽपि त्रयोदशदिनांतरिताः स्वर्गभाजः। अतः षड्भिर्मासैः सगोत्रिसूरिणा श्रीविद्यानंदसूरिबांधवानां श्रीधर्मकीर्त्युपाध्यायानां श्रीधर्मघोषसूरिरितिनाम्ना सूरिपदं दत्तं ॥

श्रीगुरुभ्यो विजयचंद्रसूरिपृथग्भवने कं गुरुं सेवेऽहमिति संशयानस्य सौवर्णिकसंग्रामपूर्वजस्य निशि स्वप्ने देवतया श्रीदेवेंद्रसूरीणामन्वयो भव्यो भविष्यतीति तमेव सेवस्वेति ज्ञापितं ॥

श्रीगुरूणां स्वर्गगमनं श्रुत्वा संघाधिपतिना भीमेन द्वादशवर्षाणि धान्यं त्यक्तं ॥छ॥

४६-छायालीसोत्ति, श्रीदेवेंद्रसूरिपट्टे षट्चत्वारिंशत्तमः श्रीधर्मघोषसूरिः येन मंडपाचले सा० पृथ्वीधरः पंचमव्रते लक्षप्रमाणं परिग्रहं नियमयन् ॥ ज्ञानातिशयात्तद्भंगमवगम्य प्रतिषेधितः । स च मंडपाचलाधिपस्य सर्वलोकाभिमतं प्राधान्यं प्राप्तः, ततो धनेन धनदोपमो जातः ॥ पश्चात्तेन चतुरशीति-८४जिन प्रासादाः सप्त च ज्ञानकोशाः कारिताः । श्रीशत्रुंजये च एकविंशतिघटीप्रमाणसुवर्णव्ययेन रैमयः श्रीऋषभदेवप्रासादः कारितः ॥ केचिच्च तत्र षट्पंचाशत्सुवर्णघटीव्ययेनेंद्रमालायां (लां यो) परिहितवानिति वदंति ॥

तथा धरित्र्यां केनचित्साधर्मिकेण ब्रह्मचारिवेषदानावसरे महर्धिकत्वात् पृथ्वीधरस्यापि तद्वेषः प्राभृतीकृतः स च तमेव वेषमादाय ततःप्रभृति द्वात्रिंशद्वर्षीयोऽपि ३२ ब्रह्मचार्यभूत् ॥

तस्य च पुत्र सा० झांझणनाम्ना एक एवासीत् । येन श्रीशत्रुंजयोज्जयंतगिर्योः शिखरे द्वादश१२योजनप्रमाणः सुवर्णरूप्यमय एक एव ध्वजः समरोपितः ॥ कर्प्पूरकृतेराजासारंगदेवः, करयोजनं कारितः ॥

येन च मंडपाऽचले जीर्णटंकानां द्विसप्तत्या क्वचित् षट्त्रिंशता सहस्रैर्गुरूणां प्रवेशोत्सवश्चक्रे ॥

देवपत्तने च शिष्याभ्यर्थनया मंत्रमयस्तुतिविधानतो येषां रत्नाकरस्तरंगै रत्नढौकनं चकार । तथा तत्रैव ये स्वध्यानप्रभावात्प्रत्यक्षीभूतनवीनोत्पन्न कपर्दियक्षेण वज्रस्वामिमहात्म्याच्छत्रुंजयान्निष्काशितं जीर्णकपर्दिराजं मिथ्यात्वमुत्सर्प्पयंतं प्रतिबोध्य श्रीजैनबिंबाधिष्ठायकं व्यधुरिति ॥ एकदा काभिश्चिद् दुष्टस्त्रीभिः साधुनां विहारिता कार्मणोपेता वटका भूपीठे यैस्त्याजिताः संतः प्रभाते पाषाणा अभवन् । तदनु चाभिमंत्र्याऽर्पितपट्टकासनास्ताः स्तंभिताः सत्यः कृपया मुक्ता इति ॥ तथा विद्यापुरे पक्षांतरीय तथाविध स्त्रीभिर्गुरूणां व्याख्यानरसे मात्सर्यात् स्वरभंगाय कण्ठे केशगुच्छके कृते यैर्विज्ञातस्वरूपास्ता प्राग्वत्स्तंभिताः संत्योऽतःपरं भवद्गणे न वयमुपद्रोष्याम इति वाग्दानपुरःसरं संघाग्रहान्मुक्ता इति ॥

उज्जयिन्यां च योगिभयात् साध्वस्थिते गुरव आगताः योगिना साधवः प्रोक्ताः अगागतैः स्थिरैः स्थेयं ? साधुभिरुक्तं स्थिताःस्मः किं करिष्यसि ? तेन साधूनां दन्ता दर्शिताः, साधुभिस्तु कफोणिर्दर्शिता। साधुभिर्गत्वा गुरूणां विज्ञप्तं ॥ तेन शालायामुन्दरवृन्दं विकुर्वितं। साधवो भीता गुरुभिर्घटमुखं वस्त्रेणाऽऽच्छाद्य तथा जप्तं यथा राटिं कुर्वन् स योगी आगत्य पादयोर्लग्नः ॥

क्वचनपुरे निश्यभिमंत्रितद्वारदानं, एकदा अनभिमंत्रितद्वारदाने शाकिनीभिः पट्टिरुत्पाटितास्तंभितास्ता वाग्दाने च मुक्ताः ॥

यरेकदा सर्पदंशे रात्रौ विषेणांतरांतरामूर्छामुपगतैरुपायविधुरं संघं प्रत्यूचे। प्राचीनप्रतोल्यां कस्यचित्पुंसो मस्तके काष्टभारिकामध्ये विषापहारिणी लता समेष्यति,सा च घृष्य दंशे देया इत्येवं प्रोक्ते संघेन च तथा विहिते तया प्रगुणीभूय ततःप्रभृति यावज्जीवं षडपि विकृतयस्त्यक्ता आहारस्तु तेषां सदा युगंधर्या एव ॥

तत्कृता ग्रंथास्त्वेवं– संघाचारभाष्यवृत्तिः, सुअधम्मेतिस्तवः, कायस्थिात-भवस्थितिस्तवौ, चतुर्विंशतिजिनस्तवाः, चतुर्विंशतिः, प्रस्ताशर्मेत्यादिस्तोत्रं, देवेंद्रैरनिशं॰ इति श्लेषस्तोत्रं, यूयं यूवां त्वमिति श्लेषस्तुतयः, जय वृषभेत्यादिस्तुत्याद्याः ॥

तत्र जय वृषभेत्यादिस्तुतिकरणव्यतिकरस्त्वेवं—एकेन मंत्रिणाऽष्टयमकं काव्यमुक्त्वा प्रोचे, इदृग्काव्यमधुना केनाऽपि कर्तुं न शक्यं। गुरुभिरुचेऽनस्तिर्नास्ति। तेनोक्तं तं कविं दर्शयत। तैरुक्तं ज्ञास्यते ॥ ततो जयवृषभस्तुतयो अष्टयमका एकया निशा निष्पाद्य भित्तिलिखितादर्शिताः। स–च चमत्कृतः प्रतिबोधितश्च॥ ते च वि॰ सप्तपंचाशदधिकत्रयोदशशत१३५७वर्षे दिवंगताः॥

४७—सोमप्पहत्ति, श्रीधर्मघोषसूरिपट्टे सप्तचत्वारिंशत्तमः श्रीसोमप्रभसूरिः॥ नमिऊण भणइ एवमित्याद्याराधनासूत्रकृत्। तस्य च वि॰ दशाधिकत्रयोदशशत१३१०वर्षे जन्म, एकविंशत्यधिके१३२१व्रतं, द्वात्रिंशदधिके१३३२सूरिपदं,कण्ठगतैकादशांगसूत्रार्थो गुरुभिर्दीयमानायां मंत्रपुस्तिकायां यच्छत

चारित्रं मंत्रपुस्तिकां वेत्युक्त्वा न मंत्रपुस्तिकां गृहीतवान्। अपरस्य योग्यस्याऽभावात् सा जलसात्कृता ॥

येन श्री सोमप्रभसूरिणा जलकुंकुणदेशे ऽप्कायविराधनाभयात् मरौ शुद्धजलदौर्लभ्यात् साधूनां विहारः प्रतिषिध्धः ॥

तथा भीमपल्यां कार्तिके द्वये प्रथम एव कार्तिके एकादशाऽन्यपक्षीयाऽऽचार्याऽविज्ञातं भाविनं भंगं विज्ञाय चतुर्मासीं प्रतिक्रम्य विहृतवंतः पश्चात्तद्भंगोऽभवत्। तेचाऽऽचार्या अकृतगुरुवचना भंगमध्येऽपतन्निति ॥

तत्कृता ग्रंथास्तु सविस्तरयतिजीतकल्पसूत्रं, यत्राखिलेत्यादि २८ स्तुतयः, जिनैन येनेतिस्तुतयः, श्रीमद्धर्मेत्यादयश्च ॥

तच्छिष्याः, श्रीविमिलप्रभसूरि १ श्रीपरमानंदसूरि २ श्रीपद्मतिलकसूरि ३ श्रोसोमतिलकसूरय ४ इति ॥

यस्मिन् वर्षे श्रीधर्मघोषसूरयो दिवंगताः तस्मिन्नेव वर्षे १३५७ श्रीसोमप्रभसूरिभिः श्रीविमलप्रभसूरीणां पदं ददे। ते च स्तोकं जीविता ॥ ततस्वायुर्ज्ञात्वा त्रिसप्तत्यधिकत्रयोदशशत१३७३वर्षे श्रीपरमानंदसूरि–श्रीसोमतिलकसूरीणां सूरिपदंदत्वा,मासत्रयेण वि० त्रिसप्तत्यधिकत्रयोदशशत१३७३ वर्षे श्रीसोमप्रभसूरयो × दिवं गताः ॥ तदानीं च स्तंभतीर्थे तेषामाऽऽलिगवसतिस्थत्वेन तत्रत्याः प्रत्यासन्ना लोका आकाशोद्योताद्यालोक्योक्तवंतो यदेतेषां गुरूणां स्वर्गाद्विमानमागादिति ॥ अन्यत्र च कापिपुरे तद्दिने यात्रावतीर्णदेवतयेत्युक्तं " यत्तपाचार्या सौधर्मेन्द्रसामानिकत्वेन समुत्पन्ना " इतिप्रवादोऽधुना मया मेरौ देवमुखात् श्रुत इति ॥

श्रीपरमानन्दसूरिरपि वर्षचतुष्टयं जीवितः ॥छ॥

४८—अडचत्तोत्ति, श्रीसोमप्रभसूरिपट्टेऽष्टचत्वारिंशत्तमः श्रीसोमतिलकसूरिः। तस्य वि० पंचपंचाषदधिके त्रयोदशशत१३५५वर्षे माघे जन्म, एकोनसप्तत्यधिके १३६९ दीक्षा, त्रिसप्तत्यधिके १३७३ सूरिपदं, चतुर्विंशत्य-

धिकचतुर्दशशते १४२४ वर्षे स्वर्गः, सर्वायुरेकोनसप्तति ६९ वर्षाणां ॥ ×

तत्कृता ग्रंथाः—बृहन्न०यक्षेत्रसमाससूत्रं, सत्तरिसयठाणं. यत्राखिल० जयवृषभ० सस्ताशर्म० प्रमुखस्तववृत्तयः श्रीतीर्थराजः० चतुरर्थास्तुतिस्तद्वृत्तिः, शुभभावानव० श्रीमद्वीरस्तुवे इत्यादि कमलबन्धस्तवः शिवशिरसि० श्रीनाभिसंभव० श्रीशैवेय० इत्यादीनि बहूनि स्तवनानि च ॥

श्रीसोमतिलकसूरिभिस्तु क्रमेण श्रीपद्मतिलकसूरि १ श्रीचंद्रशेखरसूरि २ श्रीजयानन्दसूरि ३ श्रीदेवसुन्दरसूरीणां ४ सूरिपदं दत्तं ॥

तेषु श्रीपद्मतिलकसूरयः श्रीसोमतिलकसूरिभ्यः पर्यायज्येष्ठा एकंवर्षजीविताः परं समित्यादिषु परमयतनापरायणाः ॥

श्रीचंद्रशेखरसूरेः वि० त्रिसप्तत्यधिकेत्रयोदशशत१३७३वर्षेजन्म, पंचाशीत्यधिके१३८५ व्रतं, त्रिनवत्यधिके १३९३ सूरिपदं, त्रयोविंशत्यधिकचतुर्दशशत१४२३वर्षे स्वर्गः ॥ तत्कृतानि—उषितभोजनकथा, यवराजर्षिकथा, श्रीमद्स्तंभनकहारबंधस्तवनानि ॥ यदभिमंत्रितरजसाप्युपद्रवं कुर्वाणा गृहहरिका दुर्द्धरमृगराजश्च नेशुरिति ॥

श्रीजयानंदसूरेः वि०अशीत्यधिके त्रयोदशशत१३८०वर्षे जन्म, द्विनवत्यधिके१३९२ आषाढ़शु०सप्तमी७शुक्रे धरायां व्रतं, साजणाख्यो वृद्धभ्राता प्रव्रज्याऽऽदेशदानाऽनभिमुखो देवतया प्रतिबोधितो दीक्षादेशमनुमेने, विंशत्यधिके चतुर्दशशत१४२०वर्षे चै०शु०दशम्यां१० अणहिल्लपत्तने सूरिपदं, एकचत्वारिंशदधिके १४४१ स्वर्गः ॥ तत्कृतग्रंथाः—श्रीस्थूलभद्रचरित्रं, देवाःप्रभोयं०प्रभृतिस्तवनानि ॥ १५ ॥

॥ एगुणवण्णो सिरिदेव-सुंदरो ४९ सोमसुंदरो पण्णो ५० ॥
मुनिसुंदरेगवण्णो ५१, बावण्णो रयणसेहरओ ५२ ॥ १६ ॥

× श्रीजिनेश्वरसूरिशिष्यो जिनप्रभसूरिः । येन प्रतिदिनं नव्यस्तोत्रादिकरणानंतरमेवाऽऽहारग्रहणाभिग्रहेण नैकानि स्तोत्राणि विरचितानि प्रभावतीदेवीवचनात् तपागच्छमभ्युदयवन्तं समीक्ष्य श्रीसोमतिलकसूरये ९००स्तोत्राणि समर्पितानि ॥ इति श्रीजिनप्रभसूरिकृतसिद्धांतस्तवस्य तच्छिष्यादिगुप्तकृतायामवचूर्णौ । (जैनरौप्यांके)।

४६--*तत्पट्टे श्रीदेवसुंदरसूरिः* ॥ ५०—*तत्पट्टे श्रीसोमसुंदरसूरिः* ॥
५१--*तत्पट्टे श्रीमुनिसुंदरसूरिः* ॥ ५२—*तत्पट्टे श्रीरत्नशेखरसूरिः* ॥

व्याख्या—४६ एगुणवरणोत्ति, श्रीसोमतिलकसूरिपट्टे एकोनपंचाशत्तमः श्रीदेवसुंदरसूरिः ॥ तस्य वि० षण्णवत्यधिके त्रयोदशशत१३९६-वर्षे जन्म, चतुर्वर्षाधिके चतुर्दशशत१४०४वर्षे व्रतं महेश्वरग्रामे, विंशत्यधिके १४२० अणहिल्लपत्तने सूरिपदं ॥ यं पत्तने गुंगडीसरःकृतस्थितिः प्रधानतरयोगिशतत्रयपरिवृतो मंत्रतंत्रादिसमृद्धिमंदिरं स्थावरजंगमविषापहारी जलानलव्यालहरिभयभेत्ता अतीतानागतादिवस्तुवेत्ता राजमंत्रिप्रमुखबहुजनबहुमानपूजितः उदयीपा योगी प्रजासमक्षं स्तुतिं कुर्वाणः प्रकटितपरमभक्तिडंबरः साडंबरं वंदितवान् ॥ तदनु च संघाधिपनरिआद्यैर्वंदनकारणं पृष्टः स योगी उवाच—"पद्माऽक्षदंडपरिकरचिह्नै रुपलक्ष्ययुगोत्तमगुरवस्त्वया-वंदनीया" इतिदिव्यज्ञानशक्तिमतः कणयरीपाऽभिधानस्वगुरोर्वचसा वंदित इति ॥

श्रीदेवसुन्दरसूरीणां च श्रीज्ञानसागरसूरयः, श्रीकुलमंडनसूरयः, श्रीगुणरत्नसूरयः, श्रीसोमसुंदरसूरयः, श्रीसाधुरत्नसूरयश्चेति पंचशिष्यास्तत्र श्रीज्ञानसागरसूरीणां वि० पंचाधिके चतुर्दशशत१४०५वर्षेजन्म, सप्तदशाधिके१४१७दीक्षा, एकचत्वारिंशदधिके १४४१ सूरिपदं, षष्ठ्यधिके १४६० स्वर्गः ॥ स च चतुर्थः ॥ तदुक्तं गुर्वावल्यां (श्लो० ३३८, ३३९)

खरतरपक्षश्राध्धो, मन्त्रिवरो गोवलः सकलरात्रिम् ॥
अनशनसिद्धौ भक्त्या, ऽगुरुकर्पूरादिभोगकरः ॥१॥
ईषन्निद्रामाप्या–ऽपश्यत्स्वप्ने सुदिव्यरूपधरान् ॥
तानिति वदतस्तुर्ये, कल्पेस्मः शक्रसमविभवाः ॥२॥ युग्ममिति ॥

तत्कृताग्रंथाश्च—श्रीआवश्यौघनिर्युक्ताद्यनेकग्रंथावचूर्णयः, श्रीमुनिसुव्रतस्तव—घनौघनवखण्डपार्श्वनाथस्तवादि च ॥

श्रीकुलमण्डनसूरीणां च वि० नवाधिके चतुर्दशशते १४०९ जन्म, सप्तदशाधिके १४१७ व्रतं, द्विचत्वारिंशदधिके १४४२ सूरिपदं, पंचपंचाश-

दधिके १४५५ स्वर्गः ॥ सिध्धांतालापकोद्धारः, विश्वश्रीधरेत्यादिअष्टादशारचक्रबंधस्तव--गरीयो०हारबंधस्तवादयश्च तत्कृतग्रन्थाः ॥

श्रीगुणरत्नसूरीणां चासाधारणो नियमः ॥ तदुक्तम् (गु०श्लो० ३८१)
जगदुत्तरो हि तेषां, नियमोऽवष्टंभरोषविकथानां
आसन्नां मुक्तिरमां, वदति चरित्रादिनैर्मल्यात् ॥१॥ इति

तत्कृताश्च ग्रंथाः-क्रियारत्नसमुच्चयः षडदर्शनसमुच्चयबृहद्वृत्त्यादयः ॥ श्रीसाधुरत्नसूरीणां कृतिर्यतिजीतकल्पवृत्त्यादिकेति ।।छ॥

५०--पणोत्ति श्रीदेवसुन्दरसूरिपट्टे पंचाशत्तमः श्रीसोमसुन्दरसूरिः ॥

तस्य वि० त्रिंशदधिके चतुर्दशशत१४३०वर्षे मा० ब० चतुर्दश्यां १४ शुक्रे जन्म, सप्तत्रिंशदधिके १४३७ व्रतं, पंचाशदधिके १४५० वाचकपदं सप्तपंचाशधिके १४५७ सूरिपदं ॥ यमष्टादशशत१८००साधुपरिकरितं सत्क्रियापरायणं महामहिमालयं गुरुं दृष्ट्वा रुष्टैर्द्रव्यलिंगिभिरेकः पंचशतद्रविणदानेन सशस्त्रः पुमांस्तद्वधायोदीरितः । स च दुर्धिया वसतौ प्रविष्टो यावदनुचितकरणाय यतते तावच्चन्द्रोद्योते जाते सति निद्रालुभिरपि श्रीगुरुभी रजोहरणेन प्रमृज्य पार्श्वं परावर्तितं,तद्दृष्ट्वाऽहो निद्रायामपि क्षुद्रप्राणिकृपापरमेनमपराध्य "कस्यां गतौ मे गति" रिति विचारणया परलोकभीतो गुरुपादयोर्निपत्य "क्षमध्वं मेऽपराध" मिति वचसा गुरुं प्रबोध्य निजव्यतिकरं कथितवान् ।सोपि गुरुभिर्मधुरवाचा तथोदीरितो यथा प्रव्रजित इति वृद्धवचः ॥

तथा यस्य ज्ञानवैराग्यनिधेर्गुणगणप्रतीतिः परपक्षेऽपि प्रतीता । तदुक्तं गुरुगुणरत्नाकरे (सर्ग १ श्लोक ६२)--

आकर्ण्य यद्गुणगणं गृहिणः प्रहृष्टा, लेखेन दुष्कृततीरतिदूरदेशात् ॥
विज्ञप्य केपि कृतिनः परपक्षभाजोऽप्यालोचनां जगृहुरास्यकजेन येषां॥१॥

इति ॥ तत्कृतिश्च—योगशास्त्रोपदेशमालाषडावश्यकनवतत्वादिबालावबोधभाष्यावचूर्णिकल्याणकस्तोत्रादिनीति ।

तच्छिष्यास्तु—श्रीमुनिसुन्दरसूरिः१, कृष्णसरस्वतीबिरुदधारकश्रीजयसुन्दरसूरिः २, महाविद्याविडंबनटिप्पनकारकश्रीभुवनसुन्दरसूरिः ३,

कंठगतैकादशांगीसूत्रधारकदीपावलिकाकल्पादिकारकश्रीजिनसुन्दरसूरिश्चेति चत्वारः ॥ तैःपरिकरितो राणपुरे श्रीधरणचतुर्मुखविहारे ऋषभाद्यनेकशतबिंबप्रतिष्ठाकृत् ॥ अनेकभव्यप्रतिबोधादिना प्रवचनमुद्भाव्य वि०नवनवत्यधिकचतुर्दशशत१४९९वर्षे स्वर्गभाक् ॥

५१—मुनिसुंदरेगवणोत्ति, श्रीसोमसुंदरसूरिपट्टे एकपंचाशत्तमः श्रीमुनिसुन्दरसूरिः ॥ येनानेकप्रासादपद्मचक्रषट्कारकक्रियागुप्तकाऽर्धभ्रमसर्वतोभद्रमुरजसिंहासनाऽशोकभेरीसमवसरणसरोवराऽष्टमहाप्रातिहार्यादिनव्यत्रिशतीबंधतर्कप्रयोगाद्यनेकचित्राक्षरद्वयक्षरपंचवर्गपरिहाराद्यनेकस्तवमय "त्रिदशतरंगिणी" नामधेयाष्टोत्तरशतहस्तमितो लेखः श्रीगुरूणां प्रेषितः ॥ चातुर्वैद्यवैशारद्यनिधिरुपदेशरत्नाकरप्रमुखग्रंथकारकः ॥ स्तंभतीर्थे दफरखानेन 'वादिगोकुलसंड" इति भणितः, दक्षिणस्यां "कालीसरस्वती" ति प्राप्तबिरुदः, अष्टवर्षगणनायकत्वानंतरं वर्षत्रिकं "युगप्रधानपदव्युदयी" ति जनैरुक्तः, अष्टोत्तरशत१०८वर्तुलिकानादौपलक्षकः, बाल्येपि सहस्राभिधानधारकः, संतिकरमिति सप्तहिमस्तवनकरणेन योगिनीकृतमार्युपद्रवनिवारकः चतुर्विंशतिवार२४विधिना सूरिमंत्राराधकः ॥ तेष्वपि चतुर्दशवारं यदुपदेशतः स्वस्वदेशेषु चंपकराजदेपाधारादिराजभिरमारिः प्रवर्तिता ॥ सीरोहीदिशि सहस्रमल्लराजेनाऽप्यमारिप्रवर्तने कृते येन तिड्डकोपद्रवो निवारितः ॥

श्रीमुनिसुन्दरसूरेर्वि० षट्त्रिंशदधिके चतुर्दशशत१४३६वर्षेजन्म, त्रिचत्वारिंशदधिके १४४३ व्रतं, षट्षष्ठ्यधिके १४६६ वाचकपदं, अष्टसप्तत्यधिके १४७८ द्वात्रिंशत्सहस्र ३२००० टंकव्ययेन वृद्धनगरीयसं०देवराजेन सूरिपदं कारितं, त्र्युत्तरपंचदशशत१५०३वर्षे का०शु०प्रतिपत्१दिने स्वर्गभाक् ॥ छ ॥

५२—बावणोत्ति, श्रीमुनिसुन्दरसूरिपट्टे द्विपंचाशत्तमः श्रीरत्नशेखरसूरिः ॥ तस्य वि० सप्तपंचाशदधिके चतुर्दशशत१४५७वर्षे क्वचिद्वा द्विपंचाशदधिके१४५२जन्म, त्रिषष्ठ्यधिके१४६३व्रतं, त्र्यशीत्यधिके१४८३ पंडितपदं, त्रिनवत्यधिके १४९३ वाचकपदं, द्व्युत्तरे पंचदशशते१५०२वर्षे

सूरिपदं, सप्तदशाधिके १५१७ पो०वदिषष्ठी६दिने स्वर्गः ॥ स्तंभतीर्थे बांबी-नाम्ना भट्टेन "बालसरस्वती"ति नाम दत्तं ॥

तत्कृताग्रंथाः—श्राद्धप्रतिक्रमणवृत्तिः १, श्राद्धविधिसूत्रवृत्तिः २, आचारप्रदीपश्चे३ति ॥

तदानीं च लुंकाख्याल्लेखकात् वि० अष्टाधिकपंचदशशत१५०८वर्षे जिनप्रतिमोत्थापनपरं लुंकामतं प्रवृत्तं ॥ तन्मते वेषधरास्तु वि०त्रयस्त्रिंशदधिकपंचदशशत१५३३वर्षे जाताः । तत्र प्रथमो वेषधारी भाणाख्योऽभूदिति ॥ १६ ॥

॥ तेवण्णो पुण लच्छी-सायर सूरीसरो मुणेअव्वो ५३॥

चउवण्णु सुमइ साहू ५४, पणवण्णो हेमविमलगुरू ५५ ॥१७॥

५३-तत्पट्टे श्रीलक्ष्मीसागरसूरिः ॥ ५४-तत्पट्टे श्रीसुमतिसाधुसूरिः ॥

५५-तत्पट्टे श्रीहेमविमलसूरिः ॥

व्याख्या ५३—तेवण्णोति, श्रीरत्नशेखरसूरिपट्टे त्रिपंचाशत्तमः श्रीलक्ष्मीसागरसूरिः ॥ ×

× श्रीलक्ष्मीसागरसूरिशासनवर्तिसूरीणां शिष्यैः सह संख्या चैवं—

श्रीसुधानंदसूरिः शिष्याः २६, श्रीशुभरत्नसूरिः १४ (१८), श्रीसोमजयसूरिः २५, श्रीजिनसोमसूरिः १५, श्रीजिनहंससूरिः ३६, श्रीसुमतिसुन्दरसूरिः ५३, श्रीसुमतिसाधुसूरिः ५७, श्रीराजप्रियसूरिः १२, श्री इन्द्रनन्दिसूरिः ११ । इति नव ॥

उपाध्यायाः—महोपाध्यायश्रीमहीसमुद्रः २६, उपा० श्रीलब्धिसमुद्रः ३१, उ० श्रीअमरनन्दिः २७, उ०श्रीजिनमाणिक्यः ३१, उ०श्रीधर्महंसः १२, उ०श्रीआगममण्डनः १२, उ०श्रीइन्द्रहंसः १०, उ० श्रीगुणसोमः ११, उ०श्रीअनंतहंसः १२, उ०श्रीसंघसाधुः १४ ॥ अन्येपि पंचवाचकाः । इति पन्चदश ॥ गीतार्थाः—२८६ ॥

मुनयस्तु—तिलकविवेक रुचि राज सहज भूषण कल्याण श्रुत शीति कीर्ति मूर्ति प्रमोद आनन्द नन्दि साधु रत्न मण्डन नन्दन वर्धन ज्ञान दर्शन प्रभ लाभ धर्म

तस्य वि० चतुष्षष्ठ्यधिके चतुर्दशशत१४६४ वर्षे भाद्र० वदि द्वितीयारदिने जन्म, सप्तत्यधिके १४७७ दीक्षा, षण्णवत्यधिके १४९६ पंन्यास पदं, एकाधिके पंचदशशत१५०१वर्षे वाचकपदं, अष्टाधिके १५०८ सूरिपदं सप्तदशाधिके १५१७ गच्छनायकपदं ॥

५४—चउवण्णुत्ति, श्रीलक्ष्मीसागरसूरिपट्टे चतुष्पंचाशत्तमः श्रीसुमतिसाधुसूरिः ॥

५५—पणवण्णोत्ति, श्रीसुमतिसाधुसूरिपट्टे पंचपंचाशत्तमः श्रीहेमविमलसूरिः

यः क्रियाशिथिलसाधुसमुदाये वर्तमानोपि साध्वाचारानतिक्रान्तः । यतो ब्रह्मचर्येण निष्परिग्रहतया च सर्व्वजनविख्यातो महायशस्वी संविग्न-साधुसान्निध्यकारी । यद्दीक्षिता यन्निश्रिताश्च बहवः साधवः क्रियापरायणा आसन् । एतच्चिह्नं समुदायानुरोधेन क्षमाश्रमणादिविहृतं पक्वान्नादिकं नात्मना भुक्तवान्

ऋ०हाना-ऋ०श्रीपति-ऋ०गणपति प्रमुखा लुङ्कामतमपास्य श्रीहेमविमलसूरिपार्श्वे प्रव्रज्य तन्निश्रया चारित्रभाजो बभूवांसः ॥

सद्युम्नं कंचिद्व्रतिनं ज्ञात्वा गणान्निष्काशयामास ॥

न च तेषां क्रियाशिथिलसाधुसमुदायावस्थाने चारित्रं न संभवतीति शंकनीयं, एवं सत्यपि गणाधिपतेश्चारित्रसंभवात् ।

यदागमः—साले नामं एगे एरण्डपरिवारे त्ति ॥

तदानीं वि० द्वाषष्ठ्यधिकपंचदशशत१५६२ वर्षे "संप्रति साधवो न दृग्पथमायाती"त्यादिप्ररूपणापरकटुकनाम्नो गृहस्थात् त्रिस्तुतिकमतवासि-

---

सोम संयम हेम क्षेम प्रिय उदय माणिक्य सत्य जय विजय सुन्दर सार धीर वीर चारित्र चन्द्र भद्र समुद्र शेखर सागर सूर मंगल शील कुशल विमल कमल विशाल देव शिव यश कलश हर्ष हंस, इत्यादिपदान्ताः सहस्रशः ॥ महत्तरा आर्या १ ।

—इति श्रीसोमचारित्रगणिविरचिते, गुरुगुणरत्नाकरकाव्ये द्वितीये सर्गे ॥

तोत्कटुकनाम्ना मतोत्पत्तिः ॥ तथा वि० सप्तत्यधिकपंचदशशत१५७० वर्षे लुङ्कामतान्निर्गत्य वीजाख्यवेषधरेण "बीजामती"नाम्ना मतं प्रवर्तितं ॥ तथा वि० द्विसप्तत्यधिकपंचदशशत१५७२वर्षे नागपुरीयतपागणान्निर्गत्य उपाध्यायपार्श्वचंद्रेण स्वनाम्ना मतं प्रादुष्कृतमिति ॥१७॥

सुविहिअमुणिचूडामणि. कुमयतमोमहणमिहिरसममहिमो ।
आणंद विमल सूरी-सरो अ छावण्णपट्टधरो ॥१८॥
५६ –तत्पट्टे श्रीआणंदविमलसूरिः ॥

व्याख्या--५६–सुविहियत्ति, श्रीहेमविमलसूरिपट्टे षट्पंचाशत्तमपट्टधरः सुविहितमुनिचूडामणि-कुमततमोमथनसूर्यसममहिमा श्रीआणंदविमलसूरिः ॥

तस्य च वि० सप्तचत्वारिंशदधिके पंचदशशत१५४७वर्षे इलादुर्गे जन्म, द्विपंचाशदधिके १५५२ व्रतं, सप्तत्यधिके १५७० सूरिपदं ॥

तथा यो भगवान् क्रियाशिथिलबहुयतिजनपरिकरितोऽपि संवेगरंगभावितमातः जिनप्रतिमाप्रतिषेध–साधुजनाभावप्रमुखोत्सूत्रप्ररूपणप्रबलजलप्लाव्यमानं जननिकरमवलोक्य करुणारसावलिप्तचेतो गुर्वाज्ञया कतिचित्संविग्नसाधुसहायो वि० द्व्यशीत्यधिकपंचदशशत१५८२वर्षे शिथिलाचारपरिहाररूपक्रियोद्धरणयानपात्रेण तमुद्धृतवान्, × अनेकानि चेभ्यानामिभ्यपुत्राणां च शतानि कुटुंबधनादिमोहं संत्यज्य प्रव्राजितानि ॥

× ५८ तत्पट्टे श्रीआनन्दविमलसूरिः ५९ तत्पट्टे श्रीविजयदानसूरिः—(२) सं०१५८२ क्रियोद्धार कीधो त्रिणगच्छनायक पाटण विसलनगर वारेजाथी निंसरा ॥

६० तत्पट्टे श्रीराजविजयसूरि ६१तत्पट्टे श्रीरत्नविजयसूरि सं०१५९६ लुंकामतफेडयो मालवोवालो जीयाजी जीत्यो, साहसलेमने प्रतिबोध्यो, मुगता घाटकर्या सं० १६२४ ॥

इति, मोहनलाल दलीचंद देशाइ इत्यनेन संग्रहीतायां, रत्नशाखा पट्टावल्याम्
(जैनयुग, पु०३, अं० ११–१२)

"यो वादेजयी स नगरादौ स्थास्यति नान्य" इति सुराष्ट्राधिपतिनामांऽकितलेखमादाय सुराष्ट्रे साधुविहारनिमित्तं यदीयश्रावकः सुरत्राणदत्तपर्यस्तिकावाहनः पातसाहिप्रदत्त "मलिकश्रीनगदल" बिरुदः सा० तूणसिंहाख्यः श्रीगुरूणां विज्ञप्तिं कृत्वा संप्रतिभूपतिरिव पंन्यासजगर्षिप्रमुखसाधुविहारं कारितवान् ॥

तथा जेसलमेर्वादिमरुभूमौ जलदौर्लभ्याद्दुष्करोयमितिधिया श्रीसोमप्रभसूरिभिर्यो विहारः प्रतिषिध्ध आसीत् सोपि व्यवहारः कुमतव्याप्तिभिया तत्रत्यजनानुकंपया च भूयोलाभहेतवे पुनरप्यनुज्ञातः । तत्रापि प्रथमं लघुवया अपि शीलेन श्रीस्थूलभद्रकल्पो वैराग्यनिधिर्निःस्पृहावधिर्यावज्जिवं जघन्यतोऽपि षष्ठतपोभिग्रही पारणकेप्याचाम्लादितपोविधायी महोपाध्यायश्रीविद्यासागरगणिर्विहृतवान् । तेन च जेसलमेर्वादौ खरतरान् मेवातदेशे च बीजामतीप्रभृतीन् मोरव्यादौ (मोख्यादौ) लुङ्कादीन् प्रतिबोध्य सम्यक्त्वबीजमुप्तं सदनेकधावृद्धिमुपागतमद्याऽपि प्रतीतं ॥

तथा पार्श्वचंद्रव्युद्ग्राहिते बीरमग्रामे पार्श्वचंद्रमेव वादे निरुत्तरीकृत्य भूयान् जनो जैनधर्म्मं प्रापितः । एवं मालवकेप्युज्जयिनीप्रभृतिषु ॥ किंबहुना ! संविग्नत्वादिगुणैर्यत्कीर्तिपताका पुनरद्यापि सज्जनवचोवातेनेतस्ततउद्धूयमाना प्रवचनप्रासादशिखरे समुल्लसति ॥

क्रियोद्धारकरणानन्तरं च श्रीआणंदविमलसूरयश्चतुर्दश१४वर्षाणि जघन्यतोपि नियततपोविशेषं विहाय षष्ठतपोभिग्रहिणः चतुर्थषष्ठाभ्यां विंशतिस्थानकाराधनाद्यनेकविकृष्टतपःकारिणश्च वि०षण्णवत्यधिकपंचदशशत १५९६वर्षे चैत्रसितसप्तम्यामा७ऽऽजन्मातिचाराऽऽद्यालोच्याऽनशनं विधाय च नवभिरुपवासैरहम्मदावादनगरं स्वर्गं विभूषयामासुः ॥१८॥

॥ *सिरिविजयदाणसूरी, पट्टे सगवण्णए अ ५७ अडवण्णे* ॥
सिरिहीरविजयसूरी, ५८ संपइ तवगणादिणिंदसमा ॥१९॥

५७–*तत्पट्टे श्रीविजयदानसूरिः* । ५८–*तत्पट्टे श्रीहीरविजयसूरिः* ॥

व्याख्या--५७-सिरिविजयत्ति, श्रीआनन्दविमलसूरिपट्टे सप्तपंचाशत्तमः श्रीविजयदानसूरिः॥ येन भगवता स्तंभतीर्था-ऽहम्मदावाद-पत्तन-महीशानक-गन्धारबंदिरादिषु महामहोत्सवपुरस्सरमनेकजिनबिंबशतानि प्रतिष्ठितानि ॥

यदुपदेशमवाप्य सूरत्राणमहिमूदमान्येन मंत्रिगलराजाऽपरनामकमलिकश्रीनगदलेनाऽश्रुतपूर्वां षाण्मासीं शत्रुंजयमुक्तिं कारयित्वा सर्वत्र कुंकुमपत्रिकाप्रेषणपुरस्सरसम्मीलिताऽनेकदेश-नगर-ग्रामादिसंघसमेतेन श्रीशत्रुंजययात्रा, मुक्ताफलादिना श्रीशत्रुंजयवर्धापनं श्रीभरतचक्रिवच्चक्रे ॥

तथा यदुपदेशपरायणैर्गांधारीयसा०रामजी अहम्मावादसत्क सं०कूंअरजीप्रभृतिभिः शत्रुंजये चतुर्मुखाऽष्टापदादिप्रासादा देवकुलिकाश्चकारिताः। उज्जयन्तगिरौ जीर्णप्रासादोद्धारश्च ॥

तथा सूर्यस्येव यस्योदये तारका इवोत्कटवादिनोऽदृष्यतां प्रापुः ॥

यो भगवान् सिद्धांतपारगामी अखण्डितप्रतापाज्ञोऽप्रमत्तया रुपश्रिया च श्रीगौतमप्रतिमो गूर्जर-मालव-मरुस्थली-कुंकुणादिदेशेष्वशेषेष्वप्रतिबद्धविहारी षष्ठाऽष्टमादितपः कुर्वन्नपि यावज्जीवं घृताऽतिरिक्तविकृतिपंचकपरिहारी मादृषामपि शिष्याणां श्रुतादिदाने वैश्रमणाऽनुकारी अनेकवारैकादशांगपुस्तकशुद्धिकारी। किंबहुना ! तीर्थकरइव हितोपदेशादिना परोपकारी सर्वजनप्रतीतः ॥

तस्य वि० त्रिपंचाशदधिके पंचदशशत१५५३वर्षे जामलास्थाने जन्म, द्वाषष्ठ्यधिके १५६२ दीक्षा, सप्ताशीत्यधिके १५८७ सूरिपदं, द्वाविंशत्यधिकषोडशशत१६२२वर्षे वटपल्लयामनशनादिना सम्यगाराधनपुरस्सरं स्वर्गः॥

५८--अडवण्णेत्ति, श्रीविजयदानसूरिपट्टेष्टपञ्चाशत्तमाः श्रीहीरविजयसूरयः॥किंविशिष्टाः? संप्रति तपागच्छे आदित्यसदृशास्तदुद्द्योतकत्वात्। तेषां विक्रमतः त्र्यशीत्यधिके पञ्चदशशतवर्षे १५८३ मार्गशीर्षशुक्लनवमीदिने प्रह्लादनपुरवास्तव्यऊकेशज्ञातीयसा०कुंराभार्यानाथीगृहे जन्म,

षण्णवत्यऽधिके१५९६कार्तिकबहुलद्वितीयायां २ पत्तननगरे दीक्षा, सप्ताऽधिके षोडषशतवर्षे १६०७ नारदपुर्यां श्रीऋषभदेवप्रासादे पण्डितपदम् । अष्टाधिके १६०८ माघशुक्लपञ्चमीदिने नारदपुर्यां श्रीवरकाणकपार्श्वनाथसनाथे श्रीनेमिनाथप्रासादे वाचकपदम् । दशाधिके १६१० सीरोहीनगरे सूरिपदम् ।

तथा येषां सौभाग्यवैराग्यनिःस्पृहतादिगुणश्रेणेरेकमपि गुणं वचोगोचरीकर्तुं वाचस्पतिरप्यचतुरः । तथा स्तम्भतीर्थे येषु स्थितेषु तत्रत्य श्रद्धालुभिः टङ्ककानामेका कोटिः प्रभावनादिभिर्व्ययीकृता । येषां चरणविन्यासे प्रतिपदं सुवर्णटङ्करूप्यनाणकमोचनं पुरतश्च मुक्ताफलादिभिः स्वस्तिकरचनं प्रायस्तदुपरि च रौप्यकनाणकमोचनं चेत्यादि संप्रत्यऽपि प्रत्यक्षसिद्धम् ।

यैश्च सीरोह्यां श्रीकुन्थुनाथबिम्बानां प्रतिष्ठा कृता । तथा नारदपुर्यामनेकानि जिनबिम्बानि प्रतिष्ठितानि । तथा स्तम्भतीर्थाऽहम्मदावादपत्तननगरादौ अनेकटङ्कलक्षव्ययप्रकृष्टाभिरनेकाभिः प्रतिष्ठाभिः सहस्रशो बिम्बानि प्रतिष्ठितानि । येषां च विहारादौ युगप्रधानसमानाऽतिशयाः प्रत्यक्षसिद्धा एव ।

तथाऽहम्मदावादनगरे लुङ्कामताऽधिपतिः ऋषिमेघजीनामा स्वकीयमताऽऽधिपत्यं "दुर्गतिहेतु"रिति मत्वा रज इव परित्यज्य पञ्चविंशतिर२५मुनिभिः सह सकलराजाधिराजपातिसाहिश्रीअकब्बरराजाज्ञापूर्वकं तदीयाऽऽतोद्यवादनादिना महामहपुरस्सरं प्रव्रज्य यदीयपादाम्भोजसेवापरायणो जातः । एतादृशं च न कस्याप्याचार्यस्य श्रुतपूर्वम् । ×

× कुंअरजीऋषिशिष्येण मेघजी ऋषिणा त्रिंशता मुनिभिः साकमकबरपातिसाहिदत्ताऽऽगरावास्तव्यरामशाहसूनुस्थानसिंहाऽऽनीततूर्यनिनादपुरस्सरं दीक्षा जगृहे ।

—इति हीरसौभाग्यकाव्ये ॥

सप्तविंशतिशिष्यैर्जगृहे । इति विजयप्रशस्तिकाव्यवृत्तौ ॥

तस्य वि० सं० १६२९ वर्षे अहमदावादे श्रीविजयसेनसूरिहस्तेन दीक्षा, वि० सं० १६५६ वर्षे वै० शु० ४ सोमदिने स्तंभतीर्थे श्राद्धमालदेवकृतविजयदेवसूरिपदमहोत्सवे उपाध्याय पदं ॥ तद्वितीयवर्षे एव शंखेश्वरतीर्थे लुंपाकमतत्यागिश्रीनयविजयस्यापि उपाध्यायपदम् ॥

किञ्च । येषामशेषसंविग्नसूरिशेखराणामुपदेशात् सहस्रशो गजानां लक्षशो वाजिनां गूर्जर--मालव--विहार--अयोध्या--प्रयाग--फतेहपुर--दिल्ली--लाहुर--मुलतान--क्याबिल--अजमेर--बङ्गालाद्यभिधानानामनेकदेशसमुदा-यात्मकानां द्वादशसूबानां चाऽधीश्वरो महाराजाधिराजशिरःशेखरः पातिसाहिश्रीअकब्बरनरपतिः स्वकीयाऽखिलदेशेषु षाण्मासिकाऽमारिप्रवर्त्तनं, जीजायाऽभिधानकरमोचनं च विधाय सकललोकेषु जाग्रत्प्रभावभवनं श्रीमज्जिनशासनं जनितवान् । तद्व्यतिकरो विस्तरतः श्रीहीरसौभाग्यकाव्यादिभ्योऽवसेयः । समासतस्त्वेवम्—

एकदा कदाचित् प्रधानपुरुषाणां मुखवार्त्तया श्रीमद्गुरूणां निरुपमशमदमसंवेगवैराग्यादिगुणगणश्रवणतश्चमत्कृतचेतसा पातिसाहिश्रीअकब्बरेण स्वनामाङ्कितं फुरमानं प्रेष्याऽतिबहुमानपुरस्सरं गन्धारबन्दिरात् दिल्लीदेशे आगराख्यनगरासन्नश्रीफतेपुरनगरे दर्शनकृते समाकारिताः सन्तोऽनेकभव्यजनक्षेत्रेषु बोधिबीजं वपन्तः श्रीगुरवः क्रमेण विहारं कुर्वाणाः विक्रमत एकोनचत्वारिंशदधिकषोडशशतवर्षे १६३९ ज्येष्ठबहुलत्रयोदशीदिने तत्र संप्राप्ताः । तदानीमेव च तदीयप्रधानशिरोमणिशेषश्री अबलफजलाख्यद्वारा उपाध्यायश्रीविमलहर्षगणिप्रभृत्यनेकमुनिनिकरपरिकरिताः श्रीसाहिना समं मिलिताः । तदवसरे च श्रीमत्साहिना सादरं स्वागतादि पृष्ट्वा स्वकीयास्थानमण्डपे समुपवेश्य च परमेश्वरस्वरूपं, धर्मस्वरूपं च कीदृशं कथं च परमेश्वरः प्राप्यत इत्यादि धर्मगोचरो विचारः प्रष्टुमारेभे । तदनु श्रीगुरुभिरमृतमधुरया गिराऽष्टादशदोषविधुरपरमेश्वरपञ्चमहाव्रतस्वरूपनिरूपणादिना तथा धर्मोपदेशो ददे यथा आगराद्रङ्गतोऽजमेरनगरं यावदध्वनि प्रतिक्रोशं कूपिकोपेतमनारान्विधाय स्वकीयाखेटककलाकुशलताप्रकटनकृते प्रतिमनारं शतशो हरिणविषाणारोपणविधानादिना प्राग् हिंसादिकरणरतिरपि स भूपतिर्दयादानयतिसङ्गतिकरणादिप्रवणमतिः सञ्जातः ।

ततोऽतीवसन्तुष्टमनसा श्रीसाहिना प्रोक्तम् । यत् पुत्रकलत्रधनस्वजनदेहादिषु निरीहेभ्यः श्रीमद्भ्यो हिरण्यादिदानं न युक्तिमत् । अतो यदस्मदीयमन्दिरे पुरातनं जैनसिद्धान्तादिपुस्तकं समस्ति, तज्ज्ञात्वाऽस्माकमनुग्रहो विधेयः । पश्चात् पुनःपुनराग्रहवशात् तत्समादाय श्रीगुरुभिः आगराख्यनगरे चित्कोशतयाऽमोचि । तत्र साधिकप्रहरं यावद्धर्मगोष्ठीं विधाय श्रीमत्साहिना समनुज्ञाताः श्रीगुरवो महताडम्बरेण उपाश्रये समाजग्मुः । ततः सकलेऽपि लोके प्रवचनोन्नतिः स्फीतिमती सञ्जाता ।

तस्मिन् वर्षे आगराख्यनगरे चतुर्मासककरणान्तरं सुरीपुरे श्रीनेमिजिनयात्राकृते समागतैः श्रीगुरुभिः पुरातनयोः श्रीऋषभदेव-श्रीनेमिनाथसम्बन्धिन्योर्महत्योः प्रतिमयोस्तदानीमेव निर्मितश्रीनेमिजिनपादुकायाश्च प्रतिष्ठा कृता । तदनु, ॥ आगराख्यनगरे सामानसिंहकल्याणमल्लकारितश्रीचिन्तामणिपार्श्वनाथादिबिम्बानां प्रतिष्ठा शतशः सुवर्णटङ्कव्ययादिना महामहेन निर्मिता । तत्तीर्थं च प्रथितप्रभावं सञ्जातमस्ति ।

ततः श्रीगुरवः पुनरपि फतेपुरनगरे समागत्य श्रीसाहिना साकं मिलिताः । तदवसरे च प्रहरं यावद्धर्मप्रवृत्तिकरणानन्तरं श्रीसाहिरवदत् यत् श्रीमन्तो मया दर्शनोत्कण्ठितेन दूरदेशादाकारिताः । अस्मदीयं च न किमपि गृह्यते । तेनाऽस्मत्सकाशात् श्रीमद्भिः सचित्तं याचनीयं येन वयं कृतार्था भवामः । तत् सम्यग्विचार्य श्रीगुरुभिस्तदीयाखिलदेशेषु पर्युषणापर्वसत्काऽष्टाह्निकायाममारिप्रवर्त्तनं बन्दिजनमोचनं चायाचि, ततो निर्लोभताशान्तताद्यतिशयितगुणगणातिचमत्कृतचेतसा श्रीसाहिना अस्मदीयान्यपि चत्वारि दिनानि समधिकानि भवन्त्विति कथयित्वा स्ववशीकृतदेशेषु श्रावणबहुलदशमीतः प्रारभ्य भाद्रपदशुक्लषष्ठीं यावदमारिप्रवर्त्तनाय द्वादशदिनामारिसत्कानि काञ्चनरचनाञ्चितानि स्वनामाङ्कितानि षट् फुरमानानि त्वरितमेव श्रीगुरूणां समर्पितानि । तेषां व्यक्तिः—प्रथमं गूर्जरदेशीयं, द्वितीयं मालवदेशसत्कं, तृतीयं अजमेरदेशीयं, चतुर्थं दिल्लीफतेपुरदेशसम्बन्धि, पञ्चमं लाहुरमुलता

नमण्डलसत्कम्, श्रीगुरूणां पार्श्वे रक्षणाय षष्ठं देशपंचकसम्बन्धि साधारणं चेति। तेषां च तत्तद्देशेषु प्रेषणेनाऽमारिपटहोद्घोषणवारिणा सिक्ता सती पुराऽज्ञायमाननामाऽपि कृपावल्ली सर्वत्रार्याऽनार्यकुलमण्डपेषु विस्तारवती बभूव।

तथा बन्दिजनमोचनस्याप्यङ्गीकारपुरस्सरं श्रीसाहिना श्रीगुरूणां पार्श्वादुत्थाय तदैवाऽनेकगव्यूतमिते डाबरनाम्नि महासरसि गत्वा साधुसमक्षं स्वहस्तेन नानाजातीयानां देशान्तरीयजनप्राभृतीकृतानां पक्षिणां मोचनं चक्रे। तथा प्रभाते कारागारस्थबहुजनानां बन्धनभञ्जनमप्यकारि। एवमनेकशः श्रीमत्साहेर्मिलनेन श्रीगुरूणां धरित्रीमरुमण्डलादिषु श्रीजिनप्रासादोपाश्रयाणामुपद्रवनिवारणायानेकफुरमानविधापनादिना प्रवचनप्रभावनादिप्रभावो यो लाभोऽभवत् स केन वर्णयितुं शक्यते ?।

तदवसरे च संजातगुरुतरगुरुभक्तिरागेण मेडतीयसा० सदारंगेण मार्गणगणेभ्यो मूर्तिमद्गजदानद्विपशदऽश्वदानलक्षप्रासादविधानादिना, दिल्लीदेशे श्राद्धानां प्रतिगृहं सेरद्वयप्रमाणखण्डलम्भनिकानिर्माणादिना च श्रीजिनशासनोन्नतिश्चक्रे। तथैका प्रतिष्ठा सा० थानसिंघकारिता। अपरा च सा० दूजणमल्लकारिता श्रीफतेपुरनगरे ऽनेकटङ्कलक्षव्ययादिना महामहोत्सवोपेता विहिता। किञ्च।

प्रथमचतुर्मासकमागराख्यद्रङ्गे, द्वितीयं फतेपुरे, तृतीयमभिरामाबादे, चतुर्थं पुनरप्यागराख्ये चेति चतुर्मासीचतुष्टयं तत्र देशेकृत्वा गूर्जरदेशस्थश्रीविजयसेनप्रभृतिसंघस्याऽऽग्रहवशात् श्रीगुरुचरणा धरित्रीपवित्रीकरणप्रवणान्तःकरणाः श्रीशेखूजी-श्रीपाहूजी-श्रीदानीआराऽभिधपुत्रादिप्रवरपरिकराणां श्रीमत्साहिपुरन्दराणां पार्श्वे फुरमानादिकार्यकरणतत्परानुपाध्याय श्रीशांतिचंद्रगणिवरान् मुक्त्वा, मेडतादिमार्गे विहारं कुर्वाणा नागपुरे चतुर्मासीं विधाय क्रमेण सीरोहीनगरे समागताः। तत्रापि नवीनचतुर्मुखप्रासादे श्रीआदिनाथादिबिम्बनां श्रीअजितजिनप्रासादे श्रीअजितजिनादिबिंबानां

च क्रमेण प्रतिष्ठाद्वयं विधाय अर्बुदाचले यात्रार्थं प्रस्थिताः तत्र विधिना यात्रां विधाय यावद्धरित्रीदिशि पादावधारणं विदधति तावत् महारायश्रीसुलतानजीकेन सीरोहीदेशे पुरा कराऽतिपीडितस्य लोकस्य अथ पीडां न विधास्यामि, मारिनिवारणं च करिष्यामीत्यादिविज्ञप्तिं स्वप्रधानपुरुषमुखेन विधाय श्रीगुरवः सीरोह्यां चतुर्मासीकरणायाऽत्याग्रहात् समाकारिताः। पश्चात् तद्राजोपरोधेन, तद्देशीयलोकानुकम्पया च तत्र चतुर्मासीं विधायक्रमेण रोहसरोतरामार्गे विहारं कुर्वन्तः श्रीपत्तननगरं पावितवन्तः। अथ पुरा श्रीसूरिराजैः श्रीसाहिहृदयाऽऽलवालरोपिता कृपालतोपाध्यायश्रीशान्तिचन्द्रगणिभिः स्वोपज्ञकृपारसकोशाख्यशास्त्रश्रावणजलेन सिक्ता सती वृद्धिमती बभूव। तदभिज्ञानं च श्रीमत्साहिजन्मसम्बन्धी मासः, श्रीपर्युषणापर्वसत्कानि द्वादशदिनानि सर्वेऽपि रविवाराः, सर्वसंक्रान्तितिथयः नवरोजसत्को मासः सर्वे ईदीवासराः, सर्वे मिहरवासराः, सोफीआनकवासराश्चेति षाण्मासिकामारिसत्कं फुरमानं जीजीआभिधानकरमोचनसत्कानि फुरमानानि च श्रीमत्साहिपार्श्वात्समानीय धरित्रीदेशे श्रीगुरुणां प्राभृतीकृतानीति। एतच्च सर्वजनप्रतीमेव। तत्र नवरोजादिवासराणां व्यक्तिस्तत्फुरमानतोऽवसेया। किञ्च। अस्मिन् दिल्लीदेशविहारे श्रीमद्गुरूणां श्रीमत्साहिप्रदत्तबहुमानतः निष्प्रतिमरूपादिगुणगणानां श्रवणवीक्षणतश्चानेकम्लेच्छादिजातीया अपि सद्यो मद्यमांसाशनजीवहिंसनादिरतिं परित्यज्य सद्धर्मकर्मासक्तमतयः, तथा केचन प्रवचनप्रत्यनीका अपि निर्भरभक्तिरतयः अन्य पक्षीया अपि कक्षीकृतसद्भूतोद्भूतगुणततयश्चाऽऽसन्। इत्याद्यनेकेऽवदाताः षड्दर्शनप्रतीता एव।

तथा श्रीपत्तननगरे चतुर्मासककरणादनु विक्रमतः षट्चत्वारशदधिकषोडषशत१६४६वर्षे स्तम्भतीर्थे सो० तेजपालकारिता सहस्रशो रूप्यकव्ययादिनाऽतीवश्रेष्ठां प्रतिष्ठां विधाय श्रीजिनशासनोन्नतिं तन्वानाः श्रीसुरिराजो विजयन्ते ॥१६॥

सिरिविजयसेणसूरि-प्पमुहेहिं ऽणेगसाहुवग्गेहिं ॥

परिकलिआ पुहविअले, विहरन्ता दिंतु मे भद्दं ॥२०॥

५८ —*श्रीहीरविजयसूरिः ॥५६--तत्पट्टे श्रीविजयसेनसूरिः ॥*

व्याख्या—सिरित्ति, ते च श्री हीरविजयसूरयः संप्रति ५६ विजयसेन सूरिप्रभृत्यनेकसाधुभिः परिकलिताः पृथ्वीतले विहारं कुर्वाणा मे मम भद्रं प्रयच्छन्तु ॥२०॥

॥ इति तवगच्छपट्टावलीसुत्तं सम्मत्तं ॥

इति महोपाध्यायश्रीधर्मसागरगणिविरचिता

श्रीतपागच्छपट्टावलीसूत्रवृत्तिः समाप्ता ॥छ॥

तथा चेयं, श्रीहीरविजयसूरीणां निर्देशात् उपाध्यायश्रीविमल—हर्षगणि—उपाध्यायश्रीकल्याणविजयगणि—उपाध्यायश्रीसोमविजय गणि—पं० लब्धिसागरगणिप्रमुखगीतार्थैः संभूय संवत् १६४८ वर्षेचैत्रबहुल-षष्ठी ६ शुक्रे अहम्मदावादनगरे श्रीमुनिसुंदरसूरिकृतगुर्वावली—जीर्णपट्टा-वली—दुषमासंघस्तोत्रयंत्राद्यनुसारेण संशोधिता । तथापि यत्किंचित् शोध-नार्हं भवति, तत्मध्यस्थगीतार्थैः संशोध्यं ॥

किंचाऽस्याः पट्टावल्याः शोधनात्प्राग् बहव आदर्शाः संजाताः सन्ति ते चास्योपरि संशोध्य वाचनीया नत्वन्यथेति श्रीमत्परमगुरूणामनुशिष्टि-रिति ॥

वाचकशिरोवतंसश्रीमत्कल्याणविजयगणिशिष्यः ।

प्रथमादर्शं सम्यग्विचार्य शित्रविजयगणिरलिखत् ॥१॥

इतिश्रीगुर्वावलीवृत्तिः सम्पूर्णा ॥

पट्टपरंपरएणं वायगसिरिधम्मसायरगुरूहिं ॥

परिसंखाया सिरिमंतसूरिणो दिंतु सिद्धिसुहं ॥२१॥

इयं गाथा शिष्यकृता ॥छः॥छः॥

अनुपूर्त्तिः १—

श्रीतपागणपति गुणपद्धतिः

(कर्त्ता—*उपाध्यायश्रीगुणविजयगणिः*)

अथाग्रेतना पट्टावली पुरतोऽनुसन्धीयते—

सिरविजयसेणसूरी, पट्टे गुणसट्ठिमे अ।

व्याख्या ५६—'सिरिविजयसेणसूरि'त्ति एकोनषष्ठितमे पट्टे श्रीविजयसेनसूरिः। तच्चरित्रं विस्तरतः श्रीविजयप्रशस्तिकाव्यतोऽवसेयं समासतस्त्वेवम्-संवत्१६०४वर्षे नारदपुर्यां जन्म, सं०१६१३वर्षे पितृमातृभ्यां सह श्रीविजयदानसूरिहस्ते दीक्षा, ततः श्रीहीरविजयसूरिभिः सर्वशास्त्राणि पाठयि वा डीसाख्यग्रामे ध्यानं कृत्वाः सं० १६२८वर्षे फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां श्रीअहम्मदावादे सूरिपदं प्रदत्तं। तदनन्तरं सर्वप्रकारेण श्रीतपागच्छे ज्ञानदर्शनचारित्रादि समृद्धिः शिष्याणां श्रावकाणां च वृद्धिश्च जाता। यतस्तस्मिन् वर्षे ऋषिमेघजीमुख्या लुङ्काख्यमतमुख्यास्तत्रत्याधिपत्यं हित्वा सर्प्पः कञ्चुलिकामिव तत्कुमतवासनां त्यक्त्वा श्रीतपागच्छगुरूणां शिष्यतां प्राप्ताः, तत्स्वरूपं तु प्राग् निरूपितं। ततः श्रीहीरविजयसूरयः १६३९वर्षे शाहिश्रीअकब्बरेण आकारिता यथा सन्मानिताः, तद्व्यतिकरोऽपि पूर्वं प्रकाशितः। ततः क्रमेण श्रीहीरविजयसूरयः श्रीविजयसेनसूरिभिः सार्द्धं श्रीराजधन्यपुरे चतुर्मासीमासीनास्तस्मिन्नवसरे लाहोरनगरस्थेन श्रीअकब्बरसुरत्राणेन श्रीमदाचार्यगुणगणाकर्णनप्रीतान्तःकरणेन तदाकारणाय स्फुरन्मानं प्रैषि। ततः श्रीगुरूणामाज्ञां शेषामिवशीर्षे निधाय ततश्चलन्तः पत्तनप्रभृतिनगराणि बहून् ग्रामांश्च पवित्रयन्तोऽनेकसङ्घलोकैः पूजिताः परिवृताश्च श्रीअर्बुदाचलतीर्थयात्रां

विधाय श्रीसीरोहीनगरे प्राप्तास्तदा तन्नायकेन राज्ञा श्रीसुरत्राणसञ्ज्ञेन, बह्वाडम्बरपूर्वकं सन्मानिताः । ततः क्रमेण श्रीराणपुर–वरकाणकपार्श्वनाथादियात्रां कृत्वा स्वजन्मनगरीं नारदपुरीं च गत्वा क्रमेण मेदनीपुर–डीण्डूयाणक–वैराट–महिमनगरादिषु भव्यलोकान् कोकान् सूर्या इव श्रीसूरिधुर्या उद्बोधयन्तो लोधिआणाग्रामे समेयुः । तत्र श्रीशाहिमान्यशेखश्रीअबलफजलभ्रातृजन्मा फयजीनामा श्रीसूरीन्नन्तुमागतः । तत्रानेकलोकविधीयमानबहुमानस्वरूपं स्पष्टाष्टावधानादिसाधकशिष्यश्रेणिस्वरूपं च दृष्ट्वाऽतीवचमत्कृतचेतास्ततस्त्वरितं लाहोरनगरे गत्वा श्रीशाहिपुरतस्तमुदन्तं यथादृष्टमभ्यधात् । तच्छ्रुत्वा शाहिरपि घनाघनान्नीलकण्ठ इव श्रीगुरून् द्रष्टुं सोत्कण्ठोऽभूत् । ततः क्रमेण श्रीसूरयोऽपि शाहिप्रदत्तोद्यद्वाद्यवादनानेकानेकतुरङ्गमविचित्रवैजयन्तीतोरणधोरणीरमणीयमहामहपुरस्सरं लाभपुरं पुरं प्रविश्य तद्दिन एव श्रीशेखजीदरबारीरामदासप्रमुखप्रधानपुरुषद्वारा काश्मीरीमहलनाम्नि धाम्नि श्रीशाहेर्मिलिताः । शाहिरपि गुरून् वीक्ष्य परमप्रमोदमेदुरः सन् श्रीहीरविजयसूरीणामुदन्तं वर्त्मनि कुशलोदन्तं च पृष्टवान् । श्रीगुरुभिरपि श्रीहीरसूरिभिर्भवतां धर्माशीर्वादो दत्तोऽस्तीत्याद्युक्तं । भृशं तुष्टः सन्नष्टावधानानि द्रष्टुकामोऽस्मीति गुरूनाचष्ट । ततो गुर्वाज्ञया गुरुशिष्यश्रीनन्दविजयाभिधविबुधसाधिताष्टावधानानि दृष्ट्वा वचनागोचरं चमत्कारं प्राप्तः । प्रसन्नः सन् महाऽऽडम्बरपूर्वकं स्वस्थानं प्रापयतामिति स्वजनानादिश्य स्वं धामागमत् । अथेष्टवैद्योपदिष्टमितिमन्यमानै राजमान्यैर्वदान्यैस्तत्रत्यास्तिकजनैरष्टदिनानि यावत् केवलं रूप्यकैरेव प्रभावनाद्याडम्बरस्तथा कृतो यथा जैनं राज्यमेकच्छत्रमिवजातमिति । गुरूणां गौरवमसहमानेन केनचिद् भट्टेन–अमी जैना जगदीश्वरं १ भास्करं २ गंगां ३ च नमन्यन्ते तेन हे श्रीशाहे ! भवादृशां भूभुजां नैतेषां दर्शनं योग्यमिति श्रुत्वा गुप्तकोपो भूपोऽन्यदा समायातान् श्री अनूचानपुङ्गवान् तद्द्विजोक्तमुक्तवान् । ततस्तत्खलविलसितं मत्वा तत्कालोत्पन्नस्वसमयपरसमयस्मृतिसूक्तिशुक्तिसमुद्रैः श्रीसूरीन्द्रैस्तदीयशास्त्रसम्मत्यैव स्वाभीष्टजगदीश्वर–स्वरूपं निरूपितं ।

यथा—यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो,
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्मेति मीमांसकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्त्तेति नैयायिकाः,
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥१॥

अनेन तद्ग्रन्थोक्तकाव्येन तदीयशास्त्रशस्त्रेणैव तन्मदच्छेदश्चक्रे । इति प्रथमं जगदीश्वरांगीकारप्रश्नोत्तरम् ।

अधामधामधामेदं, वयमेव स्वचेतसि ।
यस्यास्तव्यसने प्राप्ते, त्यजामो भोजनोदके ॥१॥

इत्यादियुक्तिभिर्द्वितीयं सूर्याङ्गीकारोत्तरम् ।

तथा गङ्गोदकमन्तराऽस्माकं देवप्रतिष्ठैव न स्यात्,इति तृतीयं गङ्गाङ्गीकारोत्तरम् । इति गुरूक्तवाक्यैः प्रहृष्टः शाहिः श्रीगुरूणां सन्मानं दत्वा खलांस्तिरस्कृतवान् । ततस्तत्र द्रङ्गे श्रीशाहेराग्रहेण चतुर्मासकद्वयं विधाय एकदा पुण्योपदेशक्षणे प्रमुदितेन शाहिना किंचिद्याचध्वमित्युक्ते श्रीसूरिः स्माह—हेश्रीशाहे ! गो १, वृषभ २, महिष ३, महिषी ४, हननं, मृतद्रव्यादानं ५, बन्दिग्रहणं ६ चेति षड्जल्पास्तव जगज्जनदुःखभंजकस्य नार्हन्तीति, एतेषां जल्पानां हानमेवास्माकं मुदां श्रीशाहीनां च सम्पदां निदानमित्युक्तेस्तुष्टेन श्रीशाहिना तत् षड्जल्पस्फुरन्मानं श्रीसूरिनाम्नैव सर्वत्र प्रहितम् । अस्मिन्नवसरे श्रीहीरसूरिभिर्बाधावशादन्तिममिलनाय लेखप्रेषणपूर्वमाकारिताः संतस्तत्रविचित्रवादि लब्धजयवादाः श्रीसूरिपादाः शीघ्रमेव गुर्वाकारणं कारणमवमत्य चतुर्मासक मध्येऽपि चलन्तोऽविच्छिन्नप्रयाणैर्मरुमण्डलमण्डलीभवन्तः क्रमेण श्रीपत्तनं प्राप्तवन्तः । तत्र श्राहीरसूरीणां स्वर्गमनमूनाख्यद्रङ्गे सञ्जातं श्रुत्वा तत्संसारस्वभावमनुभाव्यत्यक्तशोकाः सुखप्राज्यंतपागच्छसाम्राज्यं पालयामासुः ।

अथ तेषां सुकृतकृत्यानि लिख्यते । यथा—तैश्चम्पानेरदुर्गे १६३२वर्षे प्रतिष्ठाकृता। ततः सूरतिबन्दिरे श्रीमिश्र—चिन्तामणिप्रमुखेषु भट्टेषु सभ्येषु सत्सु अनेकपण्डितपर्षदि श्रीसूरिभिः समं विवादं कुर्वन् श्रीभूषणनामा दिगम्बराचार्यो यथातथाऽपसिद्धान्तं जल्पन् जैनशास्त्रशैवशास्त्रपारगैर्गुरुभिर्निर्जितस्ततः काकनाशंननाश । अथ निश्शेषलोकक्रियमाणजयारवपूर्वकं श्रीसूरयःस्वं

पदं प्रापुः । ततः क्रमाद् राजनगरे श्रीखानखानाख्यक्ष्मापपर्षदि जयश्रियं शिश्रियुः । अथ तत्रैव श्रीविद्याविजयनामकं स्वपदयोग्यं शिष्यं दीक्षयित्वा, श्रा० अहिवदेकारितां प्रतिष्ठां, पुनर्गन्धारबन्दिरे सा०इन्द्रजीकारितां श्रीवीरप्रतिष्ठां, पुनः स्तम्भतीर्थे श्रा०धनाईकारितां प्रतिष्ठां च कृत्वा तत्र चतुर्मासीं चक्रुः । ततः पारणे मेवातदेशादागतान् श्रीहीरसूरीन् सीरोहीनगरे नत्वा स्तम्भतीर्थं पुनरागत्य प० वजिआराजिआख्यकारितश्रीचिन्तामणिपार्श्वनाथप्रतिष्ठां कृत्वा, क्रमेण १६५४ वर्षे ऽहम्मदावादे भूमध्यान्निर्गतां श्रीविजयचिंतामणिपार्श्वमूर्तिं शकन्दरपुरेऽस्थापयत् । पुनस्तत्रैव वर्षे सा० मोटाख्यकारितां प्रतिष्ठां, पुनः दो० लहुआख्यकारितां प्रतिष्ठां कृत्वा लाटा [प] ल्यां ध्यानं विधाय क्रमात् श्रीगुर्जरतीर्थयात्रां श्रीसौराष्ट्रे शत्रुञ्जयादितीर्थयात्रां च कृत्वा स्तम्भतीर्थे श्रीविजयदेवसूरीणां सूरिपदं दत्वा पुनर्वर्षद्वयान्ते १६५८वर्षे पत्तने गच्छानुज्ञां नंदिं च कृत्वा श्रीशङ्खेश्वरतीर्थयात्रायै समेतात् श्रीआचार्यसंयुतान् श्रीपूज्यान् द्वादशशतसंकटः सप्तशतीकरभतुरगोद्भटानेकसुभटविकटः सङ्घपतिहेमराजसङ्घो मरुस्थलीतः शत्रुञ्जययात्रार्थं व्रजन् महोत्सवेन प्राणमत् । ततःश्रीगुरवो राजनगरे चतुर्मासीं चक्रुस्तदा तत्रत्यैः श्राद्धैः श्रीगुरुवाक्प्रबुद्धैः पञ्चसप्तत्याद्यङ्गुलार्हत्प्रतिमाणां महाडम्बरविशिष्टाः षट्प्रतिष्ठाः कारिताः । पुनस्तत्रत्येन सं०सूराख्येन प्रतिश्राद्धगृहं महिमुन्दिकां प्रयच्छता श्रीअर्बुदाद्रिश्रीराणपुरादिसकलतीर्थयात्रामासूत्र्य क्षेमेणागत्य श्रीसूरीन् प्रणत्य महती प्रभावना कृता । किंबहुना तत्राब्दे श्राद्धैर्महिमुन्दिकालक्षमेकं व्ययीकृतं । ततो राजधन्यपुरे प्रतिष्ठाद्वयं पुनः स्तम्भतीर्थे प्रतिष्ठामेकामकव्बरपुरे च गंधारबन्दिरे च प्रतिष्ठाद्वयं कृत्वा क्रमेण सौराष्ट्रराष्ट्रसङ्घाग्रहेण श्रीशत्रुञ्जययात्रां विधाय तत्रदेशे चतुर्मासकत्रयं प्रतिष्ठाऽष्टकं च कृत्वा रैवताद्रियात्रापूर्वं नवीननगरे ज्येष्ठस्थितिं स्थित्वा श्रीजामनामकं नृपं धर्मोपदेशतस्तुष्टं कृत्वा ततश्चलन्तः श्रीशंखेश्वरपार्श्वं प्रणम्य राजनगरे चतुर्मासीं बह्वाडम्बरविशिष्टां प्रतिष्ठां चतुष्टयीं च चक्रुः । इत्याद्यनेकसुकृत्यैर्जिनशासनं प्रभावयन्तोऽनेकसहस्रजिनप्रतिमाः पञ्चाशत्प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठापयन्तो विमलाचलतारङ्गनारंगपुरशङ्खेश्वरपंचासरराणपुरारासणविद्या-

नगरादिषु जीर्णोद्धारान् पुण्योपदेशद्वारा कारापयन्तो हस्तसिद्धया च श्रीगौतमावतारा इव, बुद्ध्या चाभयकुमारा इव, विद्यया चाभिनववज्रकुमारा इव, कृतज्ञतया श्रीरामचन्द्रा इव, धैर्येण गिरीन्द्रा इव, आज्ञया च सुरेन्द्रा इव, एकस्यार्थस्य शतार्थित्वेन श्रीसोमप्रभसूरय इव श्रीविजयसेनसूरयोऽष्टौ वाचकपदानि सार्द्धशतपण्डितपदानि च दत्वा द्विसहस्रीमितसंयतिसमुदायस्याशां पूरयित्वा सवाईहीरविजयसूरिरितिबिरुद्धारका भट्टारकत्वं विंशतिवर्षाणि प्रपाल्याकब्बरपुरे १६७१ वर्षे ज्येष्ठकृष्णैकादश्यां स्वर्गं जग्मुः ।

सट्ठिअमे सिरिविजयदेवसूरी संवइ तवगणतरणितुल्लो ॥१॥२१॥

षष्टितमे पट्टे श्रीविजयदेवसूरिः । तद्वृत्तमपि यथादृष्टं कियल्लिख्यते यथा श्रीराजदेशमण्डले ईडरदुर्गे सम्वत् १६३४ वर्षे जन्म । ततो नवमे वर्षे– १६४३ वर्षे जनन्या सह दीक्षा । ततः १६५५ वर्षे पण्डितपदं । ततोनुक्रमेण १६५६ वर्षे स्तम्भतीर्थे सूरिपदं । तद्व्यतिकरो यथा–सर्वव्यवहारिश्रेणिशिरोमणि सा० श्रीमल्लनामा स्वभ्रातृजन्मना सा० सोमाख्येन सह श्रीआचार्यपदस्थापनार्थमर्थव्ययं कर्त्तुकामः प्रकामप्रमोदेन मरुमेदपाटलाटसौराष्ट्रकच्छकुङ्कणादिदेशेषु गुर्जरदेशे च प्रतिग्रामं प्रतिनगरं कुंकुमपत्रिकाप्रेषणा पूर्वं सङ्घलोकान् सहस्रशः समाहूय तपागणयतियतिनीसप्तशतीमितपरिकरमाकारितवान् । अथ सकलसङ्घमिलनानन्तरं श्रीमल्लसाधुना बन्धुरताऽधरीकृतसुरमन्दिरे निजमन्दिरे दिव्यदुकूलकमनीयमण्डपं शक्रमण्डपमिव निर्माय विज्ञप्ताः श्रीविजयसेनसूरयो वैसाखशुद्धचतुर्थ्यां चतुर्थे रवियोगे कुमारयोगे मृगांकमृगशिरःसंयोगाद् अमृतसिद्धियोगेऽपि च श्रीविजयदेवसूरिरिति नामस्थापनपूर्वकं सूरिपदं ददुः । अथ श्रीमल्लसाधुना संतुष्टेन सङ्घभक्तिस्तथाचक्रे यथा कल्पवृक्ष एवायमिति मेने । किंबहुना तस्मिन्महे सा० श्रीमल्लेन दशसहस्ररूप्यकव्ययः कृतः । ततस्तदग्रेतनदिने तत्रत्येन ठक्करकीकाख्येन तत्पदोत्सवनिमित्तमेवाष्टसहस्ररूप्यकव्ययपूर्वं प्रतिष्ठा कारिता । एवं सर्वसंख्यया श्रीविजयदेवसूरीणां पदमहे पंचाशत्सहस्रप्रमिता महिमुन्दिका व्ययिताः । ततः १६५८ वर्षे पत्तने परीक्षकसहस्रवीरसंज्ञेन पञ्चसहस्रमहिमुन्दिकाव्ययपूर्वकं गच्छानुज्ञानन्दिम-

हश्चक्रे । अथ श्रीविजयदेवसूरयोऽहम्मदावादे प्रतिष्ठाद्वयं, पत्तने प्रतिष्ठाचतुष्टयं, स्तम्भतीर्थे प्रतिष्ठात्रयं बहुद्रव्यव्ययपूर्वकं कृत्वा स्वजन्मभूमौ श्रीइलादुर्गे चतुर्मासीं चक्रुः । तदा तत्रत्यैः संघलोकैरनेके महोत्सवाः कृताः । तन्माहात्म्यहृष्टो राजा श्रीकल्याणमल्लनामा [चिन्ता] मणिपाठिमहाभट्टचट्टवेष्टितः प्रतिश्रयं प्राप्तस्तर्कवादमकारयत् । तदा तेषां सूरीणां पुण्योदयात्पार्श्ववर्तिभिर्वादिदर्पसर्पगरुड़रत्नैः पण्डितपद्मसागरगणिगीतार्थशिरोरत्नैरेव सर्वेऽपि भट्टास्तथा निर्जिता यथा लज्जिताः सन्तोऽहो गुरूणां गुरुतेति स्तुवन्तो राजेन्द्रमुख्याः स्वाश्रयं प्रापुः । तदा तत्र महती प्रभावना जाता । ततो बृहन्नगरे वीरप्रतिष्ठां कृत्वा राजनगरे चतुर्मासीं स्थिताः । तत्रावसरे इलादुर्गे श्रीऋषभदेवबिम्बं यवनैर्व्यङ्गितं ततस्तत्प्रमाणमेव नवीनं बिम्बं श्राद्धैर्विधाप्य नटीपद्रे महत्यां प्रतिष्ठायां श्रीसूराभः प्रतिष्ठाप्य गिरिशिरःस्थचैत्यचैत्योद्धारपूर्वकं स्थापितं । ततोऽन्यदा श्रीमण्डपाचले श्रीअकब्बरपातिशाहिपुत्रजिहांगरश्रीसलेमशाहिः श्रीसूरीन् स्तम्भतीर्थतः सबहुमानमाकार्य गुरूणां मूर्तिं रूपस्फूर्तिं च वीक्ष्य वचनागोचरं चमत्कारमाप्तवान् । ततः समये श्रीगुरुभिः समं धर्मगोष्ठीक्षणे विचित्रधर्मवार्त्तां पृष्ट्वा साक्षाद् गुरुस्वरूपं निरुपमं दृष्ट्वा च स्वपक्षीयैः परैः प्राक् किंचिद् व्युद्ग्राहितोऽपि शाहिस्तदा तत्पुण्यप्रकर्षेण हर्षितः सन् श्रीहीरसूरीणां श्रीवियसेनसूरीणां च पट्टे एत एव पट्टधराः सर्वाधिपत्यभाजो भवन्तु, नापरः कोऽपि कूपमण्डूकप्राय इत्यादि भूयः प्रशंसां सृजन् जिहांगीरीमहातपाबिरुदं दत्तवान्, अनुज्ञापितवांश्च तपागच्छश्रावकेन्द्रचन्द्रपालादीन् यदस्मदीयदक्षिणीयमहावाद्यवादनपूर्वकं गुरून् स्वाश्रयं प्रेषयन्तु यथा युष्मद्गुरून् वयमपि गवाक्षस्था निरीक्ष्य हृष्टा भवामः । इत्यादिवचनोत्साहितैस्तै राजमान्यसंघैर्दाक्षिणात्यमालवीयसंघैश्च तथा महोत्सवाः कृता यथा तपागणसङ्घमुखे पूर्णिमाऽवतीर्णा अन्येषां च गुरुद्विषां मुखेऽमावास्येति । किंबहुना ? यथा पुराऽकब्बरेण श्रीहीरसूरयस्ततोऽप्याधिक्येन श्रीविजयदेवसूरयः शाहिजिहांगीरेण सन्मानिता इति । अथ श्रीगुरुवो गुर्जरदेशान्तर्भूत्वा सौराष्ट्रदेशसुन्दरे द्वीपबन्दिरे फरङ्गीपातशाहिप्रदत्तव्याख्यानानुज्ञापूर्वं चतुर्मासकद्वयीं

च कृत्वा क्रमेण हलारदेशे श्रीनवानगरे चानेकलोकान् बोधिदानेन सुखयन्तः श्रीशत्रुञ्जये यात्रां विधाय स्तम्भतीर्थे चतुर्मासकं च निर्माय सावलीस्थाने सोनीरत्नसीक्रियमाणामारिपटहप्रदाने तीव्रक्रियाकष्टानुष्ठानपूर्वकं सूरिमंत्र-सत्कं मासत्रयध्यानं विधायाक्षयतृतीयायां सभामभ्येयुः। ततस्तत्रैव चतुर्मासीं प्रतिष्ठाद्वयीं च कृत्वा श्रीइलादुर्गे प्रतिष्ठात्रयं कृतवन्तः। ततः संघेन सार्द्धं श्रीआरासणादितीर्थयात्रां कुर्वाणाः पोसीनाख्यपुरे पुराणानां पंचप्रासादानां श्राद्धानामुपदेशद्वारेण बहुद्रव्यव्ययसाध्यमपि तदुद्धारं कारितवन्तः। क्रमेण चारासणे मूलनायकाः पुनः प्रतिष्ठाविषयीकृत्य स्थापिताः। कालान्तरेण च इलादुर्गे श्रीकल्याणमल्लनरेन्द्राग्रहादागत्य तत्रस्थ सा०सहजूगृहे महामहेन-१६८१ वर्षे वैशाखशुद्धषष्ठ्यां श्रीविजयसिंहसूरीन् स्वपदेऽस्थापयत्।

तन्महोत्सवात्तुष्टः कल्याणराजोऽपि रणमल्लचोकीनामके गिरिशृंगे श्रीगुरून् समाहूय धर्मगोष्ठीं विधाय तत्स्थानं नवीनचैत्यस्थापनाय गुरुपुरः प्राभृतीकृतवान्। अथ च तत्र चैत्यमद्यापि निष्पाद्यमानमस्ति। ततश्चतुर्मासान्ते मरुदेशसङ्घघनाग्रहात् श्रीगुरवोऽनूचानान्विता अनेकलोकपतिवृताः श्रीअर्बुदाचलतीर्थं नमस्कृत्य सा० तेजपालेन विधीयमानां महामहमनोहरां श्रीसीरोहीमागत्य चतुर्मासीं तस्थुः। तत्र च श्रीजाबलपुरप्रमुखतत्परिसरसंङ्घलोकैर्जङ्गमं तीर्थमागतं मन्यमानैर्बहुतरद्रव्यव्ययपूर्वकमागत्य वन्दिताः। तत्रावसरे सादडीसत्कलुम्पाकैश्चैत्यार्चाद्यसद्भावविषयिणी महती जिनशासनाशातना कृता। ततस्तत्रत्यैर्निर्बलैः श्रावकैः सीरोह्यामागत्य श्रीगुरवो विज्ञप्ताः यद्युष्मादृशेषु गुरुषु सत्सु वयं वराकैर्लुम्पाकैः पराभूताः स्मस्तेनास्मत्साहाय्यं विधीयताम्। इत्युक्ते शीघ्रमेव गुरुप्रेषितैर्गीतार्थैरेव तत्र गत्वा तद्द्वेषधारिणो भास्करैर्घूका इव मूकतां प्रापिताः। ततोऽप्युदयपुरे मेदपाटदेशाधीशराणाश्रीकर्णसिंहपार्श्वे गत्वा छन्दःकाव्यादिभिस्तं तोषयित्वा सकलराजलोकपरिकलितायां पर्षदि लुम्पाकान् वादे विजित्य "तपाः सत्या लुङ्काश्चासत्या" इति श्रीराणाजीसत्कं सहीत्यक्षरद्वयीकुंताङ्कितं स्फुरन्मानमानीय सादडीचतुष्पट्टे वाचयित्वा गुरूणां प्रसत्तेस्तपागच्छप्रौढिः प्रौढतमा निर्म्मिता। ततो

योधपुराधीश्वरराजश्रीगजसिंहजीमान्यपरमप्रधानमंत्रिजयमल्लेन श्रीजालोरदुर्गे श्रीगुरूनाकार्य बहुतराडम्बरेण प्रतिष्ठात्रयमन्तरान्तरा चतुर्मासकत्रयकारापणपूर्वकं स्वर्णगिरिशीर्षे चैत्यत्रयं च प्रतिष्ठापितम् ।

१६८४ वर्षे पुनर्जयमल्लमंत्रिणा सहस्त्रशो रूप्यकव्ययेन विजयसिंहसूरीणां गच्छानुज्ञानन्दिकारिता । ततो मेडतानगरे प्रतिष्ठात्रयं विधाय विन्ध्यपुरे चतुर्मासीस्थितान् गुरून् ज्ञात्वा गच्छीयगीतार्थरञ्जितेन राणाश्रीजगत्सिंहजीकेन श्रीवरकाणके पौषदशम्यां समागतानां लोकानां शुल्कमोचनं तदाघाटरोपपूर्वं ताम्रपत्रेणोत्कीर्य श्रीगुरूणां पुरः प्राभृतीकृतं तत्कदाप्यभूतपूर्वं सर्वेषामद्भुतकृत् सञ्जातम् । ततो राणपुरादिषु तीर्थयात्रां कृत्वा झालाश्रीकल्याणजीकेन संमुखमागत्याकारिताः श्रीमेदपाटदेशं पवित्रयन्तः प्रथमं षमणोरग्रामे प्रतिष्ठाद्वयं ततो देवकुलपाटके प्रतिष्ठामेकां, ततो नाहीग्रामे अघोटानगरे चेति प्रतिष्ठापंचककरणपूर्वकं श्रीउदयपुरे चतुर्मासीं चक्रुः । ततस्तत्पारणके गुर्जरत्रां प्रतिचिचिलीपून् दलबादलमहलमध्यस्थितान् श्रीगुरून् श्रीजगतसिंहजीसंज्ञको राणकोऽपि नंतुमागतश्चिरं गुरूमुखचन्द्रे चकोरीकृतचक्षुस्तद्देशनाऽसमसुधां पीत्वा प्रीतः प्रकामं सत्कारसन्मानादि दत्वा गुरूपुरश्चतुरो जल्पान् प्रपन्नवान् । तथाहि–अद्यप्रभृति पिंछोलके उदयसागरे च तटाके मीनजालानि निषिध्यति १, राज्याभिषेकदिने गुरुवारे जीवामारिः कार्या २, स्वजन्ममासे भाद्रपद्राभिधे जीवहिंसा न कार्या ३, मचिंददुर्गे कुम्भलविहारे जीर्णोद्धारः कार्यः ४—इति जल्पचतुष्टयीग्रहणाभिग्रहवन्तं भूमिकान्तं वीक्ष्य सकला अपि लोका भृशमाश्चर्यभाजोऽहो ! गुरूणां कोऽपि लोकोत्तरो महिमातिशय इत्यादिवर्णनपरा जाताः । किंबहुना श्रीकुमारपालभूपालेन श्रीहेमसूरय इव, श्रीराणाजीकेन श्रीगुरवो बहुमेनिरे—इत्यादयः कियन्तोऽवदातो लिख्यन्ते । यतस्तपसा साक्षाद्धन्यागारा इव, सौभाग्येनाभिनववसुदेवावतारा इव, ध्यानमौनक्रियाकष्टानुष्ठानादिना श्रीभद्रबाहुस्वामिन इव, निर्विकृतिविकृतित्यागेन प्रायो भक्तजनगृहाहारत्यागेन च श्रीमानदेवसूरय

इव श्रीविजयदेवसूरयः सूर्या इव भरतभूमिपद्मिनीं प्रतिबोधयन्तो मालवमण्डले उज्जयिन्यादौ दक्षिणदेशे च बीजापुर—बर्हानपुरादौ कच्छदेशे च भुजनगरादौ मरुदेशे च जावालपुर—मेदिनीपुर—घंघाणीग्रामादौ जीर्णोद्धारकारापणपूर्वकमनेकशतार्हत्प्रतिमाः प्रतिष्ठयन्तोऽनेकपण्डितपदानि पाठकपदानि स्थापयन्तो दर्शनादेव हीन्दूतुरुष्कादीनामपि चमत्कारं कुर्वन्तो जीवहिंसादिनिषेधनियमांश्च कारयन्तः—

सिरिविजयसीहसूरिप्पमुहेहिं णेगसाहुवग्गेहिं ।
परिकलिया पुहविअले, विहरिंता दिंतु मे भद्दं ॥२॥२२॥

श्रीविजयसिंहसूरि—प्रभृत्यनेकशतसाधुभिः परिवृताश्चिरं पृथ्व्यां विहरन्तो 'भद्रं दिशन्तु कल्याणं कुर्वन्त्विति गाथार्थः' ॥

तथा स्तम्भतीर्थवासिना सा० देवचन्द्रेण देवीभूय स्वे द्वे भाय सं० १६७३ वर्षोत्पन्नोपाधिमतमोचनाय भृशं प्रोक्तमपि तन्मतं न त्यजतस्तदान्यदा तदीयश्राद्धजेमनवारायां जायमानायां तेन देवेन तत्र पाषाणवृष्टिस्तथा कृता यथा भुक्तिं त्यक्त्वा सर्वेषु नष्टेषु तं देवं प्रकटीभूतं ते प्रोचतुस्त्वं कोऽसि कथं चावां भापयसि? इति प्रोक्ते सोऽवोचत्—अहं भवद्भर्ता देवचन्द्रो देवीभूतोऽन्यैः सप्तभिर्देवैः सह श्रीविजयदेवसूरीणां सांनिध्यं कुर्वाणोऽस्मीति तेन भवतीभ्यामपि स एव गुरुरङ्गीकार्यो येन मद्भयं न भवतीति प्रोक्ते ते अपि श्रीगुरुभक्ते जाते इत्येकं देवसांनिध्यम् १ । तथाऽनयैवरीत्या घोघाख्यबन्दिरवासी सा० सोमजीनामा स्वं कुटुम्बं प्राक्पराङ्मुखमपि देवीभूय प्रतिबोध्य च श्रीविजयदेवसूरिभक्तं कृतवानिति द्वितीयम् २ । तथा श्रीविजयदेवसूरिषु मण्डपाचलं प्रतिचलत्सु सेहरषीनामग्रामस्वामिपुत्रः कमाख्यः परमारः । स च पूर्वं भूतार्त्तत्वेन लोकान् मारयन् पित्रा निगडितस्तदा गुरुवासक्षेपेणैव सज्जीभूत इति महदाश्चर्यकृज्जातमिति तृतीयम् ३ । तथा राजनगरवासी वणिक्पुत्रः सप्तवर्षाणियावच्च ग्रथिलोऽभूत् ततपित्रादिभिः श्रीविजयदेवसूरिकरक्षेपः कारितस्तत्कालमेव सज्जो जात-

श्चेति महदद्भुतमिति चतुर्थम् ४ । तथा मेडतावासी षीमसरागोत्रीयः साथानाख्यो नवमासा(याव क्षेत्रपालगृहीतोऽन्यदा श्रीविजयदेवसूरिवासक्षेपेण सज्जोऽजनि, इति सर्वलोकप्रसिद्धमिति पञ्चमम् ५ । तथा मरुदेशे गुर्जरदेशे दुर्भिक्षे महति सत्यपि श्रीगुरुषु समागतेषु महत् सुभिक्षं जातमित्यादि श्रीविजयदेवसूरीणां देवसानिध्य बहुशो दृष्टमिति ×॥२॥

इति गाथाद्वयं पूर्वपट्टावल्यां प्रयोज्यम् ।

तपगणपतिगुणपद्धति-रेषा गुणविजयवाचकैर्लिलिखे ।
गन्धारबन्दिरीय श्रावकसा० मालजीतुष्ट्यै ॥ १ ॥

इति गुर्वावली प्राचीनगुर्वावल्याः पुरोऽनुसन्धीय सुधीभिर्वाचनीया । ॥ श्रीमंगलमस्तु ॥

× हस्तलिखितग्रंथे अयं पाठः प्रान्ते लिखितोऽस्ति, किन्तु अत्र द्वितीयगाथावृत्त्या अन्त एव मुद्रितः सुकरत्वाय ॥

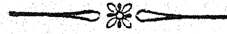
१—श्रीमुनिसुन्दरसूरिशिष्यः श्रीलक्ष्मीभद्रः । ततो लक्ष्मीभद्रीया शाखा निर्गता, तस्यां श्रीहेमविमलसूरिशासनकाले शुभविमला अभूवन् ।

तच्छिष्यामरविजयस्तच्छिष्यकमलविजयाः । येषां वाचकौ उ० गुणविजयगणिः उ० कुशलसागरगणिश्च प्रज्ञांशाः १५ एवं शिष्याः ७० ॥ तच्छिष्यःकविमुख्यो हेमविजयो विजयप्रशस्तिकाव्यकर्ता, द्वितीयःशिष्यो विद्याविजयस्तच्छिष्यः उ० गुणविजयः विजयदेवसूरिसानिध्यात् वि० सं० १६८८ वर्षे ज्ञानपंचम्यां विजयप्रशस्तिकाव्यटीका—विजयदीपिकाकर्ता तपागणपतिगुणपद्धतिकर्ता चेति ॥

अनुपूर्त्तिः—२

श्रीतपगच्छपट्टावलीसूत्रवृत्त्यनुसंधानम्

(कर्त्ता—उपाध्यायमेघविजयगणिः)



ऐं श्रीवीतरागाय नमः ।

अथ प्राक्तनपट्टावलीसूत्रान्तसंहितगाथात्रयव्याख्या यथा—

श्रीविजयसेणसूरी, पट्टे गुणसट्ठिमे सुगुणसिट्ठे ।
वाए साहिसहाए, जेण ठ्ठविओ स जिणधम्मो ॥१॥२१॥

सिरित्ति । श्रीमज्जगद्गुरुबिरुदधारिमहाराजाधिराजपातिसाहिश्रीअकब्बरप्रबोधकारिश्रीहीरविजयसूरिपट्टे एकोनषष्ठितमे श्रीविजयसेनसूरिर्भगवान् जज्ञे । किं विशिष्टः ? सुगुणैः श्रेष्ठः—गुणाः स्वभावजा ज्ञानादयो विभावजा औदार्यादयस्तैरतिशयेन प्रशस्यो वर्णनीयः । येन स्वामिना वादे उपस्थिते श्रीसाहिसभायां स जगत्प्रसिद्धो जिनधर्मः अर्हतां शासनं स्थापितं प्रामाणिकयुक्त्या साधितः । इत्यनेनास्य भगवतः पाण्डित्यातिशयो ध्वन्यते ।

तस्य च प्रभोर्विक्रमात् सं०१६०४वर्षे नारदपुर्यां वृद्धोपकेशशाखीयधोषागोत्रभृत् सा० कमा तद्भार्या कोडीमा तयोर्गृहे जन्म । सं० १६१३ वर्षे मात्रा पित्रा च सह श्रीविजयदानसूरिहस्ते श्रीहीरविजयसूरिनिश्रया दीक्षा । सं० १६२६ पंन्यासपदं, सं० १६२८ वर्षे फाल्गुणसितसप्तम्यां श्रीअहम्मदावादनगरे उपाध्यायपददानपूर्वं आचार्यपदं, सं० १६५२ वर्षे भाद्रसितैकादश्यां तिथौ भट्टारकपदम् । ते च श्रीगुरवो भट्टारकत्वं विंशतिवर्षाणि प्रपाल्य श्रीस्तम्भतीर्थे सं० १६७१ वर्षे ज्येष्ठशुक्लैकादश्यां स्वर्गमलंचक्रुः । एतच्चरितं विस्तरतो विजयप्रशस्तिकाव्याद्धेयम् । किंचिल्लिख्यते—

श्रीगुरुभिः सं० १६३२ वर्षे चांपानेरदुर्गे समहोत्सवमनेकार्हत्प्रतिमाशतानां प्रतिष्ठा कृता। तथा सूरतिबंदिरे श्रीचिन्तामणिप्रमुखानेकसभ्यभट्टसमक्षं श्रीभूषणनामा दिगम्बराचार्यो निर्जितः। तथा 'नमो दुर्वाररागादि-' इत्यस्य श्रीयोगशास्त्राद्यश्लोकस्य सप्तशतान्यर्थाः सूक्तावल्यादिग्रन्थाश्च कृताः। तथा राजनगरे श्रीखांनखानाख्यनवाबपर्षदि जैनधर्मव्यवस्थापनेन जयश्रीरलंकृता। तत्रैव च श्रीविद्याविजयनाम्ना स्वपदयोग्यं शिष्यं प्रव्राज्य श्रीसाङ्विदेकारिता प्रतिष्ठा चक्रे। ततो गन्धारबन्दिरे सा० इन्द्रजीकारितां प्रतिष्ठां श्रीवीरस्य कृत्वा स्तम्भतीर्थे श्रीधनाईकारितां प्रतिष्ठां विधाय श्रीसूरयस्तत्रैव चतुर्मासीं चक्रुः।

अत्रान्तरे श्रीहीरविजयसूरिषु विद्यमानेष्वपि एषां श्रीसूरीणां गुणातिशयाकर्णनादुत्कण्ठाभाजः पातिसाहिश्रीअकब्बरसम्राजः श्रीसूरीन् लाभपुरे आकार्य श्रीहीरसूरीश्वरकुशलप्रश्नपूर्वं धर्मवार्तां पप्रच्छुः। तत्र गुरुवचश्चातुर्यरञ्जिता मुख्यशिष्यकृताष्टावधानदर्शनाच्चमत्कृताः साहिपादाः श्रीगुरूणां बहुगौरवं चक्रुः। तदा केनचिद्भट्टेन 'अमी जैना जगदीश्वरं सूर्यं गंगां च न मन्यन्ते' इत्युक्ते श्रीसाहिसमक्षं पंचशतभट्टैः सार्धं श्रीगुरुभिर्विवादं प्रारेभे।

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्मेति मीमांसकाः।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्त्तेति नैयायिकाः,
सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः॥१॥"

इति श्रीहनुमाननाटकोक्तेन, तथा

"अधामधामधामेदं, वयमेव स्वचेतसि।
यस्यास्तव्यसने प्राप्ते, त्यजामो भोजनोदके॥२॥"

तथा गङ्गोदकं विना नास्माकं देवप्रतिष्ठा स्यात्। इत्यादि युक्तिभिस्तदा भट्टा विजितास्तेन श्रीसाहिपादास्सप्रसादाः श्रीगुरूणां 'काली सरस्वती'

इति बिरुदं दत्तवन्तः । गो १, वृष २, महिष ३. महिषी ४, वध-मृतद्रव्यादान ५, बन्धरोध ६,निषेधरूपषड्जल्पस्फुरन्मानं श्रीसाहिभिर्दत्वा लाभपुरे अत्याग्रहेण चतुर्मासिकद्वयं श्रीगुरूणां कारितं, ततः श्रीहीरविजयसूरिभिरबाधावशाद् विजयसेनमुखान्नियामनामिच्छद्भिराकारिता । श्रीसाहिपादानापृच्छय श्रीसूरयश्चतुर्मासिकमध्येऽपि चलन्तः पट्टननगरं प्रापुः । तदा सं० १६५२ वर्षे भाद्रसितएकादश्यां प्रातर्जातं श्रीहीरसूरीश्वरस्वर्गगमनं श्रुत्वा तत्रैव तस्थुर्भट्टारकत्वेन सुमुहूर्ते समहोत्सवं श्रीगुरुपट्टमलंचक्रुः । ततः क्रमेण श्रीगुरुभिः स्तम्भतीर्थे प० राजयाविजयाख्यकारितां श्रीचिन्तामणिपार्श्वबिम्बप्रतिष्ठां कृत्वा सं० १६५४ वर्षे अहम्मदावादे भूमध्यान्निर्गतश्रीविजयचिन्तामणिपापार्श्वबिम्बस्य शकन्दरपुरे स्थापनां चक्रे, तथा अहम्मदपुरे सा०भोटाकारिता तथा सा० लहुयाख्यकारिता च प्रतिष्ठां विदधे । समये च लाडोलिग्रामे सूरिमंत्रध्यानं विधाय श्रीस्तम्भतीर्थे श्रीविजयदेवसूरीणां सूरिपदं दत्त्वा पत्तननगरे तेषां गणानुज्ञां नंदिं श्रीगुरवः कृतवन्तः । तत्र च पञ्चसप्तत्याद्यंगुलार्हत्प्रतिमानां पदप्रतिष्ठाश्च, तदा संघपतिश्रीहेमराजसंघो मरुस्थलीतः श्रीशत्रुंजयतीर्थयात्रार्थं व्रजन् सप्तशताश्ववारकटकद्वादशशतशकटसंयुक्तः श्रीगुरूँस्तत्राभ्येत्य वन्दितवान् स्वर्णरूपमुद्राभिरर्चितवांश्च । तद्दर्शनाद्राजनगरवास्तव्य सा० सूराख्यः श्रीगुरूपदेशेन मार्गे प्रतिश्राद्धगृहं महमुन्दिकालभनिकां कुर्वन् श्रीअर्बुदाचलश्रीराणपुरादितीर्थेषु मरुदेशे अनेकनगरसंघेन समं तीर्थयात्रां विधाय निर्विघ्नं प्रत्यागत्य श्रीगुरून्ननाम । तद्वत्सरे श्राद्धैर्लक्षमहमुन्दिकाव्ययश्चक्रे । तदनु श्रीगुरवो राजधान्यपुरे प्रतिष्ठाद्वयं, पुनः स्तभतीर्थे प्रतिष्ठात्रयं, गन्धारबन्दिरे प्रतिष्ठाद्वयं विधाय सुराष्ट्रदेशे विजह्रुः । तत्र चतुर्मासकत्रयं प्रति ष्ठाष्टकं श्रीसिद्धाचलश्रीगिरनारिप्रमुखमहातीर्थयात्रास्तत्रत्यसंघेन सह कृतवन्तः ततो हल्लारदेशे नवानगरे चतुर्मासीं विधाय तद्देशपतिजामराजोऽपि धर्मोपदेशैः श्रीगुरुभिः प्रमोदितः । इत्येवं नानादेशविहारैः भूतलं पवित्रयन्तः श्रीगुरवोऽनेकजीवान्, प्रत्यबुधन्, पञ्चाशज्जिनप्रतीष्ठाँश्चक्रुः । अष्टौ वाचकपदानि सार्धशतं पण्डितपदानि ददुः । द्विसहस्रयतिपरिवृताः "सवाईश्रीहीरविजय

सूरय" इति विरुदं बिभ्राणाः श्रीविजयसेनसूरयः प्रवचनं बहूनि वर्षाणि प्रभावयामासुः । प्रान्ते च विजयदेवसूरीश्वरान् विश्वलनगरे च संघाग्रहात्समनुज्ञाप्य स्वयं श्रीस्तम्भतीर्थे सर्वातिचारलोचनपूर्वं कृतानशनाः समाधिना सं० १६७१ वर्षे ज्येष्ठसितएकादश्यां श्रीगुरुवः स्वर्गमलंचक्रुः । तत्राद्यापि बहुवित्तव्ययेन संघकारितं स्तूपं जयतीति गाथार्थः ॥१॥

तप्पट्टे सूरसमो, साट्ठितमो विजयदेवसूरिगुरू ।
साहिजहांगीरेणं, महातवास्सित्ति बद्ध···हो·······॥२॥

व्या० 'तत्पट्टे' इति—। तत्पट्टे प्रकाशकत्वात्सूर्यसमः तपस्तेजसा षष्ठितमः श्रीविजयदेवसूरिनाम्ना गुरुर्बभूव । किं विशिष्टः ? साहिना—पातिसाहिना—श्रीअकब्बरभूपालजन्मना श्रीजहांगीरेण 'महातपा' इति कृतनामा, इत्यनेनास्य सूरेः तपःप्राधान्यं व्यञ्जितम् । अनेकशः षष्ठाष्टमादिभिः विंशतिस्थानकाद्युत्कृष्टतपश्चरणात् यावज्जीवमुपावासाचाम्लनिर्विकृतिकस्थानभक्तपानरूपनित्यतपःकरणात्तस्य च प्रभोर्विक्रमात्सं० १६३४ वर्षे ईडरदुर्गे वृद्धोपकेश 'ओळतवाल' गोत्रभृत् सांधिरा तद्भार्यारूपा । तयोर्गृहे जन्म । सं० १६४३ वर्षे जनन्या सह दीक्षा । सं० १६५५ वर्षे पण्डिपदम् । सं० १६५६ वर्षे वैशाखशुक्लषष्ठ्यां उपाध्यायपदपूर्वं आचार्य्यपदं । सं० १६७१ वर्षे भट्टारकपदं सं० १७१३ वर्षे श्रीउनानगरे आषाढदेवशयनैकादश्यां प्रातःकाले ऽष्टमभक्तेन स्वर्गप्राप्तिःतत्र स्तूपं भणशालीरायचंदकारितं, श्रीहीरगुरोर्मुख्यस्तूपपार्श्वे समुद्रतीरेऽस्ति । तस्य भगवतो द्वितीयस्वर्गोत्तरदिशि देवत्वेनावतरणम् । इष्टदेवेन निजाराधकानामुक्तं श्रद्धेयमेव । यतो नाम्ना देवः सर्वत्र नरदेवमान्यः । प्रकृत्यापि देवपट्टादर्शादिषु देवाराधकः देवसांनिध्यवान् । अतस्तदुक्तस्य युक्तत्वात् । अत एव देवशयनैकादश्यां देववेलायां स्वर्गतिरिति ।

एतच्चरितं खरतरमतीयश्रीवाचनाचार्यश्रीवल्लभकृत 'विजयदेवमाहात्म्य' काव्यात्तथा मत्कृतमाघसमस्यारूप'देवानन्द'काव्यात् ज्ञेयम् ।

समासस्त्वेवं—

श्रीमतामेषां गुरूणां सूरिपदोत्सवे स्तम्भतीर्थेऽनेकदेशग्रामनगरसंघाह्वानेन सप्तशतीमुनिपरिवृतान् श्रीविजयसेनसूरीन् बहुधा विज्ञप्य स्ववेश्मनि

द्विधापि विमानश्रियं दधाने सुपर्वशोभाभासुरे प्रचण्डमण्डपाडम्बरेण विचित्रराजवादित्रनिर्घोषैर्नभसि गर्जति सति सर्वसंघभोजनपरिधापनादिभिः श्रीमल्लनामश्रेष्ठिना स्वभ्रातृसोमान्वितेन दशसहस्त्ररूप्यकव्ययेन महती प्रभावना चक्रे सुमुहूर्ते श्रीगुरुभिः सूरिपदं प्रदाय 'श्रीविजयदेवसूरिः' इति नाम संदधे। तदा पुनस्तदुत्सवनिमित्तमेवाष्टसहस्ररूप्यकव्ययेन ठक्करकीकाख्येन प्रतिष्ठा कारिता पुनश्चैषां सं० १६५८ वर्षे परीक्षकसहस्त्रवीरेण पञ्चसहस्रमहमून्दिकाव्ययेन कृतोत्सवपत्तने गणानुज्ञानन्दिमहो महान् जज्ञे। तथा श्रीविजयदेवसूरिभिः प्रतिष्ठाद्वयं राजनगरे, प्रतिष्ठाचतुष्टयं पत्तने प्रतिष्ठात्रयं स्तम्भतीर्थे सातिशयमहोत्सवपूर्वं चक्रे।

इलादुर्गे च श्रीकल्याणमल्लराजप्रबोधनात्तत्सभास्थितान्भट्टान् पं० श्रीपद्मसागरगणीनामाज्ञादानेन जापयित्वा राजाग्रहात्तत्र चतुर्मासीं चक्रे। तदा च तत्रत्यगिरिशिरसि प्रभूपदेशात् श्रीऋषभदेवबिम्बं नवीनचैत्योद्धारपूर्वं श्राद्धैर्नटीपद्रे महदाडम्बरेण प्रतिष्ठायां श्रीगुरुभ्य एव प्रतिष्ठाप्य स्थापयामास।

अत्रान्तरे सं० १६७३ वर्षे कतिचिदुपाध्यायैः संभूय कतिचिल्लोकान् स्वायत्तीकृत्य आग्रहबुध्या स्वकीयमतं प्रादुष्कृतमृतन्मतवासिते च स्वकीये भार्ये द्वे सा० देवचन्द्रेण स्तम्भतीर्थवास्तव्येन मृत्वा देवीभूतेन तन्मतश्राद्धजेमनवारायां पाषाणवृष्ट्या संतर्क्य "अहं भवत्योर्भर्त्ता देवचन्द्रः सप्तदशभिर्देवैः श्रीविजयदेवसूरीणां सांनिध्यं कुर्वाणोऽस्मि तद्भवतीभ्यामप्ययमेव पारंपर्यागतः श्रीगुरुः सेव्यः" इत्युक्त्वा श्रीगुरुभक्ते कृते, इत्यद्भुतदेवसांनिध्यादनेकशो लोकाः कुमतानि परितत्यजुः।

तथा घोघाख्यबन्दिरवास्तव्य सा० सोमजीनाम्ना स्वकुटुम्बं पूर्वं धर्माद्भ्रष्टं देवीभूय प्रागुक्तवत्प्रबोध्य श्रीगुरोर्भक्तं चक्रे। तदतिशयश्रवणान्महाराजश्रीजहांगीरपातिसाहिः श्रीसूरीन् सबहुमानमाकार्य श्रीमण्डपाचले श्रीगुरुभिः समं धर्मप्रश्नादिवार्तां विदधे। तदा सुधासमानदेशनाश्रवणेन तपस्तेजोमयमूर्तिदर्शनेन भृशं तुष्टः श्रीसाहिराजोऽयं गुरुर्महातपा इति बिरुदं दत्तवान्। तदनु लब्धयशोवादा श्रीसूरिपादाः श्रीसाहिना स्वयंमनुज्ञापित

स्वकीयदक्षिणीय महावाद्यवादनादिभिः श्रीचन्द्रपालादिसमृद्धश्राद्धैः सोत्सवं प्रतिपदं सुवर्णमुद्राणां न्युंछनकेषु क्रियमाणेषु भट्टचारणादिमार्गणानां मार्ग याहच्छिकदानेन सहर्षमुपाश्रये पादावधारणं चक्रु । किं बहुना, श्रीजिन-प्रवचनप्रासादे कलशारोपणमिदमद्भुतं प्रासीसरत् । ततो गूर्जरत्रां पवित्री-कृत्य सुराष्ट्रदेशे द्वीपबन्दिरे फरंगीपातिसाहिप्रदत्तव्याख्यानानुज्ञापूर्वं चतु-र्मासकद्वयं हल्लारदेशे तद्देशस्वामिभक्त्यनुरोधेन कतिचिद्दिनावस्थानं च कृत्वा स्तम्भतीर्थे चतुर्मासकं तस्थुः ।

अत्रान्तरे उपाध्यायपाक्षिकैः सागरपाक्षिकैश्च क्रियमाणं जनव्युद्ग्राहमवेद्य श्रीसाबल्यां श्रीगुरवो ध्यानं विदधुः । मासत्रयं ध्यानेनाधिकप्रवृद्धधामानः परेषां द्रष्टुमपि दुष्प्रेक्षास्तत्रैव प्रतिष्ठाद्वयं चतुर्मासीं च कृत्वा 'इला' दुर्गे प्रतिष्ठात्रयं संघेन समं तद्देशतीर्थयात्रां कृत्वा क्रमेण 'आरासणे' मूल-नायकप्रतिष्ठां चक्रुः ।

कालान्तरे च 'इला'दुर्गेऽभ्येत्य सा० 'सहजू'—कृतमहोत्सवेन सं० १६८१ वर्षे वैशाखसितषष्ठ्यां श्रीविजयसिंहसूरीन् यौवराज्येऽस्थापयत् । तदा तद्देशभूपेन 'रणमल्लचोकी' नामकं गिरिशृङ्गं गुरूपदेशाद्भव्यचैत्य-स्थापनाय संघस्य प्रसादीकृतम् ।

ततः सीरोह्यां चतुर्मासककरणादनु 'जाबालक पुरे' समागत्य श्री-गुरुराजाः 'सादड़ी'—ग्रामे गीतार्थाननुज्ञाप्य लुम्पाकपाक्षिकान् श्रीउदयपुरे राणाश्रीकर्णसिंहसमक्षं सभायां वादपूर्वं निरुत्तरान् कारयामासुः ।

ततः श्रीतपागच्छप्रौढिर्महता बभूव । तत्र च श्रीयोधपुराधीश्वरश्री-गजसिंहराजस्य मुख्यमान्यश्रीजयमल्लनाम्ना 'जालोर' दुर्गे प्रतिष्ठात्रयमन्तरा-न्तरा चतुर्मासकत्रयं श्रीगुरूणामत्याग्रहेण कारयित्वा स्वर्णगिरौ चैत्यं स्वका-रितं प्रतिष्ठापयामासे ।

सं० १६८४ वर्षे सहस्रशो रूप्यकव्ययेन श्रीविजयसिंहसूरीणां गणानु-ज्ञानन्दिमहोत्सवः कारितः । तदनु 'मेडतानगरे' प्रतिष्ठाद्वयं विधाय 'वन्ध्य-नगरे' चतुर्मासीस्थितान् श्रीगुरून् श्रुत्वा तन्माहात्म्यश्रवणेन तुष्टो राणाश्री-

जगत्सिंहजीनामा श्रीवरकाणकपार्श्वयात्रार्थागतानां लोकानां पोषदशम्यां शुल्कमोचनं चक्रे । पारणायां च त्वरितमेव स्वप्रधानझालाश्रीकल्याणजीकस्य सन्मुखप्रेषणेन श्रीगुरून् दर्शनोत्कण्ठया चाजुहाव ।

ततः श्रीगुरुपादाः 'षमणोरग्रामे' प्रतिष्ठाद्वयं, देवकुले चैकप्रतिष्ठां, ततो 'नाहीग्रामे आघाटपुरे' चेति प्रतिष्ठापञ्चकं कृत्वा श्रीउदयपुरे राणाजी ...संघाग्रहाच्चतुर्मासीं विदधुस्तदा गुरूपदेशाद् राणाश्रीजगत्सिंहजीनाम्ना चतुरो जल्पाः प्रपन्नास्तद्यथा—

(१) अद्यप्रभृति पीबोला--उदयसागरनामसरोद्वये मीनग्रहण-जालनिषेधः ।

(२) राज्याभिषेकदिने गुरुवारे जीवामारिः कार्या ।

(३) जन्ममासे भाद्रपदे च जीवहिंसा न कार्या ।

(४) मचिन्दुर्गे श्रीकुम्भाराणाकारितजैनचैत्योद्धारश्च कार्यः ।

ततो ऽत्यन्तं श्रीजिनशासनोन्नतिर्जज्ञे ।

तदनुक्रमेण गूर्जरधरायां द्वित्रीणि वर्षाणि विहृत्य सुराष्ट्रदेशेन तत्सिद्धाचलरैवतकादितीर्थयात्रां संघावगमनेन कुर्वाणाः परमगुरवः प्रतिष्ठात्रयं चतुर्मासीद्वयं च कृत्वा हल्लारदेशे नवीननगरे तद्देशेश्वरलाखाभिधानयाम (जाम) प्रतिबोधनेन चतुर्मासीं कृतवन्तः ।

अत्रान्तरे दक्षिणप्रदेशे कन्हडदेशे श्रीबीजापुरादिनगरसंघेन श्रीपूज्यपादानामानयनविज्ञप्तये प्रेषिता महेभ्या श्राद्धी चतुरानाम्नी श्रीगुरूनववन्दे, प्रतिष्ठां चैकां महोत्सवेन कारयामास, वर्षचतुष्टयं यत्र श्रीगुरवो विहरन्ति (सा) तत्र तत्रान्वियाय ।

ततो दाक्षिणात्यसंघात्याग्रहात्पुनर्गुर्जरत्रायामभ्येत्य कतिचिद्वर्षाणि तत्र स्थित्वा दक्षिणादेशं विजिहीर्षवः प्रभुपादाः सूरतिबन्दिरे समहोत्सवं समाजग्मुः ।

तत्र च सं० १६८७ वत्सरे समुत्पन्नसागरमतवासितैः श्राद्धैः स्वमतस्य श्रीगुरुमुखात्सत्यमिदमिति कथनाय बहुद्रव्यव्ययेन मीरमोजाख्यभूपं स्वव-

शीकृत्य स्वपाक्षिकगीतार्थानाहूय वादः प्रारम्भितः । श्रीगुरुभिरपि सागरमतप्ररूपणा उत्सूत्रत्वान्न सत्येति प्रामाणिकपर्षदि राजसमक्षं गीतार्थाननुज्ञाप्य वादेन सागरपाक्षिकाँस्तिरस्कारयांचक्रिरे । ततो लब्धजयवादाः श्रीगुरुपादाः सप्रसादाऽवनिनायकेन सम्मानिताः परे च पराभवं प्रापिता इति ।

ततो दक्षिणादेशे विहृतवन्तः । तत्र बीजापुरेऽन्तरां चतुर्मासकचतुष्टयीं चक्रुः । तदा श्रीगुरुपादतपोमाहात्म्यप्रसरद्यशःपरिमलानुभवनेन तत्रत्यपातिसाहिश्रीईदलसाहिर्दर्शनोत्सुकः श्रीगुरूनाहूय सबहुमानं धर्मस्वरूपं पप्रच्छ । ततः श्रीगुरूणां वचःपीयूषमासाद्य माद्यन्मना यावद्गुरुस्थिति गोवधनिषेधं प्रपन्नवान् जिनप्रवचनमानंदमेदुरं स्फातिमायाति स्म ।

पारणायां च बीजापुराद्यनेकनगरसंघेनान्वीयमानाः श्रीगुरवः पयोधितटनिकटस्थ श्रीकरहेडपार्श्वनाथ—श्रीकलिकुण्डपार्श्वनाथादितीर्थयात्रां कुर्वाणास्तत्तद्देशराजप्रभृतीन् लोकान् धर्मे स्थापयांचक्रुः ।

ततश्चाऽवरंगाबादनगरे चतुर्मासकमेकं सोत्सवं विधाय खानदेशे बर्हानपुरे चतुर्मासकद्वयं सान्तरं चक्रुः । ततः प्रचलय्य संघेन सह श्रीअन्तरीकपार्श्वश्रीमाणिक्यस्वामितीर्थयात्रां सृजन्तस्तिलिङ्गदेशे गलकुण्डप्रत्यासन्नभाग्यनगरे पातिसाहिश्रीकुतबसाहिना संगत्य तत्सभायां तैलिङ्गभट्टान्वादे विजित्य जैनधर्मव्यवस्थापनया श्रीपातिसाहिं प्रमोदितवन्तस्तद्वशानुज्ञाश्च । तत्रार्हत्प्रतिमानामनेकासां प्रतिष्ठां चक्रुः । एवं च विविधोत्सवैः प्रतिपदं राजप्रबोधादिना सर्वत्र दक्षिणामण्डले विहृत्य प्रतिष्ठासप्तकं चतुर्मासकसप्तकं च कृत्वा श्रीमज्जिनशासनमयं तन्मण्डलं विदधुः ।

बीजापुरे सा० देवचंद्रेण प्रथमं प्रतिष्ठा कारिता । तत्र षोडशसहस्ररूप्यकव्ययश्चक्रे । द्वितीयस्यां प्रतिष्ठायामष्टसहस्रीरूप्यकव्ययश्च । तत्र पंडित श्रीवीरविजयानां सं० १७०१ वर्षे पन्यासपदं ददुः । दक्षिणामण्डले च सर्वाणि अशीतिपण्डितपदानि, एकमुपाध्यायपदं च प्रसादितवन्तः । ततः पुनः संघाग्रहात् गूर्जरत्रां श्रीगुरवः पवित्रीचक्रुः ।

इतश्च श्रीविजयसिंहसूरयोऽपि गुर्वाज्ञया मरुमेवातमेदपाटादौ विहृत्य राणाश्रीजगत्सिंहजीनामानं प्रबोध्य विशेषतो जीवदयासु देशस्थित जैनतीर्थेषु सप्तदशभेदपूजाकरणोपदेशादिभिश्च दृढीकृत्य श्रीजिनधर्मं प्रभावयन्तः। श्रीमरुदेशे एकां प्रतिष्ठां,मेरुतानगरे आगरावास्तव्यपातिशाहिरत्नव्यवहारिमुख्यसा०हीरानन्दभार्यया श्राविकामनीत्यभिधानवत्या कारितां निर्माय, श्रीकृष्णदुर्गे राठौरवंशीयश्रीरूपसिंहमहाराजस्य महामात्यश्रीरायचन्द्रनाम्नोऽत्याग्रहाच्चतुर्मासकं चक्रुः तत्पारणके सहस्रशो रूप्यकव्ययेन मन्त्रिणा कारितप्रतिष्ठायां बहूनि बिम्बानि जिनानां महतोत्सवेन प्रत्यतिष्ठपन्

तत्रैव आह्मणपुरादागतेन श्रीमहेशदासमन्त्रिश्रीसुगुणाह्वयेन बहुवित्तव्ययपूर्वं सुवर्णमुद्रार्चादिना महोत्सवेन श्रीगुरवो वन्दिताः। ततः क्रमान्मात्यपुरबुन्दीचत (व) लेरपार्श्वप्रमुखतीर्थयात्रां संघेन सह कुर्वन्तः श्रीजयतारणिनगरे चतुर्मासीं विधाय श्रीस्वर्णगिरौ यात्रां कृत्वा क्रमात् श्रीअहम्मदावादनगरे श्रीगुरून्नेमुः।

तैः सहिताः श्रीपरमगुरवः सं० १७०५ वर्षे श्रीइलादुर्गे पत्तनवास्तव्यश्रा०श्रीवन्त्याकारितां प्रतिष्ठां विदधुः। तत्र चतुःषष्टिविबुधेन्द्रान्देवसूरय इव स्थापयामासुः। क्रमेण पत्तनराजनगरादिषु चतुर्मासककरणेन लोकाननुगृह्य स्तंभतीर्थे चतुमास्यां तस्थुः।

श्रीविजयसिंहसूरीणां सं० १६४४ वर्षे जन्म, सं० १६५४ व्रतं, सं० १६७२ वाचकपदं, सं० १६८१ सूरिपदं, ते सूरयः परमक्षमापात्रं यावज्जीवं गुर्वाज्ञाराधकाः विवेकाद्यनेकगुणोदधयो ऽष्टाविंशतिवर्षाणि सूरिपदं प्रपाल्य सर्वातीचारालोचनपूर्वमनशनेन सं० १७०८ वर्षे अहम्मदावादपार्श्वस्थनवीनपुरे आषाढसितद्वितीयायां श्रीविजयसिंहसूरयः स्वर्जग्मुः।

तत् श्रावणाद्भृशं दुःखार्ताः परमगुरवोऽपि संसारानित्यतां विमृश्य क्रमाद्विगतशोका बभूवुः।

एषां च श्री गुरूणां तपस्तेजसा देवकृतसान्निध्येन च निरन्तरायतया भूयांसस्तीर्थयात्रासंघाः साडम्बराः श्रीशत्रुञ्जयादितीर्थेषु जीर्णोद्धाराश्च जाताः।

देवसान्निध्यं चैषां स्फुटमेव मण्डपाचलप्रस्थाने कमाख्यपरमारस्य भूतार्त्तस्य लोकानां मारणात्पित्रा निगडितस्य श्रीगुरुवासक्षेपेण सज्जीभवनात्, एवं राजनगरवास्तव्यवणिक्पुत्रोऽपि सप्तवर्षाणि प्राग्ग्रथिलः सोऽपि, तथा मेडतानगरे सा० थानाख्यक्षेत्रपालाधिष्ठितश्च वासक्षेपात्प्रादुर्बभूव ।

एवं चैते भगवन्तः स्वविहारेण गूर्जरत्रासुराष्ट्राहल्लारमरुमेदपाटलाटदक्षिणादेशेषु धर्मबीजानि वपन्तः तद्देशसुभिक्षादिभवनेन स्फुटतरयुगप्रधानातिशयाः शुद्धाशयाश्चिरं भरतभुवि प्रवचनं प्रभावयामासुः । समये च निजायुःशेषं वर्षचतुष्टयं ज्ञात्वा सं० १७१० वर्षे स्वपट्टे श्रीवैशाखसित दशम्यां श्रीविजयप्रभसूरीन् स्थापयामासुः ।

तद्व्यतिकरस्त्वनन्तरमेव वक्ष्यते ।

"सिरिविजयदेवपट्टे, पढमं जाओ गुरू विजयसीहो ।
सग्गगए तम्मि गुरू-पट्टे विजयप्पहो सूरी ॥१॥"इति गाथार्थः

तत्पट्टंबुजपहकर—सरिसो हरिसेण दरिसणिज्जमुहो ।
[तत्पट्टंबुजपहकर—सरिसो सिरिविजयसिंह दिव्वगुरू]
इगसट्ठियमोऽणुवमो, विजयप्पहणाम गच्छगुरू ॥२॥२२॥

व्याख्या—"तप्पट्टंबुज" इति, तस्य श्रीविजयदेवगुरोः पट्टलक्षणे अम्बुजे, प्रकाशकत्वात्प्रभाकरः सूर्यः, तत्सदृशस्तुल्यः । एकोत्तरषष्टितमः श्रीविजयनामा गच्छगुरुर्भगवान् सूरिर्विजयवान् । किं विशिष्टः ? 'हरिसेण'—हर्षेण दर्शनीयमुखः । इत्यनेनास्य नित्यप्रसन्नता ख्यापिता । तया चास्य भगवतो भाग्यविस्फूर्जितस्य नित्योदयत्वं प्रशान्तत्वं च ध्वन्यते । कुपाक्षिकानां प्रत्यर्थिनां मनसाप्येतस्य गुरोरहितचिन्तकानां स्वत एव नाशात् । घनस्याभ्युदये शरभानामिव । यद्वा हरिः कृष्णः सेनायां यस्य स हरिसेनो देवानामिन्द्रः । 'सेनाचरी भवदिभानवदानवारि—वासेन यस्य जनिता सुरभी रणश्रीः ।' इति नैषधीयकाव्यवचनात् । एवं हरिशब्दस्य तुरगगजाद्यर्थे,हरिसेनाः नृपाः । अहीनामर्थे धरणेन्द्राद्या नागकुमारा ग्राह्याः ।

तेषामपि दर्शनीयं मुखं यस्य स तथा। इत्यत्रार्थे त्रिजगद्वन्द्यत्वं भगवतो दर्शितम्। पुनः किं विशिष्टम्? अनुपमः अतुल्यः। एतेनास्य सूरेः सर्वसूरिभ्यो धैर्यौदार्यगाम्भीर्यसौभाग्यतानिस्तन्द्रतापाण्डित्यक्षमादिगुणानामधिकता ज्ञाप्यते।

अस्य च प्रभोः सं० १६३७ वर्षे माघसितएकादश्यां श्रीकच्छदेशे श्रीमनोहरपुरे वृद्धोपकेशवंशघोषागोत्रभृत् सा० सिवगणभार्याभानुमतीगृहे जन्म। सं० १६८६ वर्षे दीक्षा। सं०१७०१ वर्षे पन्यासपदं। सं०१७१० वर्षे आचार्यपदं। सं० १७१३ वर्षे भट्टारकपदं। ते चामी श्रीगुरुपादाः सांप्रतमपि प्रत्यद्यलक्ष्यलक्षप्रभावा नितरां ज्ञानाभ्यासपुस्तकशोधनानेकभव्यजनविबोधनविविधक्रियामग्नमनसो दुस्तपस्तपननिर्जीर्यमाणतमसो गच्छस्य स्मारणवारणादिविधाभिरधिकश्रियं पुष्णन्तः सत्यसंधाः कल्पान्तेऽप्यविचलवाचः स्वप्रतिपन्नगच्छगीतार्थसंघाभ्युदयदायिनो विजयन्ते।

एतेषां महिमातिमहान्न कार्त्स्न्येन वर्णयितुं शक्यः। तथापि किञ्चिदुच्यते—

एकस्मिन् समये परमगुरुतपागच्छाधिपाः श्रीविजयदेवसूरयः स्वामिनो जिनशासनपट्टपरंपराप्रवाहं प्रवर्धयितुं श्रीसूरिमन्त्रेण ध्यानं चक्रुः। यदस्मदग्रे कः शासनाधिनाथो भविष्यतीति। तदा च प्रवर्धमानतपःपूर्वकजपावधानाकृष्टो मंत्राधिराजाधिष्टायको देवोऽभ्येत्य नमस्कूर्वन् विज्ञप्तवान् 'स्वामिन्नद्यापि शासनाधीशितुर्न दीक्षापि प्रवृत्ता, भगवतामपि युष्माकं चिरायुष्कता तत्किमनया चिन्तयाधुना? समये च स्वल्पेनापि तपसाहं स्मरणीयः, तदैवागत्य वक्ष्यामि' इत्युक्त्वा सुरस्तिरो बभूव।

कालान्तरे च स्वकीयपट्टे श्रीजिनशासनस्वामिस्थापनावसरं निभाल्य श्रीगन्धपुरे गत्वा श्रीगुरुभिर्ध्यानं प्रारेभे। तदा तत्क्षणादेव मंत्रराजाधिष्ठायको देवः समेत्य निवेदितवान्—"हे स्वामिनः! पण्डितः श्रीवीरविजयनामा सौभाग्यनिधिः विद्यामहोदधिः निरुपधिः चारित्रगुणानामवधिः अजिह्मब्रह्मविधिः विधिरिव सा॰ ॰ भुवनोपकारकः केशव इव पुरुषोत्तमः

नरकान्तकृत् कुमोदकः शिव इव महाव्रती कामासहनो दत्तजातिस्निग्धः त्रिदशगुरुरिव निर्मलमतिः सुमनसामग्रणीरसौ स्वपट्टे स्थाप्यः, यतोऽस्याग्रे महिमा हि मानाधिको भावी" इत्युक्त्वा देवे तिरोभूते श्रीगुरुभिः गाम्भीर्यशालिभिः जनप्रत्ययनाय बहिः शकुनगवेषणादावपि देवोक्तानुवादे दृढीभूते सति राजनगरात्त्वरिताभ्यागत सा० रत्नप्रमुखराजनगरीयसंघाग्रहेण श्रीस्तंभतीर्थ-श्रीपत्तन-श्रीसूरतिबन्दिरप्रमुखानेकदेशग्रामनगरसमक्षं श्रीमहावीरस्वामिसातिशयमूर्तेः पुरः पत्रिकाविलोकनादानंदित् सकललोके श्रीगन्धारबन्दिरे विक्रमात्सं० १७१० वर्षे वैशाखसितदशम्यां भृगुवारे पुष्यनक्षत्रे सुमुहूर्ते रङ्गदुत्तङ्गमण्डपाखण्डशोभादिदृक्षयेवाभ्यागतेषु मुक्तानिकरदम्भान्नक्षत्रपक्षेषु वाद्यमानविविधातोद्याडम्बरेण गर्जत्यम्बरे दह्यमानासु दुर्जनमनःशकटिकास्विव धूपघटिकासु रसेनापूर्यमाणासु सर्वसङ्घप्रमोदतटिकास्विव घटिकासु प्रसरद्यशोभिरिव पुष्पप्रकरैराकीर्णे भूवलये श्रीवीरपट्टाधिपत्यज्ञापनायेव श्रीवीरजिनभवनासन्नदेशे मण्डपेऽभ्यागत्य पं०श्री वीरविजयाः श्रीविजयदेवसूरिभिः स्वपट्टे स्थापयांचक्रिरे। तदा साधुश्रीअखईनाम्नः सुतेन श्रीवर्धमानसंज्ञेन स्वमातृसाहिबदेवीसहितेन प्रतिगृहं सरूप्यमुद्रस्थालिकालम्भनिका चतुर्विधसंघवस्त्रपरिधापनादिना भूरिद्रव्यव्ययेन महानुत्सवश्चक्रे। श्रीगुरुणा स्वयं चिन्तितम्, इष्टोपदेशेन उ० श्रीकमलविजयगणिभिर्ज्ञापितमाचार्यपदं प्रदाय "श्रीविजयप्रभसूरिः" इति नाम निर्ममे।

विजयी जगदाराध्यो, यशस्वी च प्रभाववान्।
भगवानाद्यवर्णैस्त्व-न्नाम्नाभूद्विजयप्रभः ॥१॥

तदनु श्रीगुरुः श्रीविजयप्रभसूरिणा सह सूरतिबन्दिरे एकं चतुर्मासकं विधाय श्रीराजनगरे चतुर्मासीं कृतवान्। तत्पारणायां संघमुख्यसा० सूरापुत्र सा० धनजीनाम्ना श्रीगुरूणां विज्ञप्य वन्दनकमहोत्सवः प्रारेभे, तत्र च मिलितास्तोकलोकस्थानाय कमनीयप्रकटपटमण्डपैर्माशून्यदर्शनं भूत् इतीवाच्छादिते वियति सुवर्णखचितनिचितश्रुतिपञ्चवर्णचन्द्रोदयप्रभा-

संकरेण रात्रिंदिवातीतविमानोपमानतायामुपनतायां जगति सुसीमताकारिशर्मैकसाम्राज्यविजयमाने तत्र न तापनकरप्रचार इतीव सहस्रकरकरेषु भूमिमस्पृशत्सु विविधधवलगानश्रवणैकाग्र्येण चित्रतुल्यनिश्चलनरामरोरगैः शोभितेषु पटकुटेषु विश्वविश्रान्तिसश्रान्तिशारदाभ्रपटलेषु इव अत्युच्चमण्डपेषु सिंहासने श्रीविजयप्रभसूरिं निवेश्य भगवान् स्वयं स्वतुल्यताज्ञापनार्थं पुरःस्थित्वा सुमुहूर्ते वन्दनकानि दत्तवान्। जातश्च महान् प्रमोदः। तदनुसर्वसंघसमक्षं श्रीपरमगुरुणाभाणि—" यथाहंतथाऽयम्, सर्वसंघेन सेवनीयः, संसारसागरे प्रवरणमयं कदापि न मोक्तव्यः "।

ततः कृतसंस्कारो मणिरिव, घननिर्मुक्तः सूर्य इव, आहुत्युद्दीपितः पावक इव, भावप्रतिबिम्बनाद्दर्पण इव, प्रोज्ज्वलितः कनककलश इव, तैलापूर्णः प्रदीप इव, कृतालंकारः क्षितिपतिरिव, घननिर्धौतः कनकगिरिरिव, शोधितो ग्रन्थ इव, अधिकं संजातवन्दनकोत्सवपरिकर्मा स श्रीविजयप्रभसूरिर्भूरितेजसा दिदीपे।

तदा सा० श्रीधनजीनाम्नाष्टसहस्रमहमूदिकानां यशोबीजानामिव प्रभावना चक्रे। सर्वसंघपरिधापनिका च। ततश्चैकं चतुर्मासकं अहम्मदपुरे विधाय श्रीपरमगुरुभिः सहैव श्रीविजयप्रभसूरि·················
युगादिदेवयात्रां द्वीपवास्तव्यभणसालीयसा०रायचन्द्रप्रमुखसंघेन सह वि·····························नालोच्य सुराष्ट्रासंघाग्रहेण श्रीउन्नतपुरमलंचक्रे।

क्रमेण देवशयनैकादश्यां·······विजयप्रभसूरिभिः कृतनिर्यामनाविधयः श्रीविजयदेवसूरयः स्वर्जग्मुः। ततः श्रीवीरनिर्वृते श्रीगौतमस्वामीव श्रीपरमगुरौ स्वर्गतेऽत्यन्तदुःखावेशवशात् श्रीविजयप्रभुरपि कतिचिद्दिनानि विमनस्कतया निन्ये।

तदनु चतुर्विधसंघाग्रहेण संसारस्वभावमनुभाव्य विगतशोकाः सुमुहूर्ते श्रीविजयप्रभसूरिपादाः भट्टारकपदोद्भूतशोभाप्राग्भारभासुराः श्रीगुरुपट्टं विभूषयामासुः। तद्दिन एव शिवपुरीदेशे यतीनां विहारस्य

प्राग्वर्षद्वयं यावन्निषेधस्य मुक्तलता जाता, तद्वर्द्धनिका आगता। तद्वर्षे च श्रीद्वीपवास्तव्यसा० नेमीदासनाम्ना अष्टसहस्रमहमूंदिकाव्ययेन श्रीगुरून् सार्धमादाय श्रीशत्रुञ्जयतीर्थयात्रासंघो महान् चक्रे।

एवं श्रीगुरुभिः सुराष्ट्रायां चतुर्मासिकदशकं चक्रे। तत्प्रभावात् सं०-१७१५ सं०१७१७सं०१७२०वर्षसत्कास्त्रयोऽपि दुष्कालाः सुराष्ट्रादेशे न प्रसारमापुः। तच्चिह्नं तु जीर्णदुर्गादिषु गूर्जरत्रायां धान्यागमनं प्रतीतमेव। सं०१७२३वर्षे घोघाबन्दिरे श्रीजसूनाम्न्या कारितानेकजिनप्रतिमानां श्री-सूरिभिः प्रतिष्ठा चक्रे।

एषु च श्रीगुरुषु विपक्षभावमावहन्तः केचिद्बालिशाः स्वत एव लोकापवादविडम्बिता अधुना दृश्यन्ते। ततः श्रीअहम्मदाबादनगरसंघा-ग्रहेण श्रीगुरुवो गूर्जरत्रायामाजग्मुः। तत्प्रभावाल्लोकानां सुभिक्षेण महान्-हर्षो बभूव। इत्यादि परमर्षीणां एषां महिमा प्रकट एव॥ तेन निश्ची-यते—एतदाज्ञावर्तित्वमेव उभयथापि शिवाय।

सिरिविजयरयणसूरि पमुहेहिं णेगसाहुवग्गेहिं
परिकलिआ पुहविअले, सूरिवरा दिन्तु मे भद्दं ॥४॥२४॥

श्रीगूर्जरमरुमालवमेदपाटमेवातकच्छहल्लारसुराष्ट्रादक्षिणादिदेशेषु श्रीगुरुतपस्तेजसा सांप्रतं धर्मकर्माणि निरन्तराय जायन्त इति

सोऽयं वीरपरंपराप्रणयिनीप्राणप्रियः सत्क्रियः।
जीयात् श्रीतपगच्छपः सुरवरैः संसेव्यमानक्रमः।
नाम्ना वीर इति क्षमाधरवरप्रोज्झितनृत्यक्रियः।
प्रत्यक्षं विजयप्रभो गणपतिः श्रीवर्धमानप्रभः॥१॥
श्रीवीरतीर्थातिकलब्धराज्यः, श्रीवर्धमानेन कृतोत्सवश्रीः।
देवाभियुक्तोऽभिधयापि वीरः, श्रीवीरतीर्थे गुरुरेष जीयात्॥२॥
श्रीविजयप्रभसूरे-रुपासकः श्रीकृपादिविजयानाम्।
विदुषां शिष्यो मेघः, संबन्धमिमं लिलेख मुदा॥३॥

इति श्रीपट्टावलिसूत्रोपरिक्षिप्तगाथात्रयविवरणं संपूर्णम्।

श्रीगुरुमाला

[तपागच्छपट्टावलीसूत्रवृत्त्यनुसन्धानम्]

(कर्त्ता—*मुनिवर्यश्रीचारित्रविजयः*)



५८—*श्रीविजयदानसूरिपट्टे अष्टपंचाशत्तमः श्रीहीरविजयसूरिः* ॥

तस्य वि० त्र्यशीत्यधिके पंचदशशत१५८३वर्षे मृगशिर्षशुक्ल-नवम्यां ६ प्रह्लादनपुरे जन्म, वि० षण्णवत्यधिके १५६६ का० कृ० द्वितीयायां २ सोमे अष्टभिः सह अणहिल्लपुरे दीक्षा, वि० सप्ताधिके षोडशशते १६०७ वर्षे नारदीपुरे पं० पदं, अष्टाधिके १६०८ तत्रैव वाचक-पदं, दशाधिके १६१० मृगशुक्लदशम्यां१० शिरोह्यां सूरिपदं, वि० द्विचत्वारिंशदधिके १६४२ फत्तेहपुरे जगद्गुरुपदं ×, द्विपंचाशदधिके १६५२ भाद्रसितेकादश्यां ११ ऊन्नायां स्वर्गभूगमनं ॥ यैर्दील्लीश्वरपातिसाहिअकबरं मेवाडाधिपतिराणाप्रतापसिंहं च प्रतिबोध्य जैनशासनं स्फातिमद्विदधे । सर्वस्मिन्नार्यावर्ते अमारिपटहघोषः कारितः ॥

तत्तपः—२० चतुर्थभक्ताचाम्लजनितविंशतिस्थानक–८१ अष्टम–२२५षष्ठ–३६००चतुर्थभक्त–२०००आचाम्ल–२०००निर्विकृतिक–सूरिमं–

× शुद्धाः सर्वपरीक्षणैर्गुरुवरा ज्ञात्वेति पृथ्वीपतिः ।
सभ्यानां पुरतः स्वपर्षदि गुणांस्तेषां स्वधीशोधितान् ॥
उक्त्वा सर्वयतीशहीरविजयाख्यानामदाद् भक्तितः ।
स्वैर्वाक्यैर्बिरुदं "जगद्गुरु"रिति स्पष्टं महःपूर्वकम् ॥१६७॥

(वि०सं०१६४६ द्वि०भा०शु० ११ मंगलपुरे) —इति, जगद्गुरुकाव्ये ॥

त्राऽऽराधन–गुरु–रत्नत्रयी–द्वादशप्रतिमादिकं ॥ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्यादि-कर्ता ॥ तच्छिष्यसंततिस्तु–विजय--विमल--सागर--सुन्दर--हर्ष--रत्न--कीर्ति--चंद्र--वल्लभ--हंस -कुशल--रुचि--सौभाग्य--उदय--आनंद--सार एवं शाखासु विभक्ता द्विसहस्रीमीता ॥

ऊन्नतपुरेऽद्यावधि गुरुमंदिरं श्राद्धीलाडकीकृतस्तूपश्च भव्यानानंद-यतिस्म । श्रीसूरिचरित्रं विस्तररुचिना हीरसौभाग्य--जगद्गुरुकाव्य-हीरविजयसूरिरासादिभ्यो ऽवसेयं ॥

५९—*तत्पट्टे एकोनषष्ठितमः श्रीविजयसेनसूरिः ॥*

तस्य वि० चतुरधिके षोडशशत१६०४वर्षे होलिकादिने १५ नारदपुरे जन्म, वि० त्रयोदशाधिके १६१३ शुक्रशुक्लैकादश्यां पितृ-कमर्षि-वंदनान्तरं श्रीविजयदानसूरि हस्तेन सुरतिबंदिरे दीक्षा, वि० षड्विंशत्य-धिके १६२६ फा० शु० दशम्यां स्तंभनतीर्थे पण्डितपदं, वि० अष्टाविंशत्य-धिके १६२८ फा० शु० सप्तम्यां सोमे अहम्मदाबादे सूरिपदं, वि० एक-सप्तत्यधिके १६७१ ज्येष्ठकृष्णैकादश्यां स्वर्गः ॥

यस्मैअकबरेण "काली सरस्वती" ति बिरुदं षड्जल्पाश्च प्रदत्ताः ।

येन नमोदुर्वाररागादि शतार्थी—सुक्तावल्याद्याःकृताः, दिग्वासो भूषणः पराजितः, चतुर्दशभिर्दिनैः प्रवचनपरीक्षावादिनः पराजिताः, । अपरे ऽप्यहमदावादे निर्जिताः, लाभनगरे ईश्वरकतृत्वादिवादे जयो लब्धः ॥

यस्य "सवाई हीरविजयसूरि" रितिबिरुदं, अष्टौवाचकाः परःशताः प्रज्ञांशाः द्विसहस्रीमिताः शिष्याश्च ॥ ऋषभदासादिकवयोपि तत्कृपा-कटाक्षप्रफुल्लिता इति । अस्याशेषचरित्रं विजयप्रशस्तिकाव्याद्बेद्यं ।

यस्मिन् स्वर्गेगते तपागच्छे द्वौ संघावभूतां । १—श्रीविजयदेवसू-रिसत्को "देवसूरसंघः" अपरः २—श्रीविजयतिलकसूरिसत्क "आनंद-सूरसंघः" इति ॥

६०-तत्पट्टे षष्ठितमः श्रीविजयदेवसूरिः ।

तस्य वि० चतुस्त्रिंशदधिके षोडशशत१६३४वर्षे पोषशुक्लत्रयोदश्यां रवौ इलादुर्गेजन्म, वि० त्रिचत्वारिंशधिके १६४३ माघे शुक्लदशम्यां राजनगरे जनन्यासमं श्रीहीरविजयसूरिहस्तेन दीक्षा, वि० पंचपंचाशदधिके १६५५ सिकंदरपुरे श्रीशांतिजिनप्रतिष्ठायां पं०पदं, वि० षट्पंचाशदधिके १६५६ वैशाखसितचतुर्थ्यां सोमेप्रबलयोगे स्तंभतीर्थे श्रेष्ठिमल्लसाधुकृतमहामहोत्सवे वाचकपदं च सूरिपदं, वि० त्रयोदशाधिके सप्तदशशतवर्षे-१७१३ आषाढशुक्लैकादश्यां ऊन्नतनगरे स्वःप्राप्तिः ॥

यस्मै पातिसाहिजहांगीरेण मण्डपाचलदुर्गे बहुमानेन "जहांगीर-महातपा" बिरुदंदत्तं । येनाप्रतिबद्धविहारिणा नैकेषु वादेषु जयपताको-च्छ्रिता, आरासणे (J. B. A. C.) स्वर्णगिरौ च तीर्थे प्रतिष्ठा कृता । जगत्सिंहराणकाय चत्वारो जल्पाःप्रदत्ताः, बहूनि चमत्काराणि संदर्शितानि, नीतनीत वंदु इत्यादिस्वाध्यायाः कृताः ॥

तत्समये लुंपकैरपि शास्त्राध्ययनेन बहुधा प्रतिमा स्वीकृता ॥

अस्यसूरेर्विशिष्टचरित्रसंबंधो विजयदीपिका-देवानंदाभ्युदय-महात्म्यवृत्तिभ्यो ज्ञेयः ॥

तत्समये वि० नवाधिके सप्तदशशत१७०९वर्षे गूर्जरदेशे लूंपाकपूज्यस्य बजरंगर्षेः शिष्याल्लवजीकात् मुखपट्टीबंधा मूर्तिद्वेषिणो ढूंढका जातास्तस्य प्रथमोपसर्गाऽऽपातिद्दषदनुसारेण मतभेदेन वा "बावीशटोला" इतिनामान्तरं । तन्मूलभेदौ षडष्टकोटिकौ ॥

६१-तत्पट्टे एकषष्ठितमः श्रीविजयसिंहसूरिः ॥

तस्य वि० चतुश्चत्वारिंशदधिके षोडशशतवर्षे १६४४ मेदनीपुरे ओसवंशे पितृनत्थुमल्ल-मातृनायकदेगृहेजन्म, चतुःपंचाशदधिके १६५४ दीक्षा, त्रिसप्तत्यधिके १६७३ वाचकपदं, वि० द्व्यशीत्यधिके १६८२ माघ शुक्लषष्ठीसोमे इलादूर्गेसूरिपदं, नवाधिके सप्तदशवर्षे १७०९ सूरौ विद्यमाने एव सुरपदं ॥

६२-तत्पट्टे द्विषष्ठितमः श्रीसत्यविजयगणिः ॥

तस्य अशीत्यधिके षोडशशतवर्षे १६८० सपादलक्षदेशे लाडलुग्रामे जन्म, पिता वीरचंद्रो, माता वीरमदेवी, गृहस्थाभिधानं शिवराजः, चतुर्नवत्यधिके १६६४ दीक्षा, एकोनत्रिंशदधिके सप्तदशशतवर्षे१७२६ सोजतग्रामे पं०पदं०, षट्पंचाशदधिके १७५६ वा सप्तपंचाशदधिके ५७ अणहिल्लपुरपत्तने स्वर्गः ॥

तस्य पं० कर्पूरविजयगणि-पंकुशलविजयगणिनौ शिष्यौ ।

तस्मिन्काले तस्मिन्समये कालदोषात् निर्ग्रंथेषु प्रमादबहुलं क्रियाशैथिल्यं प्रवर्तितं । तद्दृष्ट्वा दूनमनसा परमवैरंगिकेण येन घोरतपस्विना भगवता सूरेराज्ञया उ०विनयविजय—उ०यशोविजयादिसहायेन क्रियोद्धारश्चक्रे । "ये क्रियोद्धारं शिश्रियुस्ते साधवो ऽन्ये तु यतय" इति तदा ख्यातिरभूत् । साधवोपि तत आरभ्य यतिभेदचिन्हं काषायिकं वस्त्रं दधुर्या प्रवृत्तिरद्यापि तद्रूपैव । यतयोपि सितवस्त्रधारिणः परिग्रहिणः औषध—मंत्र—तंत्रविद्यया ख्याता दृष्टिपथमवतरन्ति ॥

ततो मुनिभिः सूरिपदग्रहणाय मतांतरेण तु सर्वगच्छनायकपदग्रहणाय विज्ञप्तो य उवाच—"यस्मिन्नधिरूढा गणधरास्तत्र मादृशो लघुर्नार्हो, माभूत्तस्यपूज्यपदस्याशातना अहं मुनिरेव श्रेयानिति" कृत्वा न स्वीचकार सूरिपदमिति श्रूयते ॥

तस्य विशेषचरित्रं श्रीजिनहर्षनिबध्धात् तन्निर्वाणरासतो ज्ञेयं॥

तत्समये प्रभावकाः—

१—श्रीआनन्दघनः । ये तपागच्छे वैराग्यपूर्णाः निस्पृहिणस्तत्त्ववेदिनोऽध्यात्मशखेराः उ०यशोविजयकृतबहुमानस्तवा योगिराजोऽभूवन् । तत्कृतिः-चतुर्विंशतिस्तवाः द्विसप्ततिपदसंग्रहश्च ॥

२—उ० श्रीविनयविजयगणिः । यः श्रीहीरविजयसूरि-शिष्यबाचकोत्तमकीर्तिविजयस्य शिष्यः काश्यां उ०यशोविजयानांसहपाठी परमशां-

तरसः नित्यत्रिशतीश्लोककंठाग्रशक्तिः वि० अष्टत्रिंशदधिके सप्तदशशत १७३८ वर्षे रान्देरग्रामे स्वर्गमाक् ॥

तत्कृतयः—लोकप्रकाशः (श्लो० २००००), हेमलघुप्रक्रिया, तद्-बृहद्वृत्तिः, नयकर्णिका, शांतसुधारसभावना, सुखबोधिकानामवृत्तिः, सूर्यपुरचैत्यस्तवः (वि० सं० १६८९) चतुर्विंशतिस्तवनानि, स्तवाद्याः विनयविलासः, चत्तारीअट्ठ०चैत्यस्तवनं,ऋषभविनति, श्रीपालरासश्च + ॥

३—उ०श्रीयशोविजयगणयः ॥ येजगद्गुरुश्रीहीरविजयसूरिशिष्य-उ०कल्याणविजयगणि-शिष्यप्रमयेरत्नमंजूषाशुध्धिकृत्पं०लाभविजयगणि-शिष्यश्रीनयविजयस्य शिष्याः ॥ तेषां विक्रमादनुमानतः पंचाषदधिके षोडशशतवर्षे १६५० जन्म, अष्टपंचाशदधिके १६५८ दीक्षा, × वि० अष्टादशाधिकेसप्तदशशत१७१८वर्षे वाचकपदं, वि० पंचचत्वारिंशदधिके १७४५ दर्भावत्यां स्वर्गः ॥ ÷ "न्यायविशारद न्यायाऽऽचार्य महामहोपाध्याय" इत्यादिनि बिरुदानि ॥ =

+ तेषां शिष्य परंपरा चैवम्—पं० नयविजयः पं०उत्तमविजयः पं० नरविजयः पं० मेघविजयः पं० केसरविजयः पं० शांतिविजयः पं० विद्याविजयः पं० लक्ष्मीविजयः (यः धोराजीनगरे कालगतः) पं० गुलाबविजयः पं०चारित्रविजयः (यः वि० सं० १९८९ वर्षे पुण्यपत्तने कालं गतः) ।

× अयं वर्षनिर्णयो विचरणार्हः ।

÷ तच्चरणशिलालेखः—संवत्१७४५ शा०१६१० मार्गशीर्षशुक्लैकादशी । श्रीहीरविजयसूरीश्वर शिष्यपं०श्रीकल्याणविजयगणि शिष्यपं०लाभविजयगणि शिष्यपं०जीतविजयगणि सोदरा सतीर्थ्याः पं० श्रीनयविजयगणि शिष्यश्रीजशविजयगणिनां पादुका कारापिता ॥

= पूर्वं न्यायविशारदत्वबिरुदं काश्यां प्रदत्तं बुधै-
र्न्यायाचार्यपदं ततः कृतशतग्रन्थस्य यस्यार्पितम् ॥
—इति प्रतिमाशतकप्रशस्तौ १७ श्लोकार्धे, ॥

ते च द्विघट्यामेव देवसीप्रतिक्रमणस्मृतिकारकाः नीत्यंपंचशतश्लोककरणबुद्धयः संवेगरंगिणः बालब्रह्मचारिणः पंडितदीयमानोद्भिन्नयौवना सुरूपाकन्यायाःपरित्यागिणः परमतार्किकाः प्रतिक्रमणादेशे एव भगवतीस्वाध्याय—समकितसडसट्ठीस्वाध्यायरचयितारः अनौष्ठ्यवादाः अष्टाधिकशत न्यायग्रंथप्रणेतारः द्विलक्षप्रमाणग्रंथब्रह्माणो युगैकस्तंभाः सिध्धैंकारमंत्राः अवधानपटवः अकाण्डशासनरागाः श्रुतकेवलिप्रतीतिकारणम् ॥

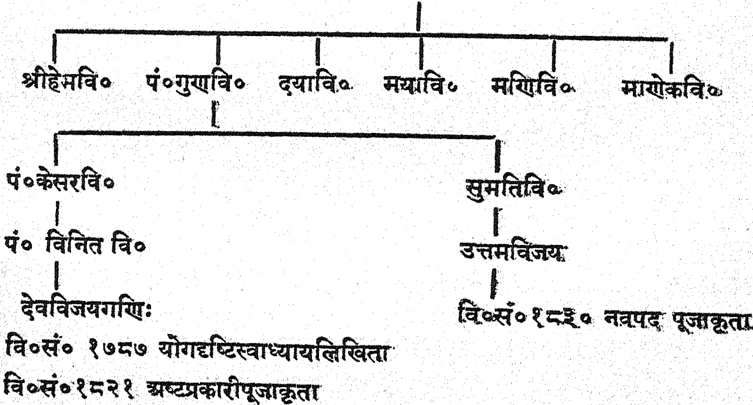
तेषांगुरुभ्राता श्रीपद्मविजयो गणिः ।

शिष्याः श्रीहेमविजयाद्याः यन्नामानि स्पष्टतया नोपलभ्यंते + ॥

तत्कृताः संस्कृतग्रन्थाः—अध्यात्मोपदेशः, अध्यात्मसारः, अध्यात्मोपनिषद्, अध्यात्ममतखण्डनवृत्ती, अध्यात्ममतपरीक्षावृत्ती, अलंकारचूडामणिवृत्तिः, अष्टसहस्त्रीवृत्तिः, अनेकान्तव्यवस्था, आत्मख्यातिः, आदिजिनस्तवनम्, आराधकविराधकचतुर्भङ्गी, उपदेशरहस्यवृत्ती, ऐन्द्रस्तुतिवृत्ती, कर्मप्रकृत्तिवृत्तिः, काव्यप्रकाशवृत्तिः, कूपदृष्टान्तः, गुरुतत्वनिर्णयवृत्ती, छन्दश्चूडामणिवृत्तिः, जैनतर्कपरिभाषा, तत्वार्थवृत्तिः, तत्वलोकवृत्तिः, तत्वविवेकः, त्रिसूत्र्यालोकविधिः, द्रव्यालोकः, द्वादशारनयचक्रोध्धारवृत्तिः, द्वात्रिंशद्द्वात्रिंशिकावृत्ती, देवधर्मपरीक्षा, धर्मपरीक्षावृत्ती, धर्मसंग्रहटिप्पनकम् ,नयप्रदीपः, नयोपदेशवृत्ती न्यायखण्डनखण्डखाद्यम् ,

---

+ तत्प्राप्तशिष्यपरंपरा ॥



न्यायालोकः पञ्चनिर्ग्रन्थि, पातञ्जलयोगसूत्रचतुर्थपादवृत्तिः, परमज्योतिः-पञ्चविंशतिका, परमात्मविंशतिका, प्रतिमास्थापनन्यायः, प्रतिमाशतकवृत्ती, मङ्गलवादः, मार्गशुध्धी, यतिदिनचर्या, यतिलक्षणसमुच्चयः, योगविंशिकावृत्तिः, विचारबिन्दुः, विधिवादः, वीरस्तववृत्ती, वेदान्तनिर्णयः, वैराग्यकल्पलता, समाचारीप्रकरणवृत्ती, स्याद्वादमञ्जूषा, सिद्धान्ततर्कपरिष्कारः, सिध्धान्तमञ्जरीवृत्तिः, श्रीगोडीपार्श्वनाथस्तोत्रम्, श्रीशंखेश्वरपार्श्वनाथस्तोत्रम्, श्रीसमीपार्श्वनाथस्तोत्रम्, स्तोत्रसंग्रहः, शठप्रकरणम्, षोडषप्रकरणवृत्तिः, ज्ञानबिन्दुः, ज्ञानार्णवः, ज्ञानसारवृत्ती, रहस्यपदांकितग्रन्थानामष्टोतरशतम् × ॥

गौर्जरीकृतिः—अध्यात्ममतपरीक्षास्तबक, आनन्दघनस्तुतिअष्टक, उपदेशमाला, जशविलास, जम्बुस्वामीरास, तत्वार्थसूत्रस्तबक, द्रव्यगुणपर्यायरासतथास्तबक, दिग्पटचोराशीबोल, पञ्चपरमेष्ठिगीता, ब्रह्मगीता, लोकनालितथास्तबक (रचनावि० सं० १६६५) विचारबिन्दुतथास्तबक, श्रीपालरासअन्त्यभाग, समाधिशतक, समताशतक, समुद्रवहाणसंवाद, सम्यकत्वचोपाइ साधुवंदनमाला, ज्ञानसारस्तबक इत्यादिग्रन्थाः ॥ कुमतिखंडनस्तवन, त्रणचोवीशी, वीशी, दशमतस्तवन, नयगर्भितशान्तिजिनस्तवन, निश्चयव्यवहारगर्भितस्तवन, पार्श्वनाथस्तवनद्विक, महावीरस्तवन,मौनएकादशीस्तवन, वीरहुंडीस्तवन श्रीसीमन्धरचैत्यवंदन, श्रीसीमन्धरविनति, श्रीसीमन्धरस्वामिबृहत्स्तवन आवश्यकस्तवन। इत्यादिस्तवाः

अंगउपांगस्वाध्याय (वि० सं० १७४४) अढारपापस्थानकस्वाध्याय, अमृतवेली, आठदृष्टि, आतमप्रबोध, उपशमश्रेणि, चताडपडतानीस्वाध्याय चारआहार, ज्ञानक्रिया, पांचमहाव्रतभावना, पांचकुगुरु, प्रतिक्रमणगर्भहेतु, प्रतिमास्थापन, यतिधर्मबत्रिशी, स्थापनाकल्प, सुगुरु, संयमश्रेणी, समकितनासडसठबोलनीस्वाध्याय,हरियाली,हितशिक्षा इत्यादि स्वाध्यायाः॥

× नयरहस्यम् भाषारहस्यम् स्याद्वादरहस्यम् प्रमारहस्यम् इत्यादि । यैः वि०सं०१६६९वर्षे डुंगरपुरे धातुसंग्रहो लिखितः, लोकनालिकापि कृता ॥

४—उ० श्रीमानविजयगणिः ।। यः श्रीहीरविजयसूरि—पट्टधरश्रीविजयसेनसूरि—पट्टधरश्रीविजयतिलकसूरि—पट्टधरविजयानन्दसूरि–पट्टधरविजयराजसूरिराज्यवर्ती श्रीविजयानन्दसूरि—शिष्यश्रीशांतिविजयस्य शिष्यो धर्मसंग्रहकर्ता (वि०सं०१७३१) ।।

५—श्रीआनन्दविमलसूरीणां शिष्यपं०हर्षविमलस्य प्रमेयरत्नमंजूषाशुध्धिकर्तुः संततावनुक्रमेण जयवि० कीर्तिवि० विनयवि० श्रीधीरविमलगणिनां शिष्यः श्रीज्ञानविमलसूरिः॥ यो साधुवंदनरास कल्याणमन्दिरस्तवन--चैत्यपरिपाटी--चैत्यवंदन--स्तव--स्वाध्याय--स्तुति--शतशोसिद्धाचलस्तवन--आनन्दघनचतुर्विंशतिस्तबक--तीर्थमाला (वि० १७५५) श्रीपालचरित्रादिकं रचयांचकार । यः क्वचित्स्वग्रन्थे उ० यशोविजयं स्मरतिस्म ।।

६—उ०उदयरत्नः । ख्यातमहाकविः बहूनां गूर्जरग्रंथानां प्रणेता × ।।

७—उ० मेघविजयगणिः । लूम्पकमते मेघजीऋषेर्मेघराजनाम्ना प्रशिष्यः, अत्र वि० एकोनषष्ठ्यधिके षोडशशते १६५६वर्षे श्रीविजयसेनसूरिहस्तदीक्षितः, श्रीहीरविजयसूरि–शिष्यउ०कनकविजय–शिष्यशीलविजय—शिष्यसिध्धिविजय—शिष्यकृपाविजयानां शिष्यः ॥

× तत्पट्टपरंपरा—५८ श्रीआनंदविमलसूरिः, ५९ श्रीविजयदानसूरिः, ६० श्रीराजविजयसूरिः, ६१ श्रीरत्नविजयसूरिः, ६२ श्रीहीररत्नसूरिः, ६३ श्रीजयरत्नसूरिः, ६४ भावरत्नसूरिः, ६५ दानरत्नसूरिः, ६६ कीर्तिरत्नसूरिः, ६७ मुक्तिरत्नसूरिः, ६८ पुण्योदयरत्नसूरिः ६९ अमृतरत्नसूरिः, ७० चंद्रोदयरत्नसूरिः, ७१ सुमतिरत्नसूरिः (खेडा)

तत्गुरुपरंपरा—६२ श्रीहीररत्नसूरिः, लब्धिरत्नः मेघरत्नः शिवरत्नः सिद्धिरत्नः उ० उदयरत्नः उत्तमरत्नः जिनरत्नः क्षमारत्नः राजरत्नः अनोपरत्नः तेजरत्नः उ० गुणरत्नः (विद्यमानः)

—(जैनयुग पु० ३ अं० ११–१२, वि० सं० १९८४)

(६०) श्रीराजविजयसूरिशिष्यो देवविमलगणिः पाण्डवचरित्रकृत् ॥

तत्कृतयस्तु—देवानन्दाभ्युदयकाव्यं, श्रीशांतिनाथचरित्रं (काव्यं) विजयदेवमहात्म्यवृत्तिः, दिग्विजयः (श्रीविजयप्रभसूरिचरित्रं), चंद्रप्रभाव्याकरणं (श्रीसिद्धहेमव्याकरणप्रक्रिया वि० सं०१७५७ आगरा) मेघदूतसमस्या, युक्तिप्रबोधः (दि० तेरहपन्थखंडनं), सप्तसन्धानमहाकाव्यम्, त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरित्रम्, मेघमहोदयः, ब्रह्मबोधः, मातृकाप्रसादः, श्रीपार्श्वनाथनाममाला, उदयदीपिका, त्रिणि पत्राणि च ÷ ॥

८—श्रीदेवचन्द्रो गणिः—श्रीखतरगच्छे जिनचंद्रसूरि-शिष्योपाध्याय पुण्यप्रधान-शिष्यउ०सुमतिगणि-शिष्यउ०राजसागर-शिष्यज्ञानधर्मजी-शिष्य दीपचंद्रगणिस्तशिष्यश्रीदेवचंद्रोगणिः परमशांतः द्रव्यानुयोगनिष्णातः सर्वगच्छसमानहृदयः× ॥

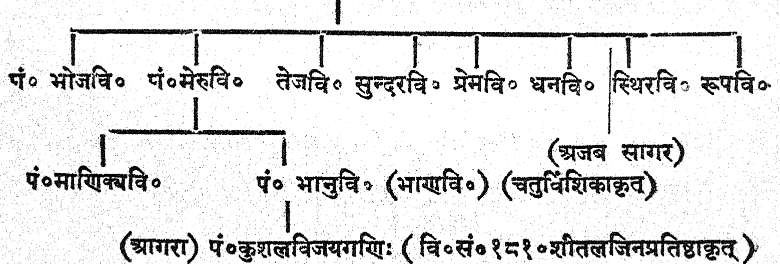
येन वाचकवर्यश्रीयशोविजयेभ्योध्यात्मरसो पीतश्च येन श्रीजिनविजय-उत्तमविजयाः पाठिताः ॥ तच्छिष्याः श्रीमतिरत्नाद्याः ॥

तत्कृतयः—ध्यानदीपिका, आगमसार, नयचक्र, ज्ञानमञ्जरीटीका, चतुर्विंशतिः विंशिका, पूजा स्तवाः प्रभंजनाप्रमुखस्वाध्यायाः इत्यादि ॥

यैः पं०क्षमाकल्याणकगणिना सह क्रियोध्धारश्चक्रे ततः खरतरगच्छे ऽपि काषायिकवस्त्रप्रवृत्तिरिति श्रूयते,

---

÷ तत् शिष्यपरंपरा ॥ उ० मेघविजयः (वि० सं० १७९६)



× तद्ग्रन्थरचनाकालस्तु वि० सं० १७४३ तः १८०४ पर्यन्त इति तस्मादयं श्रीउत्तमविजयसमकालीन इति सयुक्तियुक्तं ॥

६३–तत्पट्टे त्रिषष्ठीतमः श्रीकपुरविजयगणिः ॥

तस्य पत्तनसमीपस्थवागरोडग्रामे प्राग्वटवंशे भीमजीगृहे वीराकुक्षौ जन्म, कानजीअभिधानं, वि० विंशत्यधिके सप्तदशशत१७२०वर्षे जननी-जनकयोर्देवलोकगतयोः दीक्षा, विजयप्रभसूरिहस्ते प्रज्ञांशपदं वि० पादोनाष्टादशशत १७७५ वर्षे श्रावणबहुलचतुर्दश्यां १४ स्वर्गः।

६४–तत्पट्टे चतुष्षष्ठितमः श्रीक्षमाविजयगणिः ॥

तस्य अर्बुदाचलसन्निधौ पोयंद्राग्रामे कलोशाह-वनांदेगृहे ओसवंशे चामुण्डागोत्रे वि० द्वाविंशत्यधिके सप्तदशशते१७२२वर्षे खीमचंद्रनाम्ना जन्म, चतुश्चत्वारिंशदधिके १७४४ वर्षे ज्येष्ठसितत्रयोदशीदिने गुरु भ्रातृकवि पं० श्रीवृद्धिविजयहस्तेन अहमदावादे दीक्षा, विजयक्षमासूरि-हस्तेन पं० पदं, षडशीत्यधिके १७८६ आश्विनमासे स्वः प्रयाणं ॥ येन सप्तशतजिनप्रतिमाः प्रतिष्ठापिताः ॥

तत्कृतयः—पार्श्वनाथजिनस्तवनचैत्यवंदनस्तुत्याद्याः

तस्य शिष्यश्रीयशोविजयः श्रीतत्त्वार्थसूत्रस्तबकस्तवादिकर्ता।

६५–तत्पट्टे पंचषष्ठितमः पं०श्रीजिनविजयगणिः ॥

तस्य श्रीमालज्ञातिः पिताधर्मदासो मातालाडकुमारी विक्रमात् द्विपं-चाशदधिके सप्तदशशत१७५२वर्षे अहमदावादे जन्म,जन्मनाम खुशालचंद्रः

वि० सप्तत्यधिके १७७० वर्षे कार्तिककृष्णषष्ठयां अहमदावादे दीक्षा, वि० एकाशीत्यधिके १७८१ वर्षे गुरूणां हस्तेन जम्बूसरे प्रज्ञांशपदं, द्वितीय एव वर्षे गच्छानुज्ञादानं, एकोनाष्टादशशत१७९९वर्षे श्रावणशुक्लदशम्यां पादराग्रामे स्वर्गगमनं ॥

तत्गौर्जरीकृतिः—ज्ञानपंचमीस्तवः एकादशीस्तवः जिनचतुर्विंशिका कर्पूरविजयगणिस्वाध्यायो गुरुस्वाध्यायश्च (सं० १७७१ पट्टने)

६६—*तत्पट्टे षड्षष्ठितमः श्रीउत्तमविजयगणिः ॥*

तस्य श्रेष्ठिलालचन्द्रगृहे माणेकदेवीकुक्षौ अहमदावादे वि० षष्ठ्यधिके सप्तदशशतवर्षे १७६० जन्म, पूञ्जासाहनाम, षण्णवत्यधिके १७९६ वैशाखकृ०षष्ठ्यां ६ दीक्षा, सप्तविंशत्यधिके अष्टादशशतवर्षे १८२७ माघशुक्लाष्टम्यां ८ राजनगरे स्वर्गगमनं, यो बहुश्रुतः सातत्येन गूर्जरसौराष्ट्रमहाराष्ट्रादिषु विजहार प्रान्ते नेत्रव्याधिना राजनगरेऽवस्थानमकरोत् यः चतुरधिकाऽष्टादशशत१८०४वर्षे सं०कचरा सं०रूपचंद्रयोः संघेन सूरतिबन्दिरात् जलमार्गेण सिध्धाचलयात्रां चकार तत्समये तत्र उ०सुमतिविजयः पं०जोगविमलः पं०देवचंद्रगणिः विधिपक्षगच्छे उदयसागरसूरिः प्रमुखा मिलिताः ।

तत्कृतिः—श्रीजिनविजयनिर्वाणरासः, अष्टप्रकारीपूजा ॥

तत्समयेष्टादशाधिकेष्टादशशतवर्षे १८१८ रघुनाथशिष्यात् ढुंढकमतात् भीखमजीतः जिनप्रतिमाद्वेषी अनुकंपाविरोधि मुखपट्टबन्धस्तेरापंथो निर्गतः ।

६७—*तत्पट्टे सप्तषष्ठितमः पं०श्रीपद्मविजयगणिः ॥*

तस्य वि०द्विनवत्यधिकसप्तदशशत१७९२वर्षे राजनगरे श्रीमालीवणिजो गणेशस्य गृहे झमकुकुक्षितो जन्म, जन्माभिधा पानाचंदइति, वि० पंचाधिके अष्टादशशत१८०५वर्षे वसन्तपंचम्यां ५ राजनगरे दीक्षा, वि०दशाधिके १८१० राजधन्यपुरे भ०विजयधर्मसूरिहस्तेन, पंन्यासपदं, वि०द्विषष्ठ्यधिके १८६२ चैत्रशुक्लचतुर्थ्यां राजनगरे स्वर्गः ॥

यःसकलशास्त्रपारावारपारीणः पंचपंचाषत्सहस्रग्रंथनिर्माता "परमद्रह" इतिख्यातकीर्तिः बर्हानपुरे ढुंढकैः सह लब्धजयवादः जिनप्रतिष्ठादिक्रियापरायणः क्रियारुचिः परमसम्वेगिः कविशेखरः सततविहारी ॥

तत्कृतयो– रास–श्रीउत्तमविजयगणिरास–पूजा–देववंदन–चैत्यवंदन–स्तव–स्तुत्याद्याः ॥

६८—*तत्पट्टे अष्टषष्ठितमः पं०श्रीरूपविजयगणिः ॥*

येन विंशतिस्थानकागमज्ञानकल्याणकपूजाःश्रीगुरुरासश्च विरचिताः ॥ तच्छिष्याः–पं०कीर्तिविजयगणि उद्योतवि० अमीविजयाश्च ॥

तत्समये तच्छिष्यमहाकविमोहनविजयो भक्तिरसप्रधानः "लटकाला" इतिख्यातः ॥ तथा पं० जिवविजयः कर्मग्रन्थस्तबककर्ता + ॥

तथा पं०श्रीक्षमाविजयगणि-शिष्यशुभविजयगणि-शिष्याः पं०श्रीधीरविजयः पं० श्रीवीरविजयः, पं० श्रीअमरविजयः पर्यूषणास्तूतिकारक इति प्रमुखाः ॥

तेषु पं०श्रीवीरविजयः सौष्टवतायुततलस्पर्शिकवित्वः विविधभंगीकलितपूजास्वाध्यायस्तुतिवेलीरासरूपलघुग्रंथनिर्माता मोतिशाहटुँक-हठीसिंहवाडीजिनालये प्रतिष्ठाकर्ता श्रेष्ठिप्रेमाभाइकस्य संघेन सिध्धगिरियात्राकारकः (वि० सं० १९०५)

यस्य अहमदावादे औदिच्यविप्रकुले जगदीश्वरपत्नीवीजकोरकुक्षितो विक्रमादेकोनत्रिंशत्यधिकेऽष्टादशशतवर्षे १८२९ विजयादशम्यां जन्म, जन्मनोऽभिधानं केशवराम इति, गंगाभगिनी,पत्नीरलीयात,अष्टादशमे वर्षे विवाहः अष्टचत्वारिंशदधिके१८४८वर्षे स्तंभनतीर्थसन्निधौ ग्रामे दीक्षा,ततः पन्यासपदं, सप्तषष्ठ्यधिके १८६७ वर्षे फाल्गुनशुक्लद्वितियायां स्वगुरोर्देवलोके स्थितिः, वि० दशाधिके एकोनविंशतिशत१९१०वर्षे स्वर्गगमनम् ॥

श्रीतपोगच्छे आनन्दसूरिशाखायां क्रमेण श्रीविजयतिलकसूरि-श्रीहीरसूरिशिष्यविजयानन्दसूरि-श्रीविजयराजसूरि-श्रीविजयमानसूरि ÷ — श्रीविजयऋद्धिसूरि श्रीविजयसौभाग्यसूरयो भूवन् ॥ तच्छिष्यो विजयलक्ष्मीसूरिः उपदेशप्रासादस्तंभनिर्माणसूत्रधारः (वि० सं० १८४३)-भाषायां विंशतिस्थानकपूजा (वि० सं० १८४५)-चैत्यवन्दन-ज्ञानवंदनादीनां कर्ता,॥ यल्लघुगुरुबंधुः प्रेमविजयः ॥

\+ श्रीविजयसिंहसूरि शिष्यपं०गजविजयगणि शिष्यपं०हितविजय शिष्य पं०ज्ञानविजय शिष्यपं०जीवविजय इति (कर्मग्रन्थ वि०सं० १८०३)

÷ अयं श्रीधर्मसंग्रह-अष्टमदस्वाध्यायकर्ता उ०मानविजय एव संभवति

६९--तत्पट्टे एकोनसप्ततितमः पं० श्रीकीर्तिविजयगणिः ॥

तस्य वि० एकषष्ठ्यधिकाष्टादशतवर्षे दीक्षा, बहवःशिष्याः ॥ तच्छिष्यो जीवविजयः सकलतीर्थ-शांतिजिनस्तवकर्ता ॥

७०—तत्पट्टे सप्ततितमः श्रीपं० कस्तूरविजयगणिः ॥

तस्य वि० सप्तत्रिंशदधिके अष्टादशशतवर्षे १८३७ प्रह्लादनपुरे जन्म, वि० सप्तत्यधिके १८७० दीक्षा ॥

७१—तत्पट्टे एकसप्ततितमः पं० श्रीमणिविजयगणिः ॥

तस्य वीरमगामसन्निधौ अघारग्रामे द्विपञ्चाशदधिके अष्टादशशतवर्षे १८५२ जन्म, पिता जीवणदास, माता गुलाबबाइ, स्वनाम मोतिचंद, त्रयो भ्रातरः पातु भगिनी, सप्तसप्तत्यधिके १८७७ पालीग्रामे दीक्षा, पंचत्रिंशदधिके एकोनविंशतिशतवर्षे १९३५ आश्विनधवलाष्टम्यां ८ अहमदाबादनगरे स्वर्गः ॥ यो महातपस्वी, अप्रतिबध्धविहारी प्रशान्तमूर्तिश्च ॥

तत्सप्तर्षयः शिष्याः-श्रीअमृतविजयः श्रीपद्मविजयः पं० श्रीबुध्धिविजयगणिः पं० श्रीगुलाबविजयगणिः श्रीहीरविजयः पं० श्रीशुभविजयः पं० श्रीसिद्धिविजयः ॥ प्रज्ञांशगुलाबविजयसिध्धिविजयौ सांप्रतं शासनमलंकुरुतः स्म ॥

७२—तत्पट्टे द्विसप्ततितमः श्रीबुध्धिविजयगणिः ॥

तस्य सुस्वप्नसुचितस्य वि० षष्ठ्यधिकअष्टादशतवर्षे १८६३ पंचनदे जन्म, अष्टाशीत्यधिकेवर्षे १८८८ अजिम्हब्रह्मचर्येणैवादौ ढुंढकमते बुटेरायजीनाम्ना व्रतस्वीकारः वि० त्र्यधिके एकोनविंशतिशते १९०३ वर्षे शुद्धधर्मश्रध्धानं, वि० द्वादशाधिके १९१२ राजनगरे शिष्याभ्यां समं संवेगदीक्षा, अष्टत्रिंशदधिके १९३८ फाल्गुनावास्यां राजनगरे स्वराप्तिः, भगुभाइपुत्रदलपतभाइ इत्यनेन निर्वाणोत्सवः कृतः ।

यः मुखपट्टीं विना ढुंढकसाधुवेषेणैव अष्टौ वर्षाणि शुद्धधर्मदेशकः, सिध्धगिरियात्राकृत्, पंचनदे संवेगमतद्योतकेषु प्रथमः, मुहपत्तिचर्चाग्रंथकृत्, परात्मतत्वानंदी, महान्योगी, निःस्पृहः ।

तच्छिष्याष्टकम्—

(१) प्रथमः श्रीमुक्तिविजयो गणिः गणनायकः चारित्रधर्मयुगप्रवर्तकः ।

(२) द्वितीयो मुनिश्रीवृद्धिचंद्रः । यस्य पंचनदे रामनगरे नवत्यधिके अष्टादशशतवर्षे ओसवंशे जन्म, अष्टाधिके एकोनविंशतिशते वर्षे ढुंढकमते दीक्षा, द्वादशाधिके संवेगदीक्षा, एकोनपंचाशदधिके भावनगरे स्वर्गः ॥

तच्छिष्याः—श्रीकेवलविजयः पं०श्रीगंभिरविजयः पं०चतुरविजयः श्रीहेमविजयः श्रीविजयधर्मसूरिः श्रीविजयनेमिसूरिः श्रीप्रेमविजयः श्रीकर्पूरविजयः उत्तमविजयः ।

(३) तृतियो मुनिनीतिविजयः । यच्छिष्याः—

पं०विनयविजयः, श्रीभक्तिविजयः, शान्तात्मा सिध्धिविजयः, तिलकविजयः, मोतिविजयः, प्रतापविजयः, सुंदरविजयः, दर्शनविजयः, चारित्रविजयः ।

(४) चतुर्थः पं०आनंदविजयः ।

यच्छिष्याः—श्रीहर्षविजयः, मानविजयः कुमुदविजयः ।

(५) पंचमो मोतिविजयः । यच्छिष्यौ चंद्रविजय–गुणविजयौ ।

(६) षष्ठः श्रीविजयानंदसूरिः पंचापे जैनधर्मस्थापकः न्यायांभोनिधिरितिख्यातिमान् दयानंदसरस्वतीविजेता ॥ यस्य पंचनदे लहेराग्रामे गणेशारामगृहे रूपाकुक्षौ वि०त्रिनवत्यधिके अष्टादशशतवर्षे१८९३जन्म, वि० एकादशाधिके एकोनविंशतिशतवर्षे १९११मृगशिर्षपंचम्यां ढुंढकमतदीक्षा, एकत्रिंशदधिके १९३१ राजनगरे जैनदीक्षा, त्रिचत्वारिंशदधिके १९४३ वर्षे कार्तिककृष्णपंचम्यां सूरिपदं, द्विपंचाशदधिके १९५२ प्रथमज्येष्ठशुक्लसप्तमीनिशायां गुजरानवालायां स्वर्गमनं ॥

यत्कृतग्रंथास्तत्वनिर्णयप्रासाद जैनतत्वादर्श–अज्ञानतिमिरभास्कर–सम्यक्त्वशल्योद्धार–जैनमतवृक्ष–चिकागोप्रश्नोत्तर–जैनप्रश्नोत्तरसंग्रह—पूजा–चतुर्विंशतिस्तव–स्वाध्यायाः ।

यत्छिष्याः श्रीमन्तो लक्ष्मी०संतोष० रंग० रत्न० चारित्र० कुशल० प्रमाद० उद्योत० सुमति० वाचकवीर० प्रवर्तककांति० जय० शांति० अमरविजयाः ।

(७) सप्तमः तपस्वी श्रीखांतिविजयः पंचनदीयः षष्ठभक्ततपोऽभिग्रही उग्रतपस्वी । यच्छिष्याः–मणिक०मोहन०खुशाल०प्रतापविजयाः ।

(८) अष्टमः श्रीदानविजयः ।

तत्समये श्रीआनंदविमलसूरितो विमलशाखायां क्रमशः ऋध्धिविमल–कीर्तिविमल–वीरविमल–महोदयविमल–प्रमोदविमल–मणिविमल–उद्योतविमल–दानविमलस्य शिष्यः प्रज्ञांशदयाविमलः ॥ तथा हीरविजयसूरितः क्रमेण विजयशाखायां ऋध्धि० चारित्र० रंग० तेज० यशवंत० कुशल० पं०जीत० श्री० जय० पं०हर्ष० चंद्रविजयाः तत् शिष्यः प्रज्ञांशहेतविजयः ॥ तथा ततएव सागरशाखायां शिष्यक्रमेण उ०सहजसागर–उ०जयसागर–पं०जीतसागर–मानसागर–मयगलसागर–पद्मसागर–स्वरूपसागर–ज्ञानसागर––मयासागराः तत्शिष्यस्तपस्वीनेमसागरः॥ श्रीरूपवि०शिष्यअमीवि०शिष्यसौभाग्यवि०शिष्यपं रत्नविजयः॥ खरतरगच्छेऽपि आप्रह्लादनपुरात् तपागच्छाचारः सौम्यमूर्तिः श्रीमोहनलालजीमुनिः ॥

तत्समये श्रीनेमसागरशिष्यश्रीरविसागरशिष्यात् शांतिसागरात् स्वेच्छावृत्तिर्व्रतविधितपोविरोधो मनस्तोषधर्मः "शांतिसागरमतो"निर्गतः ।

तथान्यदर्शनेषु स्वामिनारायण, ब्रह्मसमाज, कुका, अहमदशाह-फीरका, आर्य्यसमाज एते मता निर्गताः इति ॥

७३ — त्रिसप्ततितमः श्रीमुक्तिविजयगणिः ॥

तस्य वि षड्शीत्यधिके अष्टादशशतवर्षे १८८६ पंचनदे श्यालकोटे जन्म, द्वयधिके एकोनविंशतिशतवर्षे १९०२ श्रीबुटेरायजीहस्तेन ढुंढकमतदीक्षा, द्वितीयवर्षे संवेगधर्माभिमुखता, द्वादशाधिके १९१२ गुरुणा सह

संवेगदीक्षा, त्रयोविंशत्यधिके १९२३ पं०दयाविमलगणिहस्तेन गणिपदं, पंचचत्वारिंशदधिके १९४५ मृगशिर्षकृष्णषष्ठ्यां६ भावनगरे स्वर्गः, दादावाडीउद्याने अग्निसंस्कारः, मोतिशाटूंकमध्ये सिध्धगिरौ मूर्तिप्रतिष्ठापनं।

यः संवेगमुर्तिः शिष्यलाभोदयः चारित्रधर्मैकदानी एकछत्रमुनिसाम्राज्याधिपतिः मुहपत्तिचर्चावादविजेता शांतिसागरमतनिरसनः युगप्रधानः। यदुपदेशात् श्रेष्ठिप्रेमाभाइ भगिनीउजमबाइ इत्यनया स्वावासः पौषधशालायै दत्तः द्वौसिद्धगिरिसंघौ निर्गतौ (वि०१९२१ वि०सं० १९४४) द्वितीयसंघेन सह विहारे घटः स्फुटितो बहूनां निषेधेऽपि विहारः कृतः पादलिप्तपुरे चतुर्मासकमपिजातं, ततो भावनगरे स्वर्गः युगप्रधाने गते शासने कलिः समागतः॥ श्रीवृद्धिचन्द्रप्रमुखा गुरुभातरस्तद्वस्तदीक्षिता एव येन नैके शिष्या गुरुबन्धुभ्यो दत्ताः॥ येन महेशानपुरे संवेगिमुनिप्रचारः कृतः। पादलिप्तपुरे श्रीदर्शनविजयं प्रेष्य यतिरुद्धं मुनिव्याख्यानमुद्घाटितं यदद्यापि निरंतरायं समस्ति।

सूरिपदप्रदानतत्परं प्रेमाभाइश्रेष्ठिनं येनोक्तं—श्रेष्ठिन्: अतःपरं पुनरेतन्नवाच्यं यदि श्रीसत्यविजयगणिरपि प्रतिष्ठापदमानहानिभिया सूरिपदं न ललौ तदाहंकथं तद्योग्यः ? मम गणिपदमपि महत् पालनेनैव प्राप्तपदव्याः फलाप्तिरन्यथातु सूरयोऽपि नरकगामिनः सूत्रे कण्ठिता इति।

तस्य शिष्याः—(१) प्रशस्तागमाभ्यासिदेवविजयः (२) गुणविजयः (३) हंसविजयः (४) गुलाबविजयः (५) श्रीविजयकमलसूरिः (६)थोभणविजयः (७) महावैयाकरणन्यायविशारदो दानविजय इति।

तेषु श्रीमद्गुलाबविजयस्य शिष्याः–मणिविजयः मंगलविजयः, नरेन्द्रविजयः प्रधानविजयः।

७४–तत्पट्टे चतुःसप्ततितमः श्रीविजयकमलसूरिः॥

तस्य वि त्रयोदशाधिके एकोनविंशतिशते वर्षे १९१३ चैत्रशुक्लद्वितीयायां २ पादलिप्तेपुरे कोरडीयागोत्रे श्रेष्ठिदेवचन्द्रगृहे मेघबाइकुक्षौ-

जन्म, कल्याणचन्द्र नाम, चत्वारो भ्रातरः, मृतयोर्मातृपित्रोः षड्त्रिंशदधिके १९३६ माधवशुक्लाष्टम्यां राजनगरे दीक्षा, द्वितीयवर्षे१९३७कार्त्तिकासित-द्वादश्यां उपस्थापना, वि०सप्तचत्वारिंशदधिके १९४७ ज्येष्ठशुक्लत्रयोदश्यां १३पं०श्रीहेतविजयहस्तेन लींबडीनगरे गणिपदं पन्यासपदं, वि०त्रिसप्तत्यधिके १९७३ माघ शुक्लषष्ठ्यां ६ रविवारे राजनगरे पं० श्रीदेवविजय-गणिः, पं०श्रीमोहनविजयगणिः, प्रवर्तिनिआर्यागुलाबश्रीजी, साध्वी-प्रेमश्रीजी, नगरश्रेष्ठिकस्तूरभाइ, श्रेष्ठिविमलभाइ, श्रेष्ठिमातागंगामा, श्रेष्ठि-नीमुक्ताबाइ, प्रमुखसमग्रसंघेनप्रदत्तं सूरिपदं ॥

तच्छिष्याः—(१) श्रीभावविजयः, (२) पं श्रीकेसरविजययो गणिः, (३) श्रीविनयविजयो गुरुः, × (४) पं० देवविजयगणिः, (५) पं० मोहन-विजयगणिः व्याख्याता (६) श्रीमोतिविजयः ॥ तथा हेतवि०रामवि० नयवि०ज्ञानविजया निरपत्या एव स्वर्गभाजः ॥

यः करुणावत्सलः शांतप्रतिमो महातपस्वी आबालब्रह्मचारी सूरि-शेखरो भगवान् चतुर्विधसंघेन सह समागत्य संप्रति पादलिप्तपुरमलंक-रोति, जीवेभ्यो दुःखौषधिरूपं धर्मलाभं ददन् जगत्कल्याणं वांच्छति स्म ॥

सम्प्रति धुरिणः–श्रीविजयनेमसूरिः श्रीविजयकमलसूरिः श्रीविजय-धर्मसूरिः श्रीबुद्धिसागरसूरिः पं०सिद्धिविजयगणिः परमकारुणिकोमुनि-सिद्धिविजयः पं०चतुरविजयगणिः परमक्रियारुचिः श्रीजीतविजयः आग-मनिष्णातः पं० आणंदसागरगणिः पं०हरखमुनिश्च

× श्रीविनयविजयस्थविराणां वि०सं० १९१९ वै०शु० ६ जामनगरे जन्म, वि०सं०१९२५ जामनगरे लघुदीक्षा, वि० सं०१९२७ महेसानपुरे पोषकृष्ण११ छेदोप-स्थापना, १९८३ का० कृ० ६ जामनगरे स्थविरपदं, वि०सं० १९८८ पोष कृ० ९, जामनगरे स्वर्गः ॥

॥ प्रशस्ति ॥

जीयासुर्न्यायविभवाः यशोविजयवाचकः
गुरुकुलहिते दक्षाः स्मृतिप्रत्यक्षमूर्तयः १

वर्द्धमानात्समारभ्य गुरुमाला गुणैर्वरा
वर्द्धमानासहस्राब्दं धीसूच्या सूत्रिता नवा २

श्रीमद्‌विजयकमल–सूरीणामाज्ञयाकृता
गुप्तिध्यानजिनेवर्षे पञ्चम्यां श्रावणे सिते ३

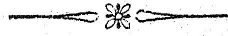
तेषां शिष्यविनय—विजयस्यान्तेवासिना
चारित्रविजयेनैषा पादलिप्ते पुरे लघुः ४

इति श्रीमती गुरुमालापट्टावली समाप्ता

धर्मचारित्रशिष्येण, अमरचंद्रसूनुना
पं०त्रिभूवनदासेन, शुध्धिकृत्य च चित्रिता १

श्रीमन्महावीरपट्टपरम्परा

(कर्त्ता — श्रीदेवविमलगणिः)



अथो पुरासन्भरते वृषाङ्कमुखाश्चतुर्विंशतितीर्थनाथाः ।
बाह्यान्यबाह्यानि तमांसि हन्तुं कृतद्विरूपा इव भानुमन्तः ॥१॥
इक्ष्वाकुवंशाम्बुधिशीतभासां द्वाविंशतिस्तीर्थकृतां बभूव ।
यया तमःपङ्कमपास्य पन्थाः प्राकाशि सिद्धेः शरदेव विश्वे ॥२॥
बभूवतुर्द्वौ भुवनप्रदीपौ जिनौ यदूनां पुनरन्ववाये ।
अरिष्टनेमिर्मुनिसुव्रतश्च स्फूर्जद्भुजाविन्द्रियवेश्मनीव ॥३॥
सिद्धार्थभूकान्तसुतो जिनानामपश्चिमोऽजायत पश्चिमोऽपि ।
शशी व्यभात्पङ्किलपङ्कजास्यकादम्बवध्वस्य यशःसुधाब्धौ ॥४॥
बाल्येपि हेमाद्रिरकम्पि येन प्रभञ्जनेनेव निकेतकेतुः ।
श्रीद्वादशाङ्गी च यतः प्रवृत्ता गुरोर्गिरीणामिव जह्नुकन्या ॥५॥
एकादशासन्गणधारिधुर्याः श्रीइन्द्रभूतिप्रमुखा अमुष्य ।
आर्योपयामे पुनराप्तमूर्तिं रुद्राः स्मरं हन्तुमिवेहमानाः ॥६॥
बभूव मुख्यो वसुभूतिसूनुस्तेषां गणीनामिह गौतमाह्वः ।
यो वक्रभावं न बभार पृथ्वीसुतोऽपि नो विष्णुपदावलम्बी ॥७॥
यत्पाणिपद्मः सपुनर्भवोऽपि दत्ते नतानामपुनर्भवं यत् ।
शिष्यीकृता येन भवं विहाय शिवं श्रयन्ते च तदत्र चित्रम् ॥८॥
सूर्यस्य रश्मीनवलम्ब्य वक्त्रावलम्बरश्मीनिव यः शयाभ्याम् ।
नन्तुं जिनानार्षभिक्लृप्तमूर्तीनष्टापदोर्वीधरमारुरोह ॥ ९ ॥

१—तपः कृशाङ्गास्तं शैलमारोढुं न वयं क्षमाः ।
चढिष्यति कथं प्रौढदेहोऽयं गजराजवत् ॥

कथं लभेतास्य तुलां सुरद्रुर्यस्य नामापि पिपर्ति कामान् ।
तपस्विनोऽप्यभ्यवहारयन्यो द्विधामृतास्वादजुषः पुपोष ॥१०॥
आसीत्सुधर्मा गणभृत्सु तेषु श्रीवर्धमानप्रभुपट्टधुर्यः ।
विहाय विश्वे सुरभीतनूजं कः स्तात्परो धुर्यपदावलम्बी ॥११॥
यः पञ्चमोऽभूद् गणपुंगवानां किं पञ्चमीं स्वेन गतिं यियासुः ।
यत्रोक्तिभिस्तीर्थकृतां दिदीपे शुक्तिव्रजे वारिमुचामिवाद्भिः ॥१२॥
सरस्वतीशालिलसज्जिनश्री-रगाधमध्यो रसभासमानः ।
सिद्धांत आस्ते यदुपज्ञमुद्यदभङ्गभङ्गः सरितामिवेशः ॥१३॥
गणीन्दुना पट्टरमा गणीन्दुः पट्टश्रिया च व्यतिभासते स्म ।
निशा निशेशेन निशा निशेश इवापि शंभोः परिचारिचेताः ॥१४॥
यशःश्रियाधःकृतकुन्दकम्बु-र्जम्बूकुमारोऽजनि तस्य पट्टे ।
लवोरपि स्वस्य यतोऽभिभूतिं पश्यन्ह्रियादृश्य इव स्मरोऽभूत् ॥१५॥
उज्झांचकारैष महेभ्यकन्या मदेन्दिरामूर्तिमतीरिवाष्टौ ।
नवाधिकां यो नवतिं हिरण्यकोटीर्नु चेटीरिव दोषराजाम् ॥१६॥
वशंवदीभूतजगत्त्रयस्य न पुस्फुरेऽस्मिन्कमनस्य शक्त्या ।
हविर्भुजो भस्मितकाननस्य विस्फूर्ज्यते किं महसाम्बुराशौ ॥१७॥

पश्यत्सु तेषु मार्तण्डकरानालम्ब्य गौतमः ।
गणभृन्निजलब्ध्यैवाऽष्टापदोर्ध्वं ययौ ध्रुवम् ॥ इति ऋषिमंडलवृत्तौ ॥

सूर्यस्यांशून् समाश्रित्य, तेषामुत्पश्यतामपि ।
स गरुत्मानिवोड्डीय, ययौ मंक्षु गिरेः शिरः॥ इतिवृन्दारवृत्तौ, रविकिरणावलम्बनम् ।

तथा—" भयवं गोयमो जंङ्घाचारणलद्धिपलूतापुडगंम्मिनिस्साए उठ्ठुंप्पयइ जाव ते पलायन्ति" । इत्यावश्यकद्वाविंशतिसहस्त्र्यां । मलयगिरिवृत्तावपि अयमेव पाठः । लूतातन्त्ववलम्बनमिति पाठद्वयमपि शास्त्रानुसारि ॥ इति स्वोपज्ञायां तद्व्याख्यायाम् ॥

पश्यन्तु वैदुष्यममुष्य जम्बू–प्रभोर्वपुर्भर्त्सितमत्स्यकेतोः ।
विश्वं वृषस्यन्त्यपि पांशुलेव वशीकृता येन शिवस्मतास्या ॥१८॥
अलंचकार प्रभवप्रभुस्तत्पट्टश्रियं पुण्ड्र इवेन्दुवक्त्राम् ।
स्तेनोपि सार्थेश इवाङ्गिनो यः श्रेयः श्रियं प्रापयदत्र चित्रम् ॥१६॥
किं वर्ण्यते वर्ण्यगुणस्य चौर्य–चातुर्यमस्य प्रभवस्य भर्तुः ।
अहार्यमप्येष मनोऽभिधानमपाहरद्यत्रिदिवेन्दिरायाः ॥२०॥
शय्यंभवोऽभूषयदस्य पट्टं सिंहासनं पित्र्यमिवावनीन्द्रः ।
कलिन्दिका मौक्तिकमालिकेव यत्कण्ठपीठे विलुठत्यकुण्ठा ॥२१॥
यूपादधस्तः प्रतिमां जिनेन्दो–र्वाचा स वाचंयमपुङ्गवस्य ।
दृक्संज्ञयेव स्वगुरोः किरीटी नाराचगङ्गां प्रकटीचकार ॥२२॥
वगाह्य शास्त्रं मनकाह्वसूनोः कृते कृतश्रीदशकालिकं यः ।
हरिः सुधामुद्धृतवान्सुपर्ववर्गस्य निर्मथ्य यथाम्बुनाथम् ॥२३॥
संपूरयन्कीर्तिनभोनदीभिर्दिशो यशोभद्र गणाधिराजः ।
व्यभूषयत्पट्टममुष्य भूभृदधित्यकां दस्युरिव द्विपानाम् ॥२४॥
एतद्यशःक्षीरधिनीरपूरैः संपूरितायां परितस्त्रिलोक्याम् ।
अबुध्यमानोऽम्बुनिधिं स्वशय्यां पद्मेशयो ऽभूदिव पद्मनाभः ॥२५॥
संभूतिपूर्वो विजयो गुरुस्तत्पट्टं श्रिया पल्लवयांचकार ।
कदम्बजम्बूकुटजावनीजकुंजं नभोम्भोद इवाम्बुवृष्ट्या ॥२६॥
संहर्षरोषात्स्वजिघांसुमेतत्प्रतापमार्तण्डमवेत्यसाक्षात् ।
युयुत्सया हैहयवत्सहस्रं सहस्रभासेव करा ध्रियन्ते ॥२७॥
स तत्सतीर्थ्योऽजनि भद्रबाहुः सूरिः समग्रागमपारदृश्वा ।
दशाश्रुतस्कन्धत उद्दधार वज्राकराद्वज्रमिवात्र कल्पम् ॥२८॥
उपप्लवो मन्त्रमयोपसर्गहरस्तवेनावधि येन संघात् ।
जनुष्मतो जांगुलिकेन जाग्रद्गरस्य वेगः किल जांगुलीभिः ॥२९॥
यत्कीर्तिगंगां प्रसृतां त्रिलोक्यामालोक्य किं षण्मुखतां दधानः ।
जगद्भ्रमीभिर्जननीं दिदृक्षुर्गंगासुतोऽध्यास्त मयूरपृष्ठम् ॥३०॥

श्रीस्थूलभद्रेण निजान्ववायस्रोतस्विनीनायककौस्तुभेन ।
विश्वत्रयी तद्यशसेव शोभामलम्भि तत्पट्टपयोधिपुत्री ॥३१॥
प्रवालमुक्तामणिमञ्जिमश्रीचित्राप्सरःस्वर्द्धिरदाश्वदृश्यम् ।
कोशागृहं प्रावृषि यः सिषेवे हरिर्घनच्छायमिवाम्बुराशिम् ॥३२॥
पण्यांगनायाः किलकिञ्चितानि न लेभिरे यस्य हृदि प्रवेशम् ।
धनुर्भृतः सानुमतः शिलायां पृषत्कपंक्तेः प्रहृतानि यद्वत् ॥३३॥
प्राङ्निर्जितश्रीरथनेमिमुख्यवीरावलीनामिव वैरशुद्धेः ।
विधित्सयाध्यास्य तदाश्रयं यो ध्यानासिनाऽनङ्गनृपं जघान ॥३४॥
चक्रीव रत्नानि चतुर्दशापि पूर्वाणि धत्ते स्म पतिर्यतीनाम् ।
यश्च क्वचिद्देवकुले स्वजामीश्चित्रीयितुं सत्य इवास सिंहः ॥३५॥
येनोपदेशाच्छलतः स्वपाणिसंज्ञाज्ञया स्तम्भतलाददर्शि ।
निधिः स्वनिक्षिप्त इव प्रवासिसुहृद्गृहिण्याः सदने समेत्य ॥३६॥
पट्टेऽथ तस्यार्यमहागिरिश्चापरः क्रमादार्यसुहस्तिसूरिः ।
बभूवतुर्धर्मधुरं दधानौ रथे यथासारथिकस्य रथ्यौ ॥३७॥
मरुद्गृहादार्यसुहस्तिमूर्तिर्भूमौ मरुद्वृक्ष इवोत्ततार ।
कृपार्णवेन द्रमकोऽपि येन त्रिखण्डभूमीप्रभुतामलम्भि ॥३८॥
भूसुभ्रुवो भर्तृतया प्रगल्भभूषाविशेषानिव शातकौम्भान् ।
सपादलक्षानिह संप्रतिर्यो निर्मापयामास महाविहारान् ॥३९॥
यः सम्प्रतिक्षोणिपतिः सपादकोटीर्नु पेटीः स्वयशोनिधीनाम् ।
स्याद्वादिनां सद्मसु शिल्पिसंघैरचीकरत्पारगतीयमूर्तीः ॥४०॥
नक्तं नलिन्यादि(सु)गुल्मनामविमानमार्गः प्रभुणा च येन ।
स्नेहप्रियेणेव महेभ्यसूनोरदर्श्यवन्तीसुकुमालनाम्नः ॥ ४१ ॥

३१—निजः स्वकीयो 'यो' नागरनामा ब्राह्मणवंशः स 'एव' स्रोतस्विनीनायकः नदीपतिः समुद्रः तत्र कौस्तुभेन । इतिव्याख्यायां ।

३५—यक्षा, यक्षदिन्ना, भूता, भूतदिन्ना, सेना, वेना, रेणा । क्वचिद्देणापि-नामद्वंद्वम् । एतन्नाम्नीः स्वजामीः सप्तापि निजभगिनी इति तद्वृत्तौ ॥

स्थाने स्वबप्तुस्त्रिदिवं गतस्य व्यधादवन्तीसुकुमालसूनुः ।
नाम्ना महाकाल इतीह पुण्यपानीयशालामिव सार्वशालाम् ॥४२॥
श्रीमत्सुहस्तिव्रतिवासवस्य श्रीसुस्थितः सुप्रतिबद्धसूरिः ।
पदं विनेयौ नयतः स्वलक्ष्मीं क्रमं मुरारेरिव पुष्पदन्तौ ॥ ४३ ॥
प्रीतिं सृजन्ती पुरुषोत्तमानां दुग्धाम्बुराशेरिव पद्मवासा ।
हृदा जिनं बिभ्रत आविरासीत्तत्सूरियुग्मादिह "कौटिकाख्या" ॥४४॥
श्रीइन्द्रदिन्नव्रतिसार्वभौमस्तत्पट्टलक्ष्मीतिलकं बभूव ।
निशुम्भ्यते दांभिकता स्म येन कलिन्दकन्येव हलायुधेन ॥४५॥
पक्षद्वयं भिन्नतमोभरेण पित्रोः पवित्रीक्रियते स्म येन ।
कुबेरदिग्दक्षिणयोः पदव्योर्द्वन्द्वं प्रियेणेव पयोजिनीनाम् ॥४६॥
श्रीदिन्नसूरिर्गुणभूरिरस्मात्सप्तर्षिभूरंगिरसो यथासीत् ।
येनानुरागोऽवधि कालनेमिः कल्लोलिनी वल्लभशायिनेव ॥४७॥
पञ्चाशुगान्यः समितीर्विधाय बभञ्ज पञ्चाशुगपञ्चबाणीम् ।
शरेण केनापि न चेत्कदाचित्कस्मान्न तं स प्रभवेद्रुपुष्मान् ॥४८॥
सूरीश्वरः सीहगिरिः क्रमेण व्यभासयत्तत्प्रभुपट्टलक्ष्मीम् ।
जिनस्य पादं शिरसा स्पृशन्तीं निकाय्यराजीमिव केतुवारः ॥४९॥
विन्ध्यं निपीताब्धिरिव व्रतीन्द्रो य एधमानं निषिषेध कोपम् ।
यद्वाक्तरङ्गैश्च जिताभ्रसिंधुस्त्रपातिरेकादिव निमग्नगासीत् ॥५०॥
तमोभरोर्वीधरभेदवज्रिवज्रोऽथ वज्रप्रभुरेतदीयम् ।
पट्टं परां प्रापयति स्म भूषां माणिक्यकोटीर इवोत्तमांगम् ॥५१॥
आशैशवादेव जहौ निजाम्बां वेलामिव क्षीरनिधेः सुधांशुः ।
अध्यैष्ट यः पालनके शयानोऽप्येकादशाङ्गीः स्मृतपूर्वजन्मा ॥५२॥
यः पुष्पदः पल्लवलीलयेव वैराग्यलक्ष्म्यालमकारिबाल्ये ।
प्राग्जन्ममित्रात्त्रिदशान्नभोगविद्यां पुनर्वैक्रिलब्धिमापत् ॥५३॥
दुर्भिक्षवर्षेषु सुभिक्षभूमीं संघं कृपानीरनिधेर्निनीषोः ।
बज्रप्रभोर्यस्य पटः पटीयान्विमानवद्व्योमनि दीप्यतेस्म ॥५४॥

सहैव देहेन समग्रसंघं नयत्यसौ सिद्धिपुरीमिवैनम् ।
जनैरिति व्योमनि तर्क्यमाणः पटः प्रभोर्बौद्धपुरीमवाप ॥५५॥
ध्यातुर्वरं श्री श्रुतदेवतेव यस्यादरात्पद्ममदत्त पद्मा ।
वनात्पितुर्मित्रहुताशनस्याग्रहाच्च यो विंशतिलक्षपुष्पान् ॥५६॥
मूर्तैरिव स्वस्य गुणैः प्रफुल्लत्पुष्पोत्करैः पर्युषणाक्षणेषु ।
समुन्नतिं शाम्भवशासनस्य तस्यां सुनन्दातनयस्ततान ॥५७॥
प्राबोधयद्बौद्धपुरीप्रभुं यः समं समग्रैरपि पौरलोकैः ।
साकं शकुन्तैरिव पङ्कजानां कुञ्जं समुद्यद्गगनाध्वनीनः ॥५८॥
अपास्यति स्माढ्यसुतां सरागां यो रुक्मिणीं काञ्चनकोटिभिश्च ।
क्रोडन्मृगेन्द्रां स्मितसल्लकीभिर्निकुञ्जराजीमिव कुञ्जरेन्द्रः ॥५९॥
श्रीवज्रसेनोऽथ तदीयपट्टं व्यभासयत्प्रीणितजन्तुजातः ।
स्फुरन्मदोद्भेद इव द्विपेन्द्रकपोलमानन्दितचञ्चरीकः ॥६०॥
दुर्भिक्षके पायसमेत्य लक्षपकं महेभ्यस्य गृहे प्रभुर्यः ।
दिने द्वितीये कुलदेवतेव न्यवेदयद्भाविसुकालमस्य ॥ ६१ ॥

५६—पर्युषणादिनेषु अष्टान्हिकामहोत्सवं कर्तुमिच्छोः जैनद्विष्टतया बौधनृपतिवारितमालिमण्डलात् पुष्पमात्रमप्यनाप्नुवतः संघस्य कृते कुसुमानयनार्थं प्रस्थितस्य पद्महृदे यातस्य यस्य वज्रस्वामिनः पद्मा लक्ष्मी आदरात् भक्तिभरतः स्तवनवंदनपूर्वकम् पद्मं स्वहृदात् सहस्रपत्रमादाय भगवत्पूजार्थं प्रयान्ती श्रीस्तत्सहस्रदलकमलं पद्मार्थोपगतायास्मै अदत्त दत्तवती ॥ + + (विंशतिलक्षपुष्पाणि) मित्रतिर्यक्जृम्भकदेवविनिर्मितिविमाने स्थापितवानित्यर्थः ॥ इतितद्व्याख्यायाम् ॥

५९—कोडीसए धणसंचियस्स गुणस्स भरियाए कन्नाए । इत्युपदेशमालावचनात् ॥

किंभूताम् ? सरागां स्वसौधसंन्निधिस्थितसाध्वीगीयमानयद्गुणग्रामाऽऽ कर्णनोद्भूतानुरागवशंवदतया 'अस्मिन् भवे मम प्राणनाथो वज्रस्वाम्येव नान्यः' इतिकृतनिश्चयतया सस्नेहां जहौ । इति तद्व्याख्यायाम् ।

६१—यः वज्रसेनः प्रभुर्गणस्वामी दुर्भिक्षके द्वितीयवारं द्वादशहायनजलवाहावृष्टेरुद्भूतदुष्कालसमये श्रीवज्रस्वामिना दक्षिणस्यां दिशि प्रेषितः सन् अस्य महे-

चत्वार एतत्तनया विनेयाः शाखाभृतस्तस्य विभोर्बभूवुः ।
इवामरद्वेषिचमूजयश्रीजुषः सुरेन्द्रद्विरदस्य दन्ताः ॥६२॥
भर्त्रा सुराणामिव लोकपालेष्वेतेषु सौदर्ययतीश्वरेषु ।
श्रीचन्द्रनाम्ना मुनिपुंगवेन तत्पट्टपूर्वा प्रमदेन भेजे ॥६३॥
राजा स्वयं राजनतं सदोषो निर्दोषमङ्कोपगतो निरङ्कम् ।
सान्तो निरन्तं च निजाधिकं यं समीक्ष्य चिह्राय शशी किमत्यौ ॥६४॥
श्रीचन्द्रसूरेरथ चन्द्रगच्छ इति प्रथा प्रादुरभूद्गणस्य ।
भागीरथीनाम भगीरथाख्यमहीमहेन्द्रादिव देवनद्याः ॥६५॥
कल्लोलिकारुण्यरसान्वितस्य सामन्तभद्रप्रभुरस्य पट्टम् ।
व्यराजयद्वारिरुहाकरस्यमध्यं यथोन्निद्रितपुण्डरीकम् ॥६६॥
वैमुख्यभाग्यो विषयात्कुरङ्गद्वेषीव जज्ञे विपिने निवासी ।
तस्मान्मुनीन्द्रोर्वनवासिसंज्ञा परा पुनःप्रादुभून्मुनीनाम् ॥६७॥
कोरण्टके वीरजिनेन्द्रमूर्तिं दृक्पान्थवृत्तिं कृतपुण्यपाकाम् ।
यः प्रत्यतिष्ठत्किमु सत्त्रशालां स वृद्धदेवो ऽजनि तस्य पट्टे ॥६८॥
प्रद्योतनाह्वप्रभुणा ऽप्यमुष्य पट्टं परं वैभवमाबभार ।
त्रैलोक्यलक्ष्मीतिलकायितेन पितुः स्वपुत्रेण यथान्ववायः ॥६९॥
प्रबोधयन्भव्यसरोजराजीः संशोषयन्दुर्नयकर्दमांश्च ।
दोषोदयं निर्दलयन्महस्वी प्रद्योतनो ऽन्यः किमभूद्भुवोऽयम् ॥७०॥
धिया जयंश्चित्रशिखण्डिसूनुं गङ्गातरंगायितवाग्विलासः ।
श्रीमानदेवः पदमेतदीयं सभ्यः सभास्थानमिवाध्युवास ॥७१॥
पदप्रदानावसरे समीक्ष्य साक्षात्तदंसोपरिवाणिपद्मे ।
राज्यादिव क्षोणिपुरंदरस्य भ्रंशोऽस्य भावी नियमस्थितेर्हा ॥७२॥

भ्यस्य द्वितीये आगामिनि दिने वासरे भावि भविष्यत्सुभिक्षं सुकालं न्यवेदयत् कथयामास ॥ + + तस्यैव चतुर्नन्दनस्येभ्यस्य दीक्षाग्रहणवाग्बंधपूर्वकं श्वस्तनदिने याममध्ये पञ्चशतीयुगंधरीधान्यभृतवाहनागमनैर्भाविसुकालमावेदितवान् इत्यर्थः ॥ इति तद्व्याख्यायाम् ॥

इत्थं गुरुं स्वं विमनायमान-मालोक्य लोकेश्वरगीतकीर्तिः ।
तत्याज यः षड्विकृतीर्व्रतीन्द्रः षडान्तरारीनिव जेतुकामः ॥७३॥
चमूभिरुर्वीन्द्रमिवामरीभिरुपास्यमानं यमवेक्ष्य कश्चित् ।
किं स्त्रीयुतोऽसाविति संशयानो नड्डूलकेऽशिक्ष्यत ताभिरेव ॥७४॥
तदीयपट्टाम्बरभानुमाली श्रीमानतुङ्गश्रमणेन्दुरासीत् ।
य औजिढत्साधुजनान्निजाज्ञां नाथान्पृथिव्या इव सार्वभौमः ॥७५॥
भक्तामराह्वस्तवनेन सूरिर्बभञ्ज योऽङ्गान्निगडानशेषान् ।
प्रवर्तितामन्दमदोदयेन गम्भीरवेदीव करी धरेन्दोः ॥७६॥
श्रीमानतुङ्गः करणेन भक्तामरस्तुतेस्तं क्षितिशीतकान्तिम् ।
चकार नम्रं फलपुष्पपत्रभारेण यद्वत्फलदं वसन्तः ॥७७॥

७४—चमूभिर्गजवाजिरथपत्तिलक्षणाभिश्चतुरङ्गिणीभिः सेनाभिः उर्वीन्द्रं क्षोणीशक्रमिव । पद्मा–जया–विजया–अपराजिताभिधाभिश्चतसृभिर्देवीभिः प्रत्यक्षमुपास्यमानं सेव्यमानं नड्डूलयनगरोपाश्रयापवरके यं मानदेवसूरिमवेक्ष्य दृष्ट्वा असौ आचार्यः किं स्त्रीयुतो वनिताकलितोऽस्तीति संशयानः संदेहं कुर्वाणः । कश्चित् स्वयं संतिष्ठासुतया दुष्टयवनप्रकरैः प्रगुणतन्निकृष्टनिर्जरनिर्मितजनमायुपप्लवोपद्रुतेन तक्षशिलानगरीसंघेन कृतकायोत्सर्गप्रभावादागत(या) नड्डूलपुरस्थितश्रीमानदेवसूरयो यद्यत्रायान्ति तदा शान्तिर्भवेत्, परमत्र म्लेच्छा आगत्य स्थास्यन्ति, ततः संघेन त्रिवर्षीमध्येऽन्यत्र कुत्रापि गत्वा स्थातव्यमिति जिनशासनदेव्या गिरा श्रीमानदेवसूरीन्द्राकारणार्थं तत्समय एव स्वजनमरकोपद्रवप्रशमनोत्सुकीभूततत्संघेन प्रेषितः । अज्ञातसूरिस्वरूपः कोऽपि श्राद्धः । ताभिर्विजयाप्रमुखसूरीभिरेवाशिक्षि । शिक्षां ताडयित्वा कुट्टयित्वा दृढबन्धनबद्धः पूत्कुर्वाणः कृपापारावारश्रीगुरुवाचैव मुक्तः । यत्रैवंविधाः शंकाभाजः श्राद्धास्तत्र सर्वथापि श्रीपूज्यपादैर्न गन्तव्यमिति विजयादेवतया निषिद्धाः सन्तः श्रीगुरुवस्तत्संघे शान्त्यर्थं 'शान्तिं शान्तिनिशान्तम्' इति विजयादेवीमन्त्रमयलघुशान्तिं विधाय तच्छ्राद्धेन सार्धं प्रेषयित्वा तत्र मरकोपद्रवं निवारितवानिति शेषः ॥ इति श्रीमानदेवसूरिः ॥ इति तद्वृत्तिः ॥

भयादिमेनाथ हरस्तवेन यो दुष्टदेवादिकृतोपसर्गान् ।
श्रीभद्रबाहुः स्वकृतोपसर्गहरस्तवेनेव जहार संघात् ॥ ७८ ॥
सद्ध्याननागेश्वररश्मिसाम्यमन्थाद्रिणालोड्य मदाम्बुराशिम् ।
तत्पट्टलक्ष्मीरथ वीरनाम्नाचार्येण वव्रे वनमालिनेव ॥ ७६ ॥
ततोऽजनि श्रीजयदेवसूरिदूरीकृताशेषकुवादिवृन्दः ।
यद्वाग्विलासैरवहेलितश्रीः सुधा किमु क्षीरनिधौ ममज्ज ॥ ८० ॥
स्वः कामिनीकीर्तितकीर्तिदेवानन्दश्चिदानन्दमना मुनीन्द्रः ।
तारुण्यमेणाङ्कमुखीमिवैतत्पट्टश्रियं वैभवमानिनाय ॥ ८१ ॥
श्रीविक्रमः सूरिपुरन्दरोऽभूत्तत्पट्टदुग्धाब्धिसुधामरीचिः ।
तमश्चमूं हन्तुमनाः समग्रां किं विक्रमोऽङ्गीकृतकाययष्टिः ॥८२॥
आसीत्ततः श्रीनरसिंहसूरिः स वाङ्मयाम्भोनिधिपारदृश्वा ।
अत्याजि यक्षः किल येन मांसं स्वापं जगद्वारिजबन्धुनेव ॥८३॥
महर्घ्यमाणिक्यमिवांगुलीयं षोमाणभूपालकुलप्रदीपः ।
पट्टश्रियं श्रीनरसिंहसूरेरलंकरोति स्म समूद्रसूरिः ॥ ८४ ॥
दिग्वाससो येन विजित्य वादे नागह्रदे नागनमस्यतीर्थम् ।
स्ववश्यमानीयत भूमिभर्त्रा दुर्गः प्रतीपानिव संपराये ॥८५॥
स मानदेवोऽजनि तस्य पट्टे वाग्देवता यन्मुखपद्मसद्म ।
तृप्तामृतैश्चारुवचोविलासच्छलादिवोद्गारमिवातनोति ॥ ८६ ॥
पदेतदीये विबुधप्रभेण स्म भूयते सूरिपुरंदरेण ।
येनाभिभूतः किल पुष्पधन्वा पुनर्युयुत्सुर्विषमायुधोऽभूत् ॥ ८७ ॥
तत्पट्टपंकेरुहमानसौकाः श्रीमाञ्जयानन्दविभुर्बभूव ।
यस्याशये ऽमात्समयो ऽप्यशेषः कुम्भोद्भवस्य प्रसृताविवाब्धिः ॥८८॥
यदाननं चन्द्रति दन्तकान्तिर्ज्योत्स्नायते भ्रू युगमङ्कतीह ।
वाचां विलासोऽपि सुधायते तत्पदे मुनीन्द्रः स रविप्रभोऽभूत् ॥८६॥
वर्धिष्णुयत्कीर्तिसुधार्णवेन व्यलुम्पि नामाप्यसितादिभावैः ।
अर्हन्महिम्नेव जगत्यजन्यैः सोऽभूद्यशोदेवविभुः पदेऽस्य ॥६०॥

प्रद्युम्नदेवोऽथ पदे तदीये प्रद्युम्नदेवो ऽभिनवो बभूव ।
भिन्दन्भवं मुक्तरतिर्द्वितीयो भवन्मधुर्विश्वविभाव्यमूर्तिः ॥९१॥
श्रीमानदेवेन पुनः स्वकीर्तिज्योत्स्नावदातीकृतविष्टपेन ।
एतत्पदश्रीरगमि प्रतिष्ठां शक्तित्रयेणेव नरेन्द्रलक्ष्मीः ॥ ९२ ॥
वाचंयमेन्द्राद्विमलादिचन्द्रात्पदाब्जभृङ्गीभवदिन्द्रचन्द्रात् ।
अमुष्य पट्टः श्रियमश्नुते स्म परंतपाद्भूप इव प्रतापात् ॥९३॥
रेजे ऽस्य पट्टे स्मररूपधेयः सुरीन्दुरुद्द्योतननामधेयः ।
दिग्वारणेन्द्रा इव सूरिचन्द्राः संजज्ञिरे यत्पदधारिणोऽष्टौ ॥९४॥
मुहूर्तमद्वैतमवेत्य टेलीग्रामस्य यः सीम्नि बृहद्वटाधः ।
अस्थापयच्चैत्यतरोस्तलेऽष्टौ पार्श्वो गणेन्द्रानिव काशिकुंजे ॥९५॥
शाखाप्रशाखाभिरमुष्य वृद्धिर्बृहद्वटस्यैव यतो भवित्री ।
ततो बृहद्गच्छ इतीह नामाऽपरं गणस्य प्रकटीबभूव ॥९६॥
माहात्म्यनम्रीकृतसर्वदेवः पदे तदीये ऽजनि सर्वदेवः ।
तारापतिस्तारकपर्षदेव गुणश्रिया यः प्रभुरन्वयायि ॥९७॥
यो रामसेनाह्वपुरे व्रतीन्दुर्लब्धिश्रियं गौतमवद्दधानः ।
नाभेयचैत्ये महसेनसूनोर्जिनस्य मूर्तेर्विदधे प्रतिष्ठाम् ॥९८॥
चंद्रावतीशस्य नृपस्य नेत्र इवास योऽशेषविशेषदर्शी ।
तं क्लृप्तचैत्यं प्रतिबोध्य वाचा प्राव्राजयत्कुंकुणमंत्रिणं यः ॥९९॥
कुर्वन्निवासं गवि गौरवश्रीर्गिरामधीशो विबुधैरुपास्यः ।
श्रीदेवसूरिः किमु देवसूरिः पदे तदीयेऽप्यजनि क्रमेण ॥१००॥
दोषोदयोदीततमःप्रपञ्च–व्यापादनव्यापृतिदीक्षितेन ।
श्रीसर्वदेवेन पदं तदीयमदीपि दीपेन यथा निकेतम् ॥१०१॥
श्रीमद्यशोभद्रगणावनीन्द्रः श्रीनेमिचन्द्रव्रतिपुङ्गवश्च ।
तत्पट्टमाकन्दमुभौ भजेते शुकोऽन्यपुष्टश्च यथा विहंगौ ॥१०२॥
तयोः पदे श्रीमुनिचन्द्रसूरिरभूत्ततो निर्मितनैकशास्त्रः ।
शास्त्रे न कुत्रापि तदीयबुद्धिश्चस्खाल वीङ्खेव समीरणस्य ॥१०३॥

भूपीडखण्डानिव चक्रवर्ती यतीभवन्षड्विकृतीर्जहौ यः ।
कदापि काये न दधन्ममत्वं पपौ पुनर्यः सकृदारनालम् ॥१०४॥
निर्जीयते स्म क्वचनापि नायं कृतोपसर्गैरपि देववर्गैः ।
इतीव नाम्ना भुवि विश्रुतेन जज्ञेऽस्य पट्टेऽजितदेवसूरिः ॥१०५॥
जगत्पुनानः सुमनःस्रवन्तीरयो जटाजूटमिवेन्दुमौलेः ।
अमुष्य पट्टं विजयादिसिंहोऽध्यासांबभूवाथ तपस्विसिंहः ॥१०६॥
सोमप्रभश्रीमणिरत्नसूरी अमुष्य पट्टं नयतःस्म लक्ष्मीम् ।
इक्ष्वाकुवंशं भरतश्च बाहुबलिस्तनूजाविव नाभिसूनोः ॥१०७॥
श्रीमज्जगच्चन्द्र इदंपदश्रीललामलीलायितमाततान ।
येनोज्झि शैथिल्यपथस्तटाको घनाविलो मानसवासिनेव ॥१०८॥
द्वात्रिंशदाशावसनैरभेद्यो वादं सृजन्हीरकवद्यदासीत् ।
आघाटभूपेन स हीरलाद्यो नाम्ना जगच्चन्द्र इति न्यगादि ॥१०९॥
आचाम्लकैर्द्वादशहायनान्ते तपेत्यवापद्बिरुदं मुनीन्दुः ।
महाहवैर्वैरिविनिर्जयान्ते भर्तेव भूमेर्जितकाशिसंज्ञाम् ॥११०॥
अस्मात्ततः प्रादुरभूत्तपाख्या नेत्रादिवात्रेर्द्विजराजलेखा ।
अदीपि यस्माच्च मुमुक्षुलक्ष्म्या वसन्तमासादिव भानुभासा ॥१११॥
देवेन्द्रकर्णाभरणीभवद्भिर्यशोभिरुद्भासितविष्टपेन ।

१०९—यद्यस्मात्कारणाद्यः श्रीजगच्चन्द्रसूरिः द्वात्रिंशत्संख्याकैराशावसनैर्दिगम्बराचार्यैर्वादिभिः सार्धं वादं सृजन् कुर्वन् हीरकवद्वज्रमणिरिव अभेद्यो भेत्तुमशक्यः अजेय आसीत् तत्कारणादाघाटनामनगरस्य भूपेन राज्ञा संप्रति लोके आहडनगरमिति प्रसिद्धपुरस्य स्वामिना स सूरिः इदमेतन्न्यगादि प्रोक्तः । इदं किम् । यदयं सूरीन्द्रो नाम्ना हीरला इतिपदमाद्यं यत्र तादृशो जगच्चन्द्र एतावता हीरलाजगच्चन्द्रसूरिरिति कथितः । इति तद्वृत्तिः ॥

१११—ततस्तपा इति नामकथनान्तरं तद्दिनमारभ्य च अस्माज्जगच्चन्द्रसूरेर्बृहद्गच्छस्य तपागच्छ इत्याख्या नाम प्रादुरासीत् प्रकटीबभूव ॥ + + इतिबृहद्गच्छस्य 'तपागच्छ' इति षष्ठं नाम संजातम् ॥ इति व्याख्यायां ॥

देवेन्द्रदेवेन बभेऽस्य पट्टे विष्णोर्यथा वक्षसि कौस्तुभेन ॥११२॥
निजाङ्गनोद्गीतयदीयकीर्तिं शुश्रूषुरक्षिश्रवसामृभुक्षाः ।
चक्षुःसहस्रे रसिकः किमाधात्पट्टे स तस्याजनि धर्मघोषः ॥११३॥
मिथ्यामतोत्सर्पणबद्धकक्षं प्रेक्ष्य क्षितौ जीर्णकपर्दिनं यः ।
प्रबोध्य वाचा जिनराजबिम्बाधिष्ठायकं पूर्वमिव व्यधत्त ॥११४॥
शिष्यार्थनानिर्मितसंस्तवस्याऽनुभावतो देवकपत्तनेऽब्धिः ।
भूपस्य शुश्रूषुरिवास्य रत्नं तरङ्गहस्तैरुपदीचकार ॥११५॥
विद्यापुरे योऽखिलशाकिनीनामुपद्रवं द्रावयति स्म सूरिः ।
श्रीहेमचन्द्रो भृगुकच्छसंज्ञे पुरे यथा दुर्धरयोगिनीनाम् ॥११६॥
यो योगिनं पुष्पकरण्डिनीस्थं दुश्चेष्टितैर्भापनबद्धकक्षम् ।
पादावनम्रं विदधे ऽन्तिमोऽर्हन्निवास्थिकग्रामिकशूलपाणिम् ॥११७॥

११६—यः श्रीधर्मघोषसूरिः प्राक् साधुजनसंतापकारिकाणां स्वागमने पट्टकादिमण्डनं मांसलोहकटकीभूतपायसवटकविहारणं च गुरुशयनपट्टिकोत्पाटनचत्वरानयनमित्याद्युपद्रवविधायकानां श्राविकानामधारिकाणामखिलानां सर्वासां शाकिनीनां सिद्धसीकोत्तरिकाणामुपसर्गमुपद्रवं द्रावयति स्म । चत्वरे गमनान्तरं गुरुभिरुत्थायाऽभिमन्त्रितचतुःसूचीनां पट्टिकाचतुःपादोपरिक्षेपणेन स्तम्भितानां विभातप्रायविभावर्यां विवसनानां तासां बहुविलपनाननाङ्गुलीक्षेपणनृपतिमृतिभीतिनिवेदनब्रह्मादिसप्तवाग्बन्धप्रदाननगरजनविज्ञप्त्यवधारणालयान्तःपट्टिकानयनपूर्वकं निवारितान् साधुजनान् निरुपद्रवांश्चक्रे । इति तद्वृत्तौ ॥

११७—यः श्रीधर्मघोषसूरिः पुष्पकरण्डिन्यामुज्जयिन्याम् । 'उज्जयिनी स्याद्विशालावन्तीपुष्पकरण्डिनी' इति हैम्याम् । तिष्ठतीतिपुष्पकरण्डिनीस्थस्तं कमपि सिद्धचेटकपेटकमत एव दुष्टचेष्टितैर्भयंकरप्रकारैः साधूनां भापने भयोत्पादने बद्धकक्षं सज्जीभूतं कोऽपि साधुस्तं प्रतिकर्तुं न शक्नोति अतएव तद्भयकरणप्रकारमाह—प्राक् साधुविहारनिषेधकं, गुर्वागमने च गोचरीगतसाधूनां प्रश्ने स्थास्यथ । गुरुशिक्षितैस्तैरुक्तम् । स्थिताः स्म । ततो महत्कुद्दालतुल्यदन्तानदर्शयद्योगी । साधवः कपोणिक

यस्योपदेशान्नृपमन्त्रिपृथ्वीधरश्चतुर्भिः सहितामशीतिम् ।
ज्ञातीरिवोद्धर्तुमिदंमिताः स्वा व्यधापयत्तीर्थकृतां विहारान् ॥११८॥
दंशाद्हेर्माहितकाष्ठभारविषौषधीसज्जतनुर्निशान्ते ।
महात्मवद्यो विकृतीर्विहाय वृत्तिं व्यधादेव युगंधरीभिः ॥११६॥
यस्माद्दिदीपे चरणस्य लक्ष्मीर्ज्योत्स्नेव चान्द्री शरदोऽनुषङ्गात् ।
सोमप्रभाख्यो जनदृक्चकोरीसोमप्रभः सूरिरभूत्पदेऽस्य ॥१२०॥
तेनापि सोमतिलकाभिधसूरिरात्म-पट्टे न्यवेशि वशिलब्धिमलसल्ललामम् ।
वादेषु येन परवादिकदम्बकस्या-ऽनध्यायता प्रतिपदेव मुखे न्यवासि ॥१२१॥
संस्थापितो निजपदे गुरुणाथ तेन श्री देवसुन्दरगुरुः सुरसुन्दरश्रीः ।
अह्नोमुखेन तिमिरेण तमस्विनीव येन व्यपास्यत समं मदनेन माया ॥१२२॥
घूकैरर्कमिव द्विषद्भिरुदये हन्तुं परैः प्रेषितं ।
कंचिच्चन्द्ररुचा प्रमादविमुखं स्वापे ऽपि दृष्टा प्रभुम् ।

दर्शयित्वा गुरुपार्श्वे गताः । तत उपाश्रयेऽपि अतिभयंकरप्रचुरोन्दरबिडालकुक्कुर-शृगालश्वापदवृश्चिकभुजगादिदर्शनादिना गुरूनपिभापनोद्यतं प्रभुणा च जैनमन्त्रस्मरणानुभावेन पुरजननृपतच्छिष्यसमक्षं मंत्राधिष्ठायकेन बध्ध्वा पुरप्रासादशिखरसंघट्टना-स्फालनपूर्वकं घनघृष्यमाणप्रवहच्छोणितशरीरं शिष्या अहं म्रिये म्रिये कोऽपि मामवत्विति पुनः पुनर्दीनभाषिणं वेदनया पूत्कुर्वाणं गगनेनोपाश्रये नीतं योगिनं पदावनम्रं स्वचरणयोर्नमनशीलं विदधे कृतवान् । कः इव । अर्हन्निव यथा अन्तिमश्चरमश्चतुर्विंशतितमोऽर्हन् जिनः श्रीमन्महावीरदेवः अस्थिकग्रामस्थायुकशूलपाणिनामानं यक्षं स्वचरणसेवापरायणं चक्रे । सोऽपि किंभूतः । दुष्टैर्जीवप्रणाशनकरैश्चेष्टितैरुपसर्गैर्भगवतो भापनोद्यतम् । इति तद्वृत्तिः ॥

११८—तथा तस्योपदेशाच्च श्रीशत्रुंजयगिरिनारिसंघपतीभवन् रैवतगिरौ च इदमस्माकं तीर्थमिदमस्माकं तीर्थमिति मिथो दिगम्बरैः सह विवादे 'य इन्द्रमालां परिधत्ते तस्येदं तीर्थम्' इति संवृद्धैः प्रोक्ते सुवर्णलिब्धयाम्नायेन स्वकुलसुवर्णषट्पञ्चाशद्धटीभिः इन्द्रमालां परिहितवान्, तथा शत्रुंजयोज्जयन्तमूलप्रासादशिखरदण्डयोरेकसौवर्णध्वजाधिरोपणादिना चाष्टौ घटीर्व्ययितवांश्चेति शेषः । तद्वृत्तौ

क्षाम्यन्तं गदिताखिलव्यक्तिकरं संबोध्य योऽदीक्षय—
त्स श्रीमानथ सोमसुन्दरगुरुर्भेजे तदीयं पदं ॥१२३॥
पट्टश्रियास्य मुनिसुन्दरसूरिशक्रे संप्राप्तया कुवलयप्रतिबोधदक्षे ।
कान्तेव पद्मसुहृदः शरदिन्दुबिम्बे प्रीतिः परा व्यरचिलोचनयोर्जनानाम्॥१२४॥
योगिनीजनितमार्युपप्लवं येन शांतिकरसंस्तवादिह ।
वर्षणादिव तपतुंतप्तयो नीरवाहनिवहेन जघ्निरे ॥१२५॥
बाल्येऽपि रश्मीन्सरसीजबन्धुरिवावधानानि वहन्सहस्रम् ।
अष्टोत्तरं वर्तुलिकानिनादशतं स्म वेवेक्ति धियां निधिर्यः ॥१२६॥
अलम्भि याम्यां दिशि येन काली सरस्वतीदं बिरुदं बुधेभ्यः ।
रवेरुदीच्यामिव तत्र तेजोऽतिरिच्यते यत्पुनरत्र चित्रम् ॥१२७॥
सूरेस्ततोऽजायत रत्नशेखरः श्रीपुण्डरीको वृषभध्वजादिव ।
वार्म्बीति नाम्ना द्विजपुङ्गवेन न्यगादि यो बालसरस्वतीति ॥१२८॥
लक्ष्मीसागरसूरिशीतमहसा लक्ष्मीरवापे ततो
दीपेनेव गुणोदयं कलयता ज्योतिर्बृहद्भानुतः ।
गायन्तीः सुरसुन्दरीगुणगणान्यस्याष्टदिक्सङ्गिनी—
र्विज्ञायाष्ट विनिर्ममे किमु विधिः श्रोतुं श्रुतीरात्मनः ॥१२९॥
सुमति साधुरभूदथ तत्पदे त्रिजगतीजननेत्रसुधाञ्जनम् ।
समकुचत्त्रपया हृदि यद्गिरां मधुरिमाधरिता किमु गोस्तनी ॥१३०॥

१२६—यो मुनिसुन्दरसूरिर्बाल्येऽपि शैशवे क्षुल्लकत्वेऽपि अष्टाभिरधिकं वर्तुलिकानां कचोलिकानां 'वाटका कचोली' इति प्रसिद्धानां निनादानां शब्दानां शतं क्वचित्सहस्रमपि वेवेक्ति पृथक् पृथक् कृत्वा कथयति स्म । पत्तनसमागतैरभुक्तदेशोपेतपण्डितद्विजं पत्रावलम्बनं विधाय प्रतिपत्तनपण्डितस्थानं जलभृतकुण्डलकं तृणपुलकं च स्वशिष्यैर्मोचयन्तं तच्छिष्यनिर्वासनपूर्वकं मुनिसुन्दरशिशुना राजसभायां स्वेन सार्धं समागतचतुरशीतिपौषधशालासत्काचार्यैर्वादेजायमाने षण्मास्यन्ते राजकथकनपूर्वं स्वादृष्टाष्टोत्तरशतवर्तुलिकानां पृथक पृथक् शब्दान् कथयित्वा तं विजिग्ये । इति तद्वृत्तौ ॥

शीलेन जम्बुगणनाथ इवात्र वज्र-स्वामी परः किमथ वा महिमोदयेन ।
जज्ञे नवद्वयशत१८००प्रतिसेव्यमानो नाम्नाथ हेमविमलः प्रभुरस्य पट्टे ॥१३१॥

विभूषामद्वैतामकलयदथाऽऽनन्दविमले
प्रतीन्द्रे विद्राणाखिलकुदृशि, तत्पट्टकमला ।
वसन्ते वासन्तीततिरिव पुनर्धर्मजयिनि
क्षितीन्द्रे राज्यश्रीरिव विजितविश्वप्रतिभटे ॥१३२॥
त्यक्त्वाशेषकुपक्षिकांश्च कुदृशः किंपाकभूमीरुहा—
न्रोलम्बैरिव पारिजातशिखरी यो जन्मिभिः शिश्रिये ।
येनात्मा शिथिलीभवन्मुनिपथादप्युद्धृतः सूरिणा
संसाराम्बुनिधेरिवोद्धतकुदृग्यादोव्रजव्याकुलात् ॥१३३॥
शुद्धां क्रियामुद्धरतोऽस्य भाविनीमद्भुतप्रवृद्धिस्तमितीव शंसितुम् ।
स्वप्ने नुयुक्तेरनु कस्यचिज्जिनध्यातुर्द्वितीयेन्दुरदर्शयन्निजम् ॥१३४॥
जैनार्चाश्रमणाद्यभावभणनाम्भःप्लाव्यमानात्मनां ।
जज्ञे द्वीप इव प्रतीशितुरिहोद्धारः कियाया नृणाम् ॥
विद्यासागरनामवाचकवरो यस्याथ दुर्दंगणा—
न्सेनानीरिव चक्रिणो रिपुनृपान्प्राक्स्वस्यवश्यान्व्यधात् ॥१३५॥

१३४—तथा-क्रियोद्धारविधित्सुना सूरीन्द्रेण कश्चित्सिद्धश्रीपार्श्वनाथमन्त्रः श्राद्धः प्रथमं पृष्टस्तेन च ध्यानं विदधता किंचिन्निद्रामुद्रितनेत्रेणाभ्युदयमानं द्वितीयाचन्द्रं दृष्ट्वा समेत्य प्रभुपुरः प्रोचे । यद्युयं द्वितीयाचन्द्र इव दिने दिने वर्धमानाभ्युदयभाजो भविष्यथ, तत्त्वरितमेव क्रियोद्धारं कुरुत, विलम्बो नैव विधेयः । ततः श्रीआनन्दविमलसूरिणा श्रीहेमविमलसूरिशासनपूर्वं शुद्धक्रिया उद्धृता इति वादः । इति तद्व्याख्यायां ॥

१३५—जैनार्चानां तीर्थंकृत्संबन्धिनीनां प्रतिमानां, तथा श्रमणानां साधूनामभावमसत्तां, सिद्धांते क्वापि प्रतिमा प्रोक्ता नास्ति गुर्जरादिदेशेषु साधवः सर्वथा न सन्तीति भणनं लुम्पाककटुकमतीनां कथनम् ॥ इति तद्वृत्तौ ॥

प्रातः साधुवृतस्त्वदापणपुरो यो याति सूरीशिता
सम्यक्संयमवान्स पूर्वगणिवत्सेव्यस्त्वयाहर्निशम् ।
स्वप्ने ऽस्वप्नगिरेति यं निजगृहे नीत्वातिभक्त्या प्रभुं
श्राद्धः कश्चन मण्डपाद्रिवसतिर्भेजे सगोत्रैः समम् ॥१३६॥
तमःस्तोमप्राये कुनयनगणैर्दारुणतमे
कलौ श्रीसूरीन्दुः शरणमभवो जनिमताम् ।
मृगारातिव्यालद्विरदशबरव्यूहबहुले
गिरेर्दुःसंचारे गहन इव सार्थः पथिजुषाम् ॥१३७॥
गभीरिम्णा पाथोनिधिरिव महिम्नापरमरुद्—
गिरिश्चेतोजन्मप्रतिभटतया वा गगनजित् ।
प्रसारै रश्मीनां सरसिरुहिणीनामिव पतिः
पवित्रीचक्रे यो विहृतिभिरशेषा अपि दिशः ॥१३८॥
यो दक्षिणावर्त इव स्रवन्तीपतिसवे कम्बुकदम्बकेन ।
वाचंयमानां निवहेन पृथ्वीपीठे परीतो विजहार सूरिः ॥१३९॥
भागीरथीव यद्ब्राह्मी पुनीते भुवनत्रयम् ।
परं विशेषः कोऽप्यस्या निम्नगा न कदाचन ॥१४०॥
ये कर्णाभरणीबभूवुरनिशं विश्वत्रयीजन्मिनां ।
सान्द्रोन्निद्रितचंद्रिका इव शुचीचक्रुस्त्रिलोकीमपि ।
यान्संस्तोतुमिवाभवद्भुजगराट् जिह्वासहद्वय—
स्तेषां सूरिपुरंदरः स समभूदेको गुणानां निधिः ॥१४१॥

१३६—हे वत्स, त्वं तु दुर्वादिव्रातविविधविरुद्धालपनाकर्णनाकलितानेककल्पनाजनितसंशीतिव्याकुलीकृतनैकलोककलियुगानुभावात्कटुमतिरसि । तथापि प्रातः प्रभाते यामानन्तरमष्टभिः साधुभिः श्रमणैः परिकलितः यः सूरीशिता सुरीन्द्रः त्वदापणस्य तव हट्टस्य पुरोऽग्रे याति गच्छति, स सूरिरस्मिन् कलियुगे सम्यक् संयमवान् । विशुद्धचारित्रकलितः तथा भवताहर्निशं निरन्तरं पूर्वगणिवत् प्राचीनाचार्य इव सेव्य उपासनीयः । इति तद्वृत्तौ ॥

अश्रोत्रैः श्रोतुकामैर्भुजगपरिवृढैर्यज्जगद्‌गीतकीर्तिं
शब्दाधिष्ठानसृष्ट्यै शतदलनिलयो याचितस्तां चिकीर्षुः ।
न्याय्या नासौ मयातिक्रमितुमिह जगत्सर्गभङ्गीव्यवस्था
शक्तिं शब्दं ग्रहीतुं किमिति स कृतवानेव तद्दृष्टिसर्गे ॥१४२॥
भूरेषा किमु चंद्रचन्दनरसैरालिप्यते सर्वतो
दुग्धाब्धिप्रसरत्तरङ्गितपयःपूरैरिवाप्लाव्यते ।
क्षोदैर्मौक्तिकजैर्विलीनतुहिनैः कुन्दैरुतापूर्यते
यत्कीर्तिं प्रसृतां विभाव्य विबुधैरित्यन्तरारेक्यते ॥१४३॥
विजयदानमुमुक्षुपुरन्दरः पदममुष्य ततः समभूषयत् ।
उदयभूमिभृतः शिखरं शरद्विशददीप्तिरिवाम्बरकेतनः ॥१४४॥
आज्ञां यस्य विधाय मूर्धनि मुदा शीर्षामिवाप्तप्रभोः
सौराष्ट्रेषु जगर्षिनामविबुधाधीशा विहारैर्निजैः ।
लुम्पाकान्परिवर्तमारुत इव प्रोन्मूल्य मूलाद्द्रुमा—
न्सम्यक्त्वाख्यकृषिं सुखं कुलवतीं चक्रे नभोम्भोदवत् ॥१४५॥
प्राबोधयद्‌दुष्करनैकतीव्रतपोभिराप्तोक्तिकृतोक्तियुक्तिभिः ।
स तत्र लुम्पाकजनं यतीन्द्रो भास्वानिवाऽम्भोजवनं मरीचिभिः॥१४६
यद्वाचा गलराजमंत्रिमुकुटो निर्माप्य षाण्मासिकीं
मुक्तिं सिद्धगिरौ व्यधाद्भरतवद्यात्रां समं यात्रिकैः ।
पञ्चाचीं दमितुं च पञ्चविकृतीस्तत्याज यः सर्वदा
प्राणश्यंस्तरणेर्ग्रहा इव पुनर्यस्योदये दुर्दृशः ॥१४७॥

१४७—यस्य श्रीविजयदानसूरेर्वाचा अर्थादुपदेशेन कृत्वा गलराज इति नामा मंत्रिषु प्रधानेषु मुकुटः कोटीरः गलराजः । अथवा गलो महतो इति लोके प्रसिद्धः । स षट्सु मासेषु भवा षाण्मासीकी । षण्मासान् यावदित्यर्थः । मुक्तिं 'मुगतउ' इति प्रसिद्धां "केनापि कस्यापि पार्श्वं शुल्कदधीणं न मार्गणीयम् अहमेव श्रीमदुक्तं यथेप्सितं द्रव्यं दास्यामि" इत्यधिपत्य प्रोक्त्वा या यात्रिकाणां यात्रा कार्यते सा मुक्तिरिति । तां निर्माप्य कारयित्वा सिद्धगिरौ श्रीशत्रुंजये भरतवत् ऋषभदेवनंदन-

रत्नानामिव रोहणोऽम्बुरुहिणीप्रेयानिव ज्योतिषां
विंध्याद्रिः करिणामिवामरगिरिः स्वर्भूरुहाणामिव ।
लब्धीनां वसुभूतिनन्दन इवाम्भोधिः सुधानामिव
श्रीमत्सूरिशतक्रतुर्भुवि चिरं जीयाद् गुणानां गृहम् ॥१४८॥

यं प्रासूत शिवाह्वसाधुमघवा सौभाग्यदेवी पुनः
पुत्रं कोविदसिंहसीहविमलान्तेवासिनामग्रिमम् ।
तद्ब्राह्मीक्रमसेविदेवविमलव्यावर्णिते हीरसु—
क्सौभाग्याभिधहीरसूरिचरिते सर्गश्चतुर्थो ऽभवत् ॥१४९॥

इतिश्रीसीहविमलगणिशिष्य—पण्डितदेवविमलगणिविरचते हीरसौ-ग्यनाम्नि महाकाव्ये श्रीमन्महावीरदेवपट्टपरम्परावर्णनो नाम चतुर्थः सर्गः +

प्रथमचक्रवर्तिसंघपतेरार्षभिरिव यात्रिकैर्यात्रां कर्तु मागतैः संघजनैः समं सार्धं यात्रां-व्यधाच्चकार ॥ इति तद्व्याख्यायाम् ॥

+ पं० श्रीपतिः । तस्याष्टौ शिष्याः । तेषु धुर्यो बालब्रह्मचारी कविः षड्विकृतित्यागी यावज्जीवमाषष्ठतपोविधायी तपस्वी देवसान्निध्यः श्रीविजयदानसूरी-शाज्ञया सौराष्ट्रे विहारेण लुम्पाकमतोच्छेदकः योधपुरे यद्विवादभयेन नृपमालदेव-पृष्ठाश्रितवाचकपार्श्वचंद्रः एकादशांगीधरः श्रीजगर्षिगणिः॥ तच्छिष्यो गौतमवादिविजेता नारायणदुर्गादिनृपप्रतिबोधकः कायस्थमण्डलिकचन्द्रभाणस्थानसिंहादिश्रावककारकः बहुप्रतिष्ठा विधायकः आदिदेवसमवसरणप्रकरविधाता पं० श्री सीहविमलो गणिः । तच्छिष्यः पं० देवविमलो येन विक्रमाब्दात् १६३९ तः प्रारभ्य १६७१ अवधिवर्षेषु स्वोपज्ञं श्रीहीरसोभाग्यकाव्यं विदधे, यत् उ०कल्याणविजयशिष्यधनविजयेन समशोधि ॥ इति श्रीहीरसौभाग्यप्रशस्तौ ॥

अनुपूर्तिः १—

सूरीन्द्रहीरविजयः प्रतिपद्य पट्ट—लक्ष्मीं गुरोरनु विशिष्य पुपोष भूषाम् ॥
वप्तुर्जिनस्य युवराज इवाधिपत्यं क्रान्तारिचक्रमखिलाऽम्बुधिमेखलायाः ॥
मण्डयत्यमरमन्दिरं गुरौ, दीप्यते स्म मुनिवासवो ऽधिकम् ॥
यामिनीप्रियतमे पराम्बुधेर्मध्यभागमिव पद्मिनीपतिः ॥२॥
श्रीहीरसौभाग्यकाव्ये सर्ग—६, श्लोकौ-१८७—१८८ ।

अनुपूर्तिः २—

अथसाहिः (अकब्बरं) मनसा श्रीगुरूनेवं प्रशशंस
प्रावीण्यमन्यहितकर्मणि पश्यतैषां, तथ्यं यतो व्यवसितिर्महतां परार्था ॥
विश्वं शशीव धवलत्यखिलं कलाभिरंभोभरैर्जलधरोऽपि धरां धिनोति ॥१॥
मुर्ध्ना दधाति वसुधां भुजगाधिराजो, नैःस्थ्यं निहन्ति मणिरध्वरभागभाजाम् ॥
आमोदयन्ति हरितो हरिचन्दनानि, भिन्दन्ति संतमसमंबरकेतवो ऽपि ॥२॥
साला दिशन्ति च फलानि पचेलिमानि, वार्धेर्वशा अपि वहंति पयःप्रवाहान् ।
विश्वोपकारकरणैकनिबद्धकक्षै-रेभिर्बभूव वसुधा किमु रत्नगर्भा ? ॥३॥
श्रीहीरसौभाग्यकाव्ये सर्ग-१४, श्लोकाः १८३,१८४,१८५ ।

अनुपूर्तिः—३

श्रीसूरिहीरविजये भजति द्युलोकमभ्युद्गते विजयसेनगणावनीन्द्रे ॥
प्रीतिं जना दधति शीतरुचौ प्रयाते, क्षेत्रांतरं समुदितें ऽशुमतीव कोकाः॥१॥
तत्पट्टोदयभूधरभास्वान्श्रीविजयदेवसूरीन्द्रः ॥
भजते तपगणराज्यश्रियमुर्वीसार्वभौम इव ॥२॥
सीहगिरेरिव वज्रस्वामी तस्येष पदपयोधिविधुः ॥
श्रीविजयदेवसूरिक्षोणीन्द्रः पर्वतायुः स्यात् ॥३॥
श्रीहीरसौभाग्यकाव्ये सर्ग-१७, श्लोकाः २०८,२०९ २१०, ।

॥ इति समाप्ता परम्परा ॥

श्रीयुगप्रधानाः

(कर्ता—महोपाध्यायश्रीविनयविजयगणिः)

पूर्वर्ष्यपेक्षयैवं च, हीनहीनगुणैरपि ॥
मोक्षमार्गाद्यवाप्तिः स्या—न्निर्ग्रन्थैरेव नापरैः ॥९८॥
विषमेपि च कालेस्मिन्, भवंत्येव महर्षयः ॥
निर्ग्रन्थैः सदृशाः केचिच्चतुर्थारकवर्तिभिः ॥९९॥
यथास्यामवसर्पिण्यामेतस्मिन् पंचमे ऽरके ॥
त्रयोविंशतिरादिष्टा, उदयाः सततोदयैः ॥१००॥
विंशतिः१प्रथमे तत्र, युगप्रधानसूरयः ॥
उदये स्युर्द्वितीयस्मिन्, त्रयोविंशतिरेव२ ते ॥१०१॥
तृतीये ऽष्टाढ्यनवतिः३, चतुर्थे चा ऽष्टसप्ततिः ॥
पंचसप्तति ५ रेकोननवतिः ६ शतमेव ७ च ॥१०२॥
सप्ताशीति ८ स्तथापंच-नवतिश्च ९ ततः परं ॥
सप्ताशीतिः १० षट्सप्तति ११–रष्टसप्ततिरेव च १२ ॥१०३॥
चतुर्नवति १३ रेवाष्टौ १४, त्रयः १५ सप्त १६ चतुष्टयं १७ ॥
शतं पंचदशोपेतं १८, त्रयस्त्रिंशं शतं १९ शतं २० ॥१०४॥
पंचाधिका ऽथ नवति २१–र्नवतिश्च नवाधिका २२ ॥
चत्वारिंशत् २३ क्रमादेते, यथोक्तोदयसूरयः ॥१०५॥
श्री सुधर्मा१ च वज्रश्च २, सूरिः प्रातिपदाभिधः ३ ॥
हरिस्सहो४ नन्दिमित्रः५, सूरसेनस्तथापरः ६ ॥१०६॥
रविमित्रः७ श्रीप्रभश्च ८, सूरिर्मणिरथाभिधः ९ ॥
यशोमित्रो १० धनशिखः११, सत्यमित्रो १२ महामुनिः ॥१०७॥

धम्मिल्लो १३ विजयानंद१४–स्तथा सूरिः सुमंगलः१५ ॥
धर्मसिंहो १६ जयदेवः१७ सुरदिन्नाऽभिधो गुरुः१८ ॥१०८॥
वैशाखश्चाऽथ १९ कोडिन्यः २०, सूरिः श्रीमाथुराह्वयः २१ ॥
वणिक्पुत्रश्च २२ श्रीदत्त २३, उदयेष्वाद्यसूरयः ॥१०९॥
स्यात्पुष्पमित्रो १ ऽर्हन्मित्रः २, सूरिर्वैशाखसंज्ञकः ३ ॥
सुकीर्ति ४ स्थावर ५ रथ–सुताश्च ६ जयमंगलः ७ ॥११०॥
ततः सिद्धार्थ ८ ईशानो ९, रथमित्रो १० मुनीश्वरः ॥
आचार्यो भरणीमित्रो ११ दृढमित्राऽऽह्वयो ऽपि १२ च ॥१११॥
संगतिमित्रः १३ श्रीधरो १४ मागध १५ श्चा ऽमराभिधः १६ ॥
रेवतीमित्र१७सत्कीर्ति–मित्रौ १८ च सुरमित्रकः १९ ॥११२॥
फल्गुमित्रश्च २० कल्याण—सूरिः २१ कल्याणकारणं ॥
देवमित्रो २२ दुष्प्रसह २३, उदयेष्वंत्यसूरयः ॥११३॥
श्रीसुधर्मा च जम्बूश्च, प्रभवः सूरिशेखरः ॥
शय्यंभवो यशोभद्रः, संभूतिविजयाऽऽह्वयः ॥११४॥
भद्रबाहुस्थूलभद्रौ, महागिरिसुहस्तिनौ ॥
घनसुंदरश्यामार्यौ, स्कंदिलाचार्य इत्यपि ॥११५॥
रेवतीमित्रधर्मौ च, भद्रगुप्ताभिधो गुरुः ॥
श्रीगुप्तवज्रसंज्ञार्य—रक्षितौ पुष्पमित्रकः ॥११६॥
प्रथमस्योदयस्येति, विंशतिः सूरिसत्तमाः ॥

त्रयोविंशतिरुच्यन्ते, द्वितीयस्याऽथ नामतः ॥११७॥
श्रीवज्रो नागहस्ती च, रेवतीमित्र इत्यपि ॥
सिंहो नागार्जुनो भूत—दिन्नः कालकसंज्ञकः ॥११८॥
सत्यमित्रो हारिलश्च, जिनभद्रो गणीश्वरः ॥
उमास्वातिः पुष्पमित्रः, संभूतिः सूरिकुंजरः ॥११९॥
तथा माढरसंभूतो धर्मः श्रीसंज्ञको गुरुः ॥
ज्येष्ठांगः फल्गुमित्रश्च, धर्मघोषाह्वयो गुरुः ॥१२०॥

सूरिर्विनयमित्राख्यः, शीलमित्रश्च रेवतिः ॥
स्वप्नमित्रो हरिमित्रो, द्वितीयोदयसूरयः ॥१२१॥

स्युस्त्रयोविंशतेरेव—मुदयानां युगोत्तमाः ॥
चतुर्युक्ते सहस्रे द्वे, मीलिताः सर्वसंख्यया ॥१२२॥

एकावतारा सर्वेऽमी, सूरयो जगदुत्तमाः ॥
श्रीसुधर्मा च जंबूश्च, ख्यातौ तद्भवसिद्धकौ ॥१२३॥

अनेकातिशयोपेता, महासत्वा भवंत्यमी ॥
घ्नन्ति सार्धद्वियोजन्यां, दुर्भिक्षादीनुपद्रवान् ॥१२४॥

एकादशसहस्राश्च लक्षाश्च षोड़शाऽधिकाः ॥
युगप्रधानतुल्याः स्युः, सूरयः पंचमारके ॥१२५॥

तथोक्तं, दुष्षमारकसंघस्तोत्रे (गाथा १८)—
जुगपवरसरिससुरी दूरीकयभवियमोहतमपसरे ॥
वन्दामि सोलसुत्तर इगदस लक्खे सहस्से य ॥१॥
संतु श्रीवर्द्धमानस्येत्यादि ॥ दीवालीकल्पे तु (१११६०००)—
जुगप्पहाण समाणा, एगारसलक्ख सोलससहस्सा ॥
सूरिओ हुँति अरए, पंचमे जाव दुप्पसहे ॥२॥ +
कोटीनां पंचपंचाश—ल्लक्षास्तावन्त एव च ॥
सहस्राश्च शताः पंच, सर्वे स्वाचारसूरयः ॥१२६॥

त्रयस्त्रिंशच्च लक्षाणि, सहस्राणां चतुष्टयी ॥ ३३०४४६१
चतुःशत्येकनवतिः, सूरयो मध्यमा गुणैः ॥१२७॥

अस्मिन्नेवारकेऽभूवन् , पूर्वाचार्या महाशयाः ॥
श्रीजगच्चन्द्रसूर्याद्या—स्तपागच्छाऽन्वयक्रमे ॥१२८॥

+ श्री धर्मघोषसूरिकृतकालसप्ततिकायां ३३ गाथायामेतत्संख्याया एव स्वीकारः ॥

सूरयो बप्पभट्टाख्या, अभयदेवसूरयः ॥
हेमाचार्याश्च मलय—गिर्याद्याश्चाऽभवन्परे ॥१२९॥
विजयन्तेऽधुनाऽप्येवं, मुनयो नयकोविदाः ॥
अत्युग्रतपसश्चारु—चारित्रमहिमाऽद्भुताः ॥१३०॥
एवं मध्यस्थया दृष्ट्वा, पर्यालोच्य विवेकिभिः ॥
न कार्यः शुद्धसाधूनां, संशयः पंचमेऽरके ॥१३१॥
दुष्षमारकपर्यन्ता——वधि संघश्चतुर्विधः ॥
भविष्यत्यव्यवच्छिन्न. इत्यादिष्टं जिनैः श्रुते ॥१३२॥

तथोक्तं भगवत्यां—जम्बूदीवेणं दीवे भारेह वासे इमीसे उसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं केवइयं कालं तित्थे अणुसज्जिस्सति ? गो० ? जंबु० भारहे इमीसे उस० मम एक्कवीसवाससहस्साइं तित्थे अणुसज्जिस्सति । इति, भगवती श० २० उ० ८ (सू०६७८) ॥

दीवाली कल्पे तूक्तं—

वासाण वीससहस्सा नवसय तिम्मास पंचदिण पहरा ॥
इक्का घड़िया दोपल अक्खरअडयाल जिणधम्मो ॥१३३॥

(अथ दुष्प्रसहसूरेरधिकारः)—×

पर्यन्ते त्वरकस्यास्य, सूरिर्दुष्प्रसहाभिधः ॥
रत्निद्वयोच्छ्रितो विंशत्यब्दजीवी भविष्यति ॥१३४॥
स्वर्गाच्च्युत्वा समुत्पन्नो, गृहे द्वादशवत्सरीं ॥
स्थित्वा सामान्यसाधुत्वे, चत्वार्यब्दान्यसौ शुचिः ॥१३५॥
चत्वार्यब्दानि सूरित्वे, स्थित्वाष्टाऽब्दानि च व्रते ॥
स्वर्गमेष्यति सौधर्म—मंते कृत्वाऽष्टमं कृती ॥१३६॥
दशवैकालिकं जीत—कल्पमावश्यकं च सः ॥
अनुयोगद्वारं नंदिं, नतेंद्रो धास्यति श्रुतम् ॥१३७॥
साध्वी तदा च फल्गुश्रीः, श्रावको नागिलाभिधः ॥
सत्यश्रीः श्राविका चेति, ज्ञेयः संघश्चतुर्विधः ॥१३८॥

यतः—एगो साहू एगा य, साहुणी सड्ढो य सड्ढी वा ॥
आणाजुत्तो संघो, सेसो पुण अट्ठिसंघाओ ॥१३९॥
उत्कष्टं श्रुतमेतेषां दशवैकालिकावधि ॥
षाण्मासिकतपस्तुल्यं, षष्ठभक्तं भविष्यति × ॥१४०॥
मंत्रीशः सुमुखाभिख्यो, राजा विमलवाहनः ॥
भविष्यतस्तदा लोके, नीतिमार्गप्रवर्तकौ ॥१४१॥
अयं दुष्प्रसहाचार्यो—पदेशेन करिष्यति ॥
चैत्यस्याऽन्तिममुद्धारं, राजा श्रीविमलाचले ॥१४२॥
कोट्यैकैकादशलक्षाः, सहस्राणि च षोडश ॥ १११६०००
उत्तमानां क्षितीशानां, संख्यैषा दुष्षमारके ÷ ॥१४३॥
कोटयः पञ्चपञ्चाश ५५–लक्षा५५श्चापि सहस्रकाः५५ ॥
तावंतो ऽथ शताः पंच, पंचपंचाश५५५दन्विताः ॥१४४॥
इयन्तो दुष्षमाकाले निर्दिष्टाः सर्वसंख्यया ॥
नवभिः पंचकैर्नाम–धारिणो ऽधमसूरयः ॥१४५॥ इत्यर्थतो दीपिका कल्पे
इतिश्रीलोकप्रकाशे काललोके चतुस्त्रिंशत्तमे सर्गे

युगप्रधानसंबंधः समाप्तः

× श्रीधर्मघोष सूरिकृतायां कालसप्ततिकायां गाथा ५०, ५१, ५२, ५३, ५४ गाथास्वपि एषोधिकारो दर्शितोस्ति ॥ तस्यामेव ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९ गाथासु कल्की नृपाधिकारोस्ति ॥

÷ ४९गाथायां तु १११६००० जैननृपाः इति मतम् ।

[१०]

श्रीसूरिपरंपरा

[कर्त्ता—महोपाध्यायः श्रीविनयविजयगणिः]

श्रेयः श्रीवर्द्धमानो दिशतु शतमखश्रेणिभिः स्तूयमानः ।
सत्द्माभृत्सेव्यपादः कृतसदुपकृतिर्गोपतिर्नूतनो वः ॥
कालेऽप्यस्मिन्प्रदोषे कटुकुमतिकुहूकल्पितध्वांतपोषे ।
प्रादुष्कुर्वन्ति गावः प्रसृमरविभवा युक्तिमार्गं यदीयाः ॥१॥
तत्पट्टेऽथेंद्रभूतेरनुज उदभवच्छ्रीसुधर्मा गणींद्रो ।
जंबूस्तत्पट्टदीपः प्रभव इति भवांभोधिनौस्तस्य पट्टे ॥
सूरिः शय्यंभवोऽभूत्स मनकजनकस्तत्पदांभोजभानु—
स्तत्पट्टैरावतेंद्रो जनविदितयशाः श्रीयशोभद्रसूरिः ॥२॥
तत्पट्टभारधूर्यौ, गणधरवर्यौ श्रियं दधाते द्वौ ।
संभूतविजयसूरिः सूरिः श्रीभद्रबाहुश्च ॥३॥
श्रीस्थूलभद्र उदियाय तयोश्च पट्टे, जातौ महागिरिसुहस्तिगुरू ततश्च ।
पट्टे तयोः श्रियमुभौ दधतुर्गणींद्रौ, श्रीसुस्थितो जगति सुप्रतिबद्धकश्च ॥४॥
तत्पट्टभूषणमणिर्गुरुरिंद्रदिन्नः, श्रीदिन्नसूरिरथ तस्य पदाधिकारी ॥
पट्टेर राज गुरुसिंहगिरिस्तदीये, स्वामी च वज्रगुरुरस्य पदे बभूव ॥५॥
श्रीवज्रसेनसुगुरुर्बिभरांबभूव, पट्टं तदीयमथ चंद्रगुरुः पदेऽस्य ।
सामन्तभद्रगुरुरुन्नतिमस्य पट्टे, चक्रेऽस्य पट्टमभजद्गुरुदेवसूरिः ॥६॥
प्रद्योतनस्तदनु तस्य पदे च मान-देवस्तदीयपदभृद्गुरुमानतुङ्गः ।
वीरस्ततोऽथ जयदेव इतश्च देवा-नन्दस्ततश्च भुवि विक्रमसूरिरासीत् ॥७॥
तस्माद्बभूव नरसिंह इति प्रतीतः, सूरिः समुद्र इति पट्टपतिस्तदीयः ।
सूरिः पदेऽस्य पुनरप्यजनिष्टमान-देवस्ततश्च विबुधप्रभसूरिरासीत् ॥८॥

जयानन्दः पट्टे श्रियमपुषदस्याऽस्य च रवि—
प्रभस्तत्पट्टेशः समजनि यशोदेवमुनिराट् ॥
ततः प्रद्युम्नाख्यो गुरुरुदयति स्मा ऽथ पुनर—
प्यभून्मानादेवो गुरुविमलचंद्रश्च तदनु ॥९॥
तस्मादुद्योतनाख्यो गुरुरभवदितः सर्वदेवो मुनीन्द्र—
स्तस्माच्छ्रीदेवसूरिस्तदनु पुनरभूत् सर्वदेवस्ततश्च ॥
जज्ञाते सूरिराजौ प्रगुणगुणयशोभद्र—सन्नेमिचंद्रौ
विख्यातौ भूतलेऽस्मिन्नविरतमुदितौ नूतनौ पुष्पदंतौ ॥१०॥
मुनिचंद्रमुनिस्ततो ऽद्भुतोऽथा—ऽजितदेवश्च तदन्तिषद्वरेण्यः ।
अपरः पुनरस्य शिष्यमुख्यो, भूवि वादी विदितश्च देवसूरिः ॥११।
अजितदेवगुरोरभवत्पदे, विजयसिंह इति प्रथितः क्षितौ ।
तदनु तस्य पदं दधतावुभा—वभवतां गणभारधुरंधरौ ॥१२॥
सोमप्रभस्तत्र गुरुः शतार्थी, सतांमणिः श्रीमणिरत्नसूरिः ।
पट्टे मणिः श्रीमणिरत्नसूरे—र्जज्ञे जगच्चन्द्रगुरुर्गरीयान् ॥१३॥
तेषामुभावंतिषदावभूतां, देवेंद्रसूरिर्विजयाच्च चंद्रः ।
देवेंद्रसूरेरभवच्च विद्या—नन्दस्तथा श्रीगुरुधर्मघोषः ॥१४
श्रीधर्मघोषादजनिष्ट सोम—प्रभो ऽस्य शिष्याश्च युगप्रमेयाः ।
चतुर्दिगुत्पन्नजनावनाय, योधा इव प्राप्तविशुद्धबोधाः ॥१५॥
श्रीविमलप्रभसूरिः, परमानन्दश्च पद्मतिलकश्च ।
सूरिवरो ऽप्यथ सोम—प्रभपट्टेशश्च सोमतिलकगुरुः ॥१६॥
शिष्यास्त्रयस्तस्य च चंद्रशेखरः, सूरिर्जयानन्द इतीह सूरिराट् ।
स्वपट्टसिंहासनभूमिवासवः, शिष्यस्तृतीयो गुरुदेवसुन्दरः ॥१७॥
श्रीदेवसुन्दरगुरोरथ पञ्च शिष्याः, श्रीज्ञानसागरगुरुः कुलमंडनश्च ।
चंचद्गुणश्च गुणरत्नगुरुर्महात्मा, श्रीसोमसुन्दरगुरुर्गुरुसाधुरत्नः ॥१८॥
श्रीदेवसुंदरमुनीश्वरपट्टनेतुः, श्रीसोमसुंदरगुरोरपि 'पञ्च' शिष्याः ।
तत्र स्वपट्टवियदंगणभानुमाली, मुख्योऽतिषद्गणधरो मुनिसुंदराख्यः ॥१९॥

अन्ये श्रीजयचंद्रः, सूरिः श्रीभुवनसुंदराह्वश्च ।
श्रीजिनसुन्दरसूरि-र्जिनकीर्तिश्चेति सुरींद्राः ॥२०॥
मुनिसुंदरसूरिपट्टभानु-र्गुरुरासीदथ रत्नशेखराऽऽख्यः ।
दधदस्य'पदं'बभूवलक्ष्मी-पदयुक्सागरसूरिरीश्वराच्यैः ॥२१॥
सुमतिसाधुगुरुस्तदनुप्रभा—मुदवहद्दधदस्य पदं प्रभुः ।
पदमदीदिपदस्य च हेमयुग्-विमलसूरिरुदात्तगुणोदयः ॥२२॥
पट्टे'तस्य' बभुवुरुग्रतपसो वैरंगिकाग्रेसराः ।
आनंदाद्विमलाऽऽह्वया गणभृतो भव्योपकारोद्धुराः ॥
ये नेत्रेभशराऽमृतद्युतिमिते (१५८२) वर्षे क्रियोद्धारत—
श्चक्रुः'स्वां'जिनशासनस्य शिखरे कीर्तिं पताकामिव ॥२३॥
प्रमादाऽभ्रच्छन्नं चरणतरणिं मंदकिरणं ।
पुनश्चक्रे दीप्तं रुचिररुचिरब्दात्यय इव ॥
सृजन्पद्मोल्लासं सुविशदपथश्चन्द्रमधुरो ।
दिदीपे निष्पंकः स इह गुरुरानंदविमलः ॥२४॥
विजयदानगुरुस्तदनुद्युतिं, तपगणे ऽधिकभाग्यनिधिर्दधौ ।
श्रुतमहोदधिरेधितसद्विधि—र्विधुयशा जिनधर्मधुरंधरः ॥२५॥
अभूत्पट्टे तस्योल्लसितविजयो हीरविजयो ।
गुरुर्गीर्वाणौघप्रथितमहिमा ऽस्मिन्नपि युगे ॥
प्रबुद्धो म्लेच्छेशो ऽप्यकबरनृपो यस्य वचसा ।
दयादानोदारो व्यतनुत महीमार्हतमयीम् २६॥
तदनुविजयसेनसूरिराज-स्तपगणराज्यधुरं दधार धीरः ।
अकबरनृपतेः पुरो जयश्री-र्यमवरीदुरुवादिवृंददत्ता ॥२७॥
जयति विजयदेवः सूरिरेतस्य पट्टे, मुकुटमणिरिवोद्यत्कीर्तिकांतिप्रतापः
प्रथितपृथुतपःश्रीः शुद्धधीरिंद्रभूतेः, प्रतिनिधिरधिदक्षो जंगमः कल्पवृक्षः ॥२८॥
तेन श्रीगुरुणाहितो निजपदे दीपोपमो ऽदीदिपत् ।
सूरिः श्रीविजयादिसिंहसुगुरुः प्राज्यैर्महोभिर्जगत् ॥

भूमौ स प्रतिबोध्य भव्यनिवहान् स्वर्गेप्यथ स्वर्गिणः ।
प्राप्तो बोधयितुं गुरौ विजयिनि "प्रेमाण" मुत्सृज्य नः ॥२९॥
तदनुपट्टपतिर्विहितो ऽधुना, विजयदेवतपागणभूभृता ।
गुणगणप्रगुणो ऽनणुभाग्यभू—र्विजयते गणभृद्विजयप्रभः ॥३०॥
निर्ग्रंथः श्रीसुधर्माऽभिधगणधरतः कोटिकः सुस्थिताऽऽर्या—
च्चंद्रः श्रीचंद्रसूरेस्तदनु च वनवासीति सामंतभद्रात् ॥
सूरेः श्रीसर्वदेवाद्वटगण इति यः श्री जगच्चन्द्रसूरे—
र्विश्वे ख्यातस्तपा ऽऽख्यो जगति विजयतामेषगच्छो गरीयान्॥३१॥

अथ प्रशस्तिः

इतश्च—श्रीहीरविजयसूरीश्वर-शिष्यौ सोदरावभूतां द्वौ ।
श्रीसोमविजयवाचक-वाचकवरकीर्तिविजयाख्यौ ॥३२॥
तत्र कीर्तिविजयस्य, किंस्तुमः सुप्रभावममृतद्युतेरिव ।
यत्कराऽतिशयतोऽजनि-स्फुट मत्प्रस्तरादपि सुधारसो ऽसकौ ॥३३॥
प्रतिक्रियां कां यदुपक्रियाणां,गरीयसीनामनुसर्तुमीशे ।
ज्ञानादिदानैरुपचर्य सो ऽयं, यैः कल्पितः कीटकणोऽपि कुंभी॥३४॥

विनयविजयनामा,वाचकस्तद्विनेयः
समदृभदृगुणशक्तिर्ग्रंथमेनं महार्थं ॥
तदिह किमपितत्स्यात्स्खलुणमुत्सूत्रकाऽऽद्यं ।
मयि विहितकृपैस्तत्कोविदैः शोधनीयं ॥३५॥

(रचना वि० सं०१७०८वर्षे राधोज्वलपंचम्यां जीर्णदुर्गे ॥)

इति लोकप्रकाशनाम्नः सप्तत्रिंशद्सर्गबन्धस्य । जिनराजकोशस्य
श्रीसूरिपरंपरा—प्रशस्तिः ॥

श्रीपट्टावलीसारोद्धारः

(कर्ता—उपाध्यायश्रीरविवर्द्धनगणिः)

पंडितश्री५श्रीखिमाविजयगणिगुरुभ्यो नमः ॥

(१) ऐंनमः श्रीवर्द्धमानतीर्थंकरः । तत्पट्टे "श्रीसुधर्म्मस्वामी" ॥ पंचाष५०द्वर्षाणि गृहस्थपर्याये त्रिंशद्वर्षाणि ३० श्रीमहावीरसेवायां श्रीवीरे मोक्षं गते च द्वादशवर्षाणि छाद्मस्थ्ये अष्टौ ८ वर्षाणि केवलिपर्याये चेति सर्वायुः शतमेकं परिपाल्य श्रीवीरात् विंशत्या वर्षैः २० सिद्धिं गतः ।

श्रीवीरकेवलज्ञानोत्पत्तेः चतुर्दश१४वर्षे जमालीनामा प्रथमनिह्नवः १ स च निह्नवःसमुत्पन्नाध्यवसायविशेषेण भगवतीसूत्राद्यनुसारेण नरामरतिर्यग्योनिषु प्रत्येकं पंचभवकरणे पंचदशभवान् भ्रांत्वा उपदेशमाला हेयउपादेयवृत्त्याद्यनुसारेणाप्यनंतं भवं भ्रांत्वा महाविदेहे सेत्स्यतीत्यत्रनिर्णयः केवलीगम्यइति १ ।

षोडश१६वर्षे तिष्यगुप्तनामा द्वितीयो निह्नव २ जातः ॥१॥

(२) श्रीसुधर्मस्वामिपट्टे द्वितीयः श्रीजंबूस्वामी ॥ स च षोडशवर्षाणि १६ गृहस्थपर्याये विंशति२०वर्षाणि व्रतपर्याये चतुश्चत्वारिंश४४द्वर्षाणि केवलिपर्याये चेति सर्वायुरशीति८०वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् चतुःषष्ठि६४वर्षे सिद्धिं गतः ॥२॥

(३) श्रीजम्बूस्वामिपट्टे तृतीयः श्रीप्रभवस्वामी ॥ स च त्रिंश३०द्वर्षाणि गृहस्थपर्याये चतुश्चत्वारिंश४४द्वर्षाणि व्रतपर्याये एकादश११ वर्षाणि युगप्रधानत्वे चेति सर्वायुः पंचाशीति८५वर्षायुः परिपाल्य श्रीवीरात् पंचसप्तति७५वर्षातिक्रमे स्वर्गं प्राप्तः ॥३॥

(४) श्रीप्रभवस्वामिपट्टे चतुर्थः श्रीशय्यंभवस्वामी ॥ स चाष्टाविंशति२८वर्षाणि गृहस्थपर्याये एकादश११वर्षाणि व्रतपर्याये त्रयोविं-

शतिवर्षाणि २३ युगप्रधानत्वे सर्वायुः द्वाषष्ठिः ६२ वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरादष्टनवती ९८ वर्षाण्यतिक्रम्य स्वर्गभाग् ॥४॥

(५) श्रीशय्यंभवस्वामीपट्टे पंचमः श्रीयशोभद्रसूरिः ॥ स च द्वाविंशति२२वर्षाणि गृहे चतुर्दश१४वर्षाणि व्रते पंचाशद्वर्षाणि५०युगप्रधानत्वे सर्वायुः षडशीति८६वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरादष्टचत्वारिंशदधिके शते १४८ वर्षातिक्रांते स्वर्गभाग् । ॥५॥

(६) श्रीयशोभद्रसूरिपट्टे षष्ठौ श्रीसंभूतिविजयश्रीभद्रबाहुस्वामिनौ ॥ तत्रसंभूतिविजयः द्विचत्वारिंश४२द्वर्षाणि गृहे चत्वारिंश४०द्वर्षाणि व्रते अष्टौ वर्षाणि ८ युगप्रधानत्वे सर्वायुर्नवति९० वर्षाणि परिपाल्य-स्वर्गभाग् । श्रीभद्रबाहुस्वामी तु पंचचत्वारिंश४५द्वर्षाणि गृहे सप्तदश १७वर्षाणि व्रते चतुर्दश१४वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः षट्सप्तति७६ वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात्सप्तत्यधिकशत१७०वर्षातिक्रमे स्वर्गभाग् ॥६॥

(७) श्रीसंभूतिविजयश्रीभद्रबाहुस्वामीनोः पट्टे सप्तमः श्रीस्थूलभद्रस्वामी ॥ स च त्रिंशद्वर्षाणि३० गृहे चतुर्विंशति२४वर्षाणि व्रते पंचचत्वारिंश४५द्वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः नवनवति९९वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् पंचदशाधिकशतद्वय२१५वर्षातिक्रमे स्वर्गभाग् ॥

अत्रांतरे वीरात् चतुर्दशाधिकद्विशत२१४वर्षे आषाढाचार्यादव्यक्तनामा तृतीयः निह्नवः ॥७॥

(८) श्रीस्थूलिभद्रस्वामिपट्टे अष्टमौ श्रीआर्यमहागिरि–श्रीआर्यसुहस्ती सूरी ॥ तत्र आर्यमहागिरिः त्रिंशद्व३०र्षाणि गृहे चत्वारिंश४०द्वर्षाणि व्रते त्रिंश३०द्वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः शतमेकं १०० परिपाल्य स्वर्गभाग् ॥

श्रीआर्यसुहस्तिसूरिः त्रिंश३०द्वर्षाणि गृहे चतुर्विंशति२४वर्षाणि व्रते षट्चत्वारिंशद्४६वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः शतमेकं १०० परिपाल्य श्रीवीरात् एकनवत्यधिकशतद्वये २९१ स्वर्गभाग् ॥ परं श्रीआचार्यसुहस्तिसूरिणा पूर्वभवे द्रमकीभूतोपि संप्रतिराजाजीवः प्रव्राज्य त्रिषं-

डाधीपत्यं प्रापितः। तथा श्रीआचार्यसुहस्तिसूरिदीक्षितश्रीअवंतीसुकुमालमृतस्थाने तत्सुतेन देवकुलं कारितं तस्य महाकाल इति नाम संजातं ॥

तथा श्रीवीरात् विंशत्यधिकवर्षे शतद्वये २२० अश्वमित्रात्सामुछेदिकनामा चतुर्थोनिह्नवः। अष्टाविंशत्यधिक वर्षेशतद्वये गंगनामा द्विक्रियवादी पंचमो निह्नवः ॥८॥

(९) श्रीआर्यमहागिरि-श्रीआर्यसुहस्तिसूरिपट्टे नवमौ श्रीसुस्थित श्रीसूप्रतिबद्धसूरी ॥ काकंदिकनगर्यां जातत्वात् कोटिशःसूरिमंत्रजापाच्च एतो कोटिंककाकंदिकतयाख्यातौ ॥ आभ्यां "कौटिक" नामा गच्छो ऽभूत् ।

अयं भावः श्रीसुधर्म्मस्वामिनोऽष्टसूरीन् यावन्निर्ग्रंथा साधवो अनगारा इतिसामान्यार्थाभिधायिन्याख्याभूत् नवमे पट्टे कौटिका इति विशेषार्थावबोधकं द्वितीयं नाम प्रादुर्भूतं, अत्रांतरे प्रज्ञापनासूत्रकृत्श्रीआर्यश्यामाचार्यः श्रीवीरात् षट्सप्तत्यधिकशतत्रये ३७६ वर्षे स्वर्गभाग् ॥९॥

(१०) श्रीसूस्थित-सुप्रतिबद्धपट्टे दशमः श्रीइंददिन्नसूरिः ॥

अत्रांतरे श्रीवीरात्पंचाशदधिकवर्षचतुःशता४५०तिक्रमे गर्द्दभिल्लोच्छेदकारी श्रीकालिकसूरिः ॥

तथा श्रीसिद्धसेनदिवाकरोपि जातो येनोज्जयिन्यां महाकालप्रासादे रुद्रलिंगस्फोटनं कृत्वा कल्याणमंदिरस्तवनेन श्रीपार्श्वनाथबिंबं प्रकटीकृत्य श्रीविक्रमादित्यराजापि प्रतिबोधितः श्रीवीरनिर्वाणात् सप्ततिवर्षाधिकशतचतुष्टये४७०ऽतिक्रमे श्रीविक्रमादित्यराज्यं संजातं ॥१०॥

(११) श्रीइन्द्रदिन्नसूरिपट्टे एकादशः श्रीदिन्नरत्नसूरिः ॥११॥

(१२) श्रीदिन्नरत्नसूरिपट्टे द्वादशः श्रीसीहगिरिः ॥१२॥

(१३) श्रीसीहगिरीसूरिपट्टे त्रयोदशः श्रीवज्रस्वामी ॥ स च वज्रशाखोत्पत्तिमूलं दशपूर्वविदांमपश्चिमः अष्टौ८वर्षाणि गृहे चतुश्चत्वारिंशद् ४४ वर्षाणि व्रतेः षट्त्रिंशद्वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुरष्टाशीति ८८ वर्षाणि परिपाल्य श्रीवीरात् चतुरशीतिवर्षाधिकपञ्चशतवर्षाणि ५८४ अतिक्रमे स्वर्गभाग् ॥ तथा श्रीवीरादष्टचत्वारिंशदधिकपञ्चशत५४८वर्षांते त्रैरा

शिकमतजित् "श्रीसुगुप्तसूरिः" स्वर्गभाग् ॥

तथा श्रीवीरात् सपादपंचशत५२५वर्षांते "श्रीशत्रुंजयतीर्थोच्छेदः"। सप्ततिवर्षाधिकपञ्चशत५७०(५७८)वर्षे जावडकृतोद्धारः ॥१३॥

(१४) श्रीवज्रसेनसूरिपट्टे चतुर्दशः "श्रीवज्रदिन्नसूरिः"(वज्रसेनसूरिः) ॥ स च नववर्षाणि गृहे षोडशाधिकशतवर्षाणि व्रते त्रीणि वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुसाष्टाविंशतिशतं परिपाल्य वीरात् विंशत्यधिक षट्शतवर्षांते स्वर्गभाग्। नवाधिकषट्शतवर्षांते६०९दिगम्बरोत्पत्तिः ॥१४॥

(१५) श्रीवज्रसेनसूरिपट्टे पंचदशः "श्रीचंद्रसूरिः" तस्मात् "चंद्रगच्छ" इति तृतीयं नाम प्रादुर्भूतं ॥१५॥

(१६) श्रीचन्द्रसूरिपट्टे षोडशः "श्रीसामन्तभद्रसूरिः" स च वैराग्यवान् निर्ममतया देवकुले वनादिष्ववस्थानात् लोके वनवासीप्युक्तस्तस्माच्चतुर्थं नाम "वनवासी"तिप्रादुर्भूतं ॥१६॥

(१७) श्रीसामन्तभद्रसूरिपट्टे सप्तदशः "श्रीवृद्धदेवसूरि" ॥१७॥

(१८) श्रीवृद्धदेवसूरिपट्टे अष्टादशः "श्रीप्रद्योतनसूरिः" ॥१८॥

(१९) श्रीप्रद्योतनसूरिपट्टे एकोनविंशतितमः "श्रीमानदेवसूरिः"१९

(२०) श्रीमानदेवसूरिपट्टे विंशतितमः "श्रीमानतुङ्गसूरिः" ॥

येन श्रीभक्तामरस्तवनं कृत्वा बाणमयूरपण्डितविद्याचमत्कृतो ऽपि क्षितिपतिः प्रतिबोधितः ॥२०॥

(२१) श्रीमानतुङ्गसूरिपट्टे एकविंशतितमः " श्रीवीरसूरिः " ॥

स च श्रीवीरात्सप्तत्यधिकसप्तशतवर्षे विक्रमात् त्रिंशतिवर्षे श्रीनागपूरे श्रीनेमिनाथप्रतिष्ठाकृत् ॥२१॥

(२२) श्रीवीरसूरिपट्टे द्वाविंशतितमः " श्रीजयदेवसूरिः " ॥२२॥

(२३) श्रीजयदेवसूरिपट्टे त्रयोविंशतितमः श्रीदेवानंदसूरिः ॥

अत्रांतरे श्रीवीरात् पंचचत्वारिंशदधिकाष्टशतवर्षान्ते ८४५ वलभीपुरभंगः। द्व्यशीत्यधिकाष्टशतवर्षातिक्रमे चैत्यस्थीतिः ॥२३॥

(२४) श्रीदेवानंदसूरिपट्टे चतुर्विंशतितमः श्रीविक्रमसूरिः ॥२४॥

(२५) श्रीविक्रमसूरिपट्टे पंचविंशतितमः श्रीनरसिंहसूरिः ॥२५॥

(२६) श्रीनरसिंहसूरिपट्टे षड्विंशतितमः श्रीसमूद्रसूरिः ॥२६॥

(२७) श्रीसमूद्रसूरिपट्टे सप्तविंशतितमः श्रीमानदेवसूरिः। श्रीवीरात् वर्षे सहस्रे गते सत्यमित्रे "पूर्वव्यवच्छेदः" श्रीवीरात् त्रिनवत्यधिकनवशत ९९३ वर्षातिक्रमे श्रीकालिकसूरिभिः पंचमीतः चतुर्थ्यां पर्यूषणापर्वानितं श्रीवीरात्पंचपंचाशदधिकसहस्रवर्षे। विक्रमतः पंचाशीत्यधिकपंचशते ५८५ याकिनीसूनुः श्रीहरिभद्रसूरिः स्वर्गभाग् ॥२७॥

(२८) श्रीमानदेवसूरिपट्टे अष्टाविंशतितमः श्रीविबुधप्रभसूरिः २८

(२९) श्रीविबुधप्रभसूरिपट्टे एकोनविंशतितमः श्रीजयानंदसूरिः २९

(३०) श्रीजयानंदसूरिपट्टे त्रिंशत्तमः श्रीवीरप्रभसूरिः ॥ श्रीवीरान्नवत्यधिकैकादशशतवर्षे श्रीउमास्वातियुगप्रधानः। श्रीवीरात् पंचाशदधिकैकादशशतवर्षे जिनभद्रगणियुगप्रधानः ॥३०॥

(३१) श्रीवीरप्रभसूरिपट्टे एकत्रिंशत्तमः श्रीयशोदेवसूरिः ॥

श्रीवीरात् द्विसप्तत्यधिकद्वादशशतवर्षे विक्रमात् संवत् ८०२ वर्षे वनराजचापोत्कटेन श्रीअणहिल्लपुरपाटणस्थापना कृता। विक्रमतः सं०८०० वर्षे भाद्रपदशुक्लातृतीयायां आमराजाप्रतिबोधकः श्रीबप्पभट्टसूरिस्तस्यजन्म, स च विक्रमतः संवत् ८९५ वर्षे स्वर्गभाग् ॥३१॥

(३२) श्रीयशोदेवसूरिपट्टे द्वात्रिंशत्तमः श्रीप्रद्युम्नसूरिः ॥३२॥

(३३) श्रीप्रद्युम्नसूरिपट्टे त्रयस्त्रिंशत्तमः श्रीमानदेवसूरिः ॥ उपधानग्रंथकर्ता ॥३३॥

(३४) श्रीमानदेवसूरिपट्टे चतुस्त्रिंशत्तमः श्रीविमलचंद्रसूरिः ३४

(३५) श्रीविमलचंद्रसूरिपट्टे पंचत्रिंशत्तमः श्रीप्रद्योतनसूरिः। श्रीवीरात् चतुःषष्ठ्यधिकचतुर्दशशतवर्षे १४६४ विक्रमात् सं० चतुर्नवत्यधिकनवशत९९४वर्षे निजपट्टे सूरिः अर्बुदाचलवटस्य छायामुपविष्टः सन् श्रीसर्वदेवसूरिप्रभृतीन् अष्टौ सूरीन् स्थापितवान्। वटस्याधः सूरिपदकरणाद् "वडगच्छ" इति पंचमं नाम लोकप्रसिद्धं, प्रधानशिष्यसंततयादिगुणैः

प्रधानचरितैश्च "बृहद्गच्छ" इत्यपि नाम।

अत्रांतरे विमलमंत्रो श्रीअर्बुदाचलोपरितीर्थप्रासादकृदभूत् ॥३५॥

(३६) श्रीउद्योतनसूरिपट्टे षट्त्रिंशत्तमः श्रीसर्वदेवसूरिः ॥

तथा श्रीविक्रमात् एकोनत्रिंशदधिकदशशतवर्षे धनपालपंडितेन देशीनाममाला कृता। विक्रमात् षण्णवत्यधिकसहस्रवर्षे श्रीउत्तराध्ययनवृत्तिकर्त्ता थिरापद्रगच्छीयवादिवेतालशांतिसूरिः स्वर्गभाग् ॥३६॥

(३७) श्रीसर्वदेवसूरिपट्टे सप्तत्रिंशत्तमः श्रीदेवसूरिः ॥३७॥

(३८) श्रीदेवसूरिपट्टे ऽष्टत्रिंशत्तमः पुनः श्रीसर्वदेवसूरिः ॥३८॥

(३९) श्रीसर्वदेवसूरिपट्टे एकोनचत्वारिंशत्तमौ श्रीयशोभद्रसूरिः श्रीनेमिचंद्रसूरिः ॥ तथा विक्रमात् पंचत्रिंशदधिकैकादशशतवर्षे नवांगवृत्तिकृत् "श्रीअभयदेवसूरिः" स्वर्गभाग् ३९।

(४०) श्रीयशोभद्रसूरिश्रीनेमिचंद्रसूरिपट्टे चत्वारिंशत्तमः श्रीमुनिचंद्रसूरिः ॥ स च जावज्जीवं सौवीरपायी प्रत्याख्यातसर्वविकृतिकः श्रीअनेकांतजयपताकापंजिकोपदेशपदवृत्त्यादिकर्ता, तार्किकशिरोमणिः संवत् ११७८ वर्षे स्वर्गभाग् ॥

अत्र च संवत् ११५९ वर्षे पौर्णमियकमतोत्पत्तिः तत्प्रतिबोधाय च श्रीमुनिचंद्रसूरिभिः पाक्षिकसप्ततिः कृता ॥

तथा श्रीमुनिचंद्रसूरिशिष्यः श्रीवादिदेवसूरिस्तैः श्रीमदणहिल्लपूरपत्तने श्रीसिद्धराजजयसिंहसभायां वादे कुमुदचंद्राचार्यं निर्जित्य श्रीपत्तननगरे दिगंबरप्रवेशो निवारितः तथा सं० १२०४ वर्षे फलवर्द्धिग्रामे चैत्यबिंबयोः प्रतिष्ठा कृता, तथा आरासणे च श्रीनेमिनाथप्रतिष्ठाकृता, तथा ८४००० प्रमाणः स्याद्वादरत्नाकरनामा प्रमाणग्रंथः कृतः, स च वादिदेवसूरिः सं० १२२६ वर्षे स्वर्गभाग्।

तस्मिन्समये श्रीदेवचंद्रसूरिशिष्यः त्रिकोटिग्रंथकर्ता श्रीहेमचंद्रसूरिः तस्य च सं० ११४५ वर्षे जन्म सं० ११५० वर्षे व्रतं सं० ११६६ वर्षे सूरिपदं सं० १२२९ वर्षे स्वर्गगतिः ॥४०॥

(४१) श्रीमुनिचंद्रसूरिपट्टे एकचत्वारिंशत्तमः "श्रीअजितदेवसूरिः" ॥४१॥

तत्समये सं०१२०४वर्षे "खरतरमतोत्पत्तिः" संवत् १२१३ वर्षे "आंचलकमतोत्पतिः" संवत् १२२६ वर्षे "सार्द्धपौर्णमीयकमतोत्पत्तिः" संवत् १२५० वर्षे "आगमियकमतोत्पत्तिः" वीरात् द्विनवत्यधिकषोडश शत१६६२वर्षे बाहडदेमंत्रिकृतोद्धारः ॥४१॥

(४२) श्रीअजितदेवसूरिपट्टे द्विचत्वारिंशत्तमः 'श्रीविजयसिंहसूरिः"

(४३) श्रीविजयसिंहसूरिपट्टे त्रिचत्वारिंशत्तमौ "श्रीसोमप्रभसूरिः" "श्रीमणिरत्नसूरिः" ॥४३॥

(४४) श्रीमणिरत्नसूरिपट्टे चतुश्चत्वारिंशत्तमः "श्रीजगच्चंद्रसूरिः" स च क्रियापरायणः सन् "हीरलाजगच्चंद्र"सूरिरिति ख्यातिभाग् जातः तथा यावज्जीवमाचाम्लतपोभिग्रही द्वादशवर्षे तपाबिरुदमाप्तवान्, ततो लोके षष्ठं नाम संवत्१२८५वर्षे "तपा" इति प्रसिद्धं जातं ॥

तथा च निर्ग्रंथ १ कोटिक २ चंद्र ३ वनवासि ४ वडगच्छ ५ तपा ६ इति षण्णां नाम्नां प्रवृत्तिहेतवः आचार्याः क्रमेण श्रीसुधर्मस्वामि १ श्रीसुस्थितसूरि २ चंद्रसूरि ३ श्रीसामंतभद्रसूरि ४ सर्वदेवसूरि ५ श्रीजगच्चंद्रसूरि ६ नामानि षट् आसन् ॥४४॥

(४५) श्रीजगच्चंद्रसूरिपट्टे पंचचत्वारिंशत्तमः "श्रीदेवेंद्रसूरिः" । स च चिरकालं मालवके एव विहृतवान् ॥ क्रमेण श्रीदेवेंद्रसूरयः श्रीस्थंभतीर्थे समायाताः तत्र च श्री विजयचंद्रसूरयः एकस्यां पौषधशालायां लोकाग्रहात् द्वादश वर्षाणि पूर्वं स्थितवंतः प्रव्रज्यादिकृत्यमपि गुर्वाज्ञामंतरेणैव कृतवंतश्च, तथामालवदेशादागतानां श्रीदेवेन्द्रसूरीणां वंदनार्थमपि नायाताः, ततो लोकैश्च वृद्धशालायां स्थितत्वात् श्रीविजयचंद्रसूरिसमुदायस्य 'वृद्धशालिक"इति प्रोक्तं, तथा लघुशालायां स्थितत्वात् श्रीदेवेन्द्रसूरिनिश्रितसमुदायस्य "लघुशालिक"इति ख्यातिर्जाता ।

तत्समये मंत्रिवस्तुपालेन श्रीदेवेन्द्रसूरीणां बहुमानं कृतं, क्रमेण विहारं कुर्वंतश्च श्रीसूरयः प्रल्हादपुरनगरे समायाताः, तत्र च संवत् १३२३ वर्षे विद्यानंदसूरिं स्वपदे संस्थाप्य पुनरपि मालवदेशे विहृतवंतः तत्र मालवके एव सं० १३२७ वर्षे श्रीदेवेन्द्रसूरयो दिवं गताः ।

तदा दैवयोगाद्विद्यापुरे श्रीविद्यानंदसूरयोऽपि त्रयोदशदिनांतरिता स्वर्गभाजः ॥ तथा श्रीगुरूणां स्वर्गगमनं श्रुत्वा सं०भीमेन मतांतरे सोनीसंग्रामेण द्वादशवर्षाणि धान्यं त्यक्तं ॥४५॥

(४६) श्रीदेवेन्द्रसूरिपट्टे षट्चत्वारिंशत्तमः श्रीधर्मघोषसूरिः ॥ येन मंडपाचले सा० पेथडदेवः सौख्यभाग् कृतः सोऽपिमंडपेशप्राधान्यं प्राप्तस्तेन ८४ श्रीजिनप्रसादाःसप्तज्ञानकोशाश्च कारिताः षट्पंचाशत् स्वर्णघटीव्ययेनेंद्रमाला श्रीशत्रुंजयोपरि परिहिता, तथा सां०पेथडदेवः द्वात्रिंशद्वर्षीयोपि ब्रह्मचार्यभूत् तस्य पुत्रो झांझणदेनामा एक एवासित् येन च श्रीशत्रुंजयोज्जयंतगिर्योः शिखरे द्वादशयोजनप्रमाणस्वर्णरूप्यमयः एक एव ध्वजः समारोपितः तथा येन मंडपाचले जिर्णटंकानां षट्त्रिंसत्सहस्रैः श्रीगुरूणां प्रवेशोत्सवः कृतः ॥

तथा एकदा श्रीगुरुभिः काभिश्चित् दुष्टस्त्रिभिः कार्मणोपेता वटका साधूनां विहरिताः भूपीठे त्याजिता प्रभाते ते पाषाणमया अभवन् तदा वासाभिमंत्र्यार्पितपट्टकासनस्थादुष्टस्त्रियः स्थम्भिताः । ताश्च कृपया मुक्ताः, एवं महा प्रभावकाः श्रीगुरवः संवत् १३५७ वर्षे दिवं गताः ॥४६॥

(४७) श्रीधर्मघोषसूरिपट्टे सप्तचत्वारिंशत्तमः श्रीसोमप्रभसूरिः ॥ तस्य च संवत्१३१०वर्षे जन्म संवत्१३२१वर्षे व्रतं संवत् १३३२ वर्षे सूरिपदं । यः कंठगतैकादशांगसूत्रार्थः समासीत्, येन जलबहुलकुंकुणदेशे अप्कायविराधनाभयात् मरुदेशे शुद्धजलदौर्लभ्याच्च साधूनां विहारः प्रतिषिद्धः क्रमात् संवत् १३७३ वर्षे ते श्रीसूरयो दिवं गताः ।

(४८) श्रीसोमप्रभसूरिपट्टे अष्टचत्वारिंशत्तमः श्रीसोमतिलकसूरिः तस्य च संवत् १३५५ वर्षे जन्म संवत् १३६९ वर्षे दीक्षा सं० १३७३ वर्षे सूरिपदं संवत् १४२४ वर्षे एकोनसप्ततिवर्षायुः परिपाल्य स्वर्गः ॥४८॥

(४९) सोमतिलकसूरिपट्टे एकोनपंचाशत्तमः "श्रीदेवसुंदरसूरिः" तस्य च सं०१३९६वर्षे जन्म, सं०१४०४वर्षे व्रतं, सं०१४२० वर्षे सूरिपदं । श्रीदेवसुंदरसूरीणां च श्रीज्ञानसागरसूरयः श्रीकुलमंडनसूरयः श्रीगुणरत्नसूरयः श्रीसोमसुंदरसूरयः श्रीसाधुरत्नसूरयः अनेकग्रंथकर्तारः शिष्याश्चाऽभवन् ४९ ।

(५०) श्रीदेवसुंदरसूरिपट्टे श्रीसोमसुंदरसूरिः ॥ तस्य च संवत्-१४३०वर्षे जन्म, सं०१४३७वर्षे व्रतं, सं०१४५०वर्षे वाचकपदं १४५७ वर्षे सूरिपदं ॥ तथा १८शतसाधुपरिकरितं सत्क्रियापरं श्रीगुरुं-विलोक्य रुष्टैर्द्रव्यलिंगिभिरेकः शस्त्रधारिपुमान् पंचशतद्रव्यदानेन श्रीसूरिवधार्थं उदीरितः स च दुर्धिया वसतौ प्रविष्टो यावदनुचितकरणाय यतते तावच्चंद्रोद्योते जाते निद्रालुभिरपि श्रीगुरुभिः रजोहरणेन प्रमृज्य-पार्श्वं परावर्तितं तत्दृष्ट्वा अहोनिद्रायायपि क्षुद्रप्राणिषु कृपापरमेनं विराध्य कस्यां गतौ मे गतिरिति विचारणया परलोकभीतो गुरुपादयोर्निपत्य क्षमध्वं-मेऽपराधमिति वचसा गुरुं प्रबोध्य निजव्यतिकरं प्रोक्तवान्, सोपि श्रीगुरु-भिस्तथोदीरितो यथा स प्रवर्जितः इति वृद्धवचः । स च राणकपुरे श्रीधरण-विहारोपदेशकः संयममाराध्य सम्वत् १४९९ वर्षे स्वर्गभाक् ५० ।

(५१) श्रीसोमसुंदरसूरिपट्टे एकपंचाशत्तमः "श्रीमुनिसुंदरसूरिः" येनाष्टोत्तरशतहस्तमितो लेखः श्रीगुरूणां प्रेषितः, तथा च अष्टोत्तरशतवर्तु-लिकानादोपलक्षकः बाल्येपि सहस्त्राविधानधारकः सप्रभावं संतिकर मितिस्तवकरणेन योगिनीकृतमार्युपद्रवनिवारकः तस्य सम्वत् १४३६ वर्षे जन्म, सं १४४३ वर्षे व्रतं सम्वत् १४६६ वर्षे वाचकपदं सम्वत् १४७८ वर्षे ३२००० हेमटंकव्ययेन वृद्धनगरीय सं०देवराजेन सूरिपदं कारितं । सम्वत् १५०३ वर्षे स्वर्गः ॥५१॥

(५२) श्रीमुनिसुंदरसूरिपट्टे द्विपंचाशत्तमः "श्रीरत्नशेखरसूरिः" ॥ तस्य च संवत् १४५७वर्षे जन्म, संवत्१४६३वर्षे व्रतं, सं०१४८३वर्षे पंडितपदं सं०१४९३वर्षे वाचकपदं सं०१५०२वर्षे सूरिपदं सं०१५१७

वर्षे स्वर्गः तदानीं लुङ्काख्यातो लेखकात् संवत्१५०८वर्षे श्रीजिनप्रतिमोत्थापनपरं "लुङ्कामतं" प्रवृत्तं, तद्वेषधरस्तु सं०१५३८वर्षे जातः, तत्प्रथमो वेषधारी ऋषिभाणाख्यो ऽभूदिति ॥५२॥

(५३) रत्नशेखरसूरिपट्टे त्रिपंचाशत्तमः श्रीलक्ष्मीसागरसूरिः ॥

तस्य च सं०१४६४वर्षे जन्म, सं १४७०वर्षे दीक्षा सं०१४९६वर्षे पंडितपदं सं०१५०१ वर्षे वाचकपदं सं०१५०८वर्षे सूरिपदं सं०१५१७-गच्छनायकपदं ॥५३॥

(५४) श्रीलक्ष्मीसागरसूरिपट्टेचतुष्पंचाशत्तमः "श्रीसुमतिसाधुसूरिः"

(५५) श्रीसुमतिसाधुसूरिपट्टे पंचपञ्चाशत्तमः "श्रीहेमविमलसूरिः" यः क्रियाशिथिलसाधुसमुदाये वर्तमानोपि साध्वाचारं नातिक्रांतः तथाऋषिहानर्षिश्रीपतिऋषिगणपतिप्रमुखा लुङ्कामतमपास्य श्रीहेमविमलसूरिपार्श्वे-प्रव्रज्य तन्निश्रया चारित्रभाजो बभुवांसः। तथा संवत्१५६२वर्षे संप्रति साधवो न दृगपथमायांतीत्यादिप्ररूपणपरं "कटुकनाम्ना मतं" प्रवर्तितं, गृहस्थात् त्रिस्तुतिकमतवासितात् कटुकमतोत्पत्तिः। तथा १५७०वर्षे लुङ्कामतान्निर्गत्य विजयवेषधारिणा विजामतिनाम्ना मतं प्रवर्तितं। तथा संवत्१५७२ वर्षे नागोरीतपागणादुपाध्यायपार्श्वचन्द्रेण स्वनाम्ना मतं प्रकटितं॥५५॥

(५६) श्रीहेमविमलसूरिपट्टे षट्पंचाशत्तमः "श्रीआणंदविमलसूरिः" तस्य च संवत्१५४७वर्षे ईलादुर्गे जन्म सं०१५५२वर्षे व्रतं सं०१५७०वर्षे सूरिपदं। यः क्रियाशिथिलबहुसाधुजनपरिकरितोपि संवेगरंगभावितमतिः उत्सुत्रप्ररुपणापरायणजनसमूहं समालोक्य करुणारसावलिप्तमना गुर्वाज्ञया कतिचित् संविज्ञसाधुसहायः सं०१५८२वर्षे शिथिलाचारपरिहाररूपक्रियोद्धारयानपात्रेण तं भव्यजनं समुद्धृतवान्।

यो वादे जयी स नगरादौ स्थास्यति नान्य इतिसुराष्ट्राधिपतिनामांकितं लेखमादाय सुराष्ट्रे साधुविहारनिमित्तं यदियश्रावकः सुरत्राणदत्तपर्य्यस्तिकारोहः पातसाहिप्रदत्त "मल्लिकश्रीनगदल" विरुदः सा०तूणसिंहः श्रीआणंदविमल सूरीणां विज्ञप्तिं विधाय पन्यासजगर्षिप्रमुखसाधुविहारं कारितवान्।

तथा जेसलमेर्वादिमरुभूमौ जलदौर्लभ्यात् दुष्करोयमिति श्रीसोमप्रभसूरिभिर्विहारः पूर्वं सम्प्रतिषिद्ध आसित् सोपि विहारः कुमतव्याप्तिभिया जनानुकंपया च भुयो लाभहेतवे पुनरप्यनुज्ञातः श्रीसूरिणा तत्रापि प्रथमं वैराग्यनिधि निस्पृहावधिर्जावज्जीवंजघन्यतोपि षष्टतपोऽभिगृही पारणकेप्याचाम्लादितपोविधायी उपाध्याय श्रीविद्यासागरगणिर्विहृतवान् तेन च जेसलमेर्वादौ खरतरान् मेवातदेशे च वीजामतिप्रभृतीन् मरुदेशादौ लुम्पकादीन् प्रतिबोध्य वीरग्रामे पासचंद्रव्युद्ग्राहितं जनं च प्रतिबोध्य भूयान् जनो जैनधर्मं प्रापितः,एवं मालवकादिबहुदेशेषु विहृत्य वैराग्यवासिनो जनाः कृताः। तथाक्रियोद्धारकरणानन्तरं च श्रीआणंदविमलसूरयः चतुर्दशवर्षाणि जघन्यतोपि नियततपोविशेषं विहाय षष्ठतपो अभिग्रहेण चतुर्थषष्ठाभ्यां विंशतिस्थानकाराधनाद्यनेकविकृष्टतपःकारिणश्च सं० १५९६ वर्षे चैत्रशुदिसप्तम्यामाजन्मातिचाराद्याआलोच्य नवभिरुपवासैरहमदाबादनगरोपकंठे निजां पूरे (?) स्वर्गं प्राप्तः ॥५६॥

(५७) श्रीआणंदविमलसूरिपट्टे सप्तपंचाशत्तमः " श्रीविजयदानसूरिः" येन स्थंभतीर्थमहानगरेषु महामहोत्सवपुरस्सरमनेकजिनबिंबशतानि प्रतिष्ठितानि यदुपदेशेन पातसाहिमुहिम्मुदमान्येन मंत्रिगलराजेन षाण्मासिकां शत्रुंजयमुक्तिं कारयित्वा सकलनगरसङ्घसहितेन श्रीशत्रुंजययात्रा कृता, तथा यदुपदेशपरायणैः गंधारीयसा०रामजी—अहम्मदाबादसत्कसं० कुंअरजीप्रमुखैः श्राद्धैः श्रीशत्रुञ्जयोज्जयन्तगिर्योः जीर्णोद्धारो देवकुलिकाचतुर्मुखादयः कारिताः। तथा यः श्रीसूरिः जावज्जीवं घृतातिरिक्तविकृतिपंचपरिहारी अनेकवारैकादशांगपुस्तकशुद्धिकारः सर्वजनप्रसिद्धोभूत् तस्य च सं० १५५३ वर्षे जांमलाख्यनगरे सा० भामोसा—मातृभ्रमादे गृहे जन्म, त्रयो भ्रातरः, भागिनेयो विजयः × × लक्ष्मणकुंअर, सं० १५६२ वर्षे दीक्षा सं० १५८७ वर्षे सूरिपदं, संवत् १६२२ वर्षे वडालीनगरेऽनशनेन स्वर्गः ५७

(५८) श्रीविजयदानसूरिपट्टे अष्टपंचाशत्तमः"श्रीहीरविजयसूरिः"सं० १५८३ वर्षे प्राह्लादनपुरवास्तव्यउकेशज्ञातीयसा०कुंअरजीभार्यानाथीगृहे

जन्म, संवत्१५९६वर्षे कार्तिकवदि२दिने दीक्षा,सं०१६०७नारदपूर्यां पंडित पदं सं०१६०८वर्षे माघशुदि ५ दिने नारदपूर्यां वाचकपदं, सं० १६१० वर्षे सीरोहीनगरे सूरिपदं। तथा यैरनेकनगरेषु सहस्रशो बिंबानि प्रतिष्ठितानि तथा अहम्मदावादनगरे ऋषिर्मेघजीनामा स्वयं मतं परित्यज्य पंचविंशतिमुनिभिः सह श्रीगुरुचरणसेवापरो जातः। तथा श्रीगुरवः पातसाहि अकब्बरेण स्वनामांकितं फुरमानं प्रेष्य गंधारबंदिरात् श्रीआगरानगरासन्न फतेपुरनगरे समाहूताः सन्तः विहारं कुर्वंतः क्रमेण सम्वत् १६३९ वर्षे ज्येष्ठवदि१३त्रयोदशीदिने तत्र सम्प्राप्ता श्रीसाहिना समं मिलिताः साधिकप्रहरं यावत्तत्र धर्म्मगोष्ठीं कृत्वा श्रीसाहिना अनुजाता सन्तो महताडम्बरेणोपाश्रये समायाताः। तदानीं सकलोपि लोकः श्रीहीरसूरिसेवापरो जातः। तस्मिन् वर्षे श्रीआगरानगरे चातुर्मासकं कृतं तदनुश्रीगुरुभिः श्रीशोरीपुरयात्रां च कृत्वा आगरानगरे सा० मानसिंघकल्याणमल्लकारितश्रीचिंतामणिपार्श्वनाथबिंबं प्रतिष्ठितं पुनरपि फत्तेपुरनगरे समागत्य श्रीसूरयः पातसाहिना साकं मिलिताः तदवसरे धर्मवार्तया रंजितः पातसाहिः द्वादशदिवसामारिसत्कं फुरमानं स्वनामांकितं श्रीगुरूणां दत्तवान्, तदा च श्रीजिनधर्मोन्नतिर्महती जाता। तदवसरे श्रीमेडतीयसदारंगेण याचकेभ्यो मूर्तिमद्गजदानद्विपंचाशदश्वदानादिना दील्लिमंडले श्राद्धानां प्रतिगृहं सेरद्वयप्रमाणखंडलंभनिकाकरणादिना च श्रीगुरूणां प्रतिष्ठा महती संजाता। तथा प्रथमं चातुर्मासीकं श्रीआगरानगरे द्वितीयं फत्तेपुरे तृतीयं अभिरामावादे, चतुर्थंपुनरपि आगरानगरे एवं चतुर्मासकचतुष्टयं तत्र देशे कृत्वा, गुर्जरदेशसंघाग्रहात् मेडतादिनगरे विहारं कुर्वन्तो नागोरनगरे च चतुर्मासकं कृत्वा क्रमेण सूरयः श्रीसीरोहीनगरे समागताः तत्रापि प्रतिष्ठाद्वयं श्रीअर्बुदाचलतीर्थयात्रां च कृत्वा राजश्रीसूलतानजीकस्याग्रहवशात् श्रीसीरोहीनगरे चातुर्मासीकं स्थिताः। तदनु विहारं कुर्वंतः श्रीपाटणनगरे चातुर्मासकं चक्रुः

श्रीहीरसूरयः क्रमेण भव्यजीवान् प्रतिबोध्य च श्रीदीवबंदीरासन्न ऊनानगरे संवत् १६५२ वर्षे भाद्रवाशुदि ११ दिने स्वर्गं प्राप्ताः ॥५८॥

(५६) हीरविजयसूरिपट्टे एकोनषष्टितमः "श्रीविजयसेनसूरिः" तस्य च संवत् १६०४ वर्षे नारदपूर्यां ऊकेशज्ञातीयसा०कमाभार्याकोडमदेगृहे जन्म, संवत् १६१३ वर्षे दीक्षा, सं० १६२८वर्षे पंडितपदं, सं० १६२८ वर्षे फाल्गुन शुक्ल ७ दिने श्रीअहमदाबाद नगरे उपाध्याय पददानपूर्वकं सूरिपदं । तैश्च सं०१६३२वर्षे चांपानेरदुर्गे प्रतिष्ठा कृता, तथा श्रीसूरतिबंदरे श्रीभूषणनामा दिगंबराचार्यो निर्जितः ॥

तथा श्रीहीरविजयसूरिषु विद्यमानेषु आचार्यगुणगणानाकर्ण्य पातसाहिश्रीअकब्बरः श्रीआचार्यान् श्रीलाहोरनगरे समाकार्य श्रीहीरसूरीणांश्च कुशलप्रश्नं प्रपृच्छ, तत्र च श्रीसूरिवचनचातुरीरंजितः श्रीसाहिः श्रीसूरीणां"कालिसरस्वती"बिरुदं दत्तवान्। श्रीसाहेरत्याग्रहात् चातुर्मासकद्वयं विधाय शरीरबाधावशात् श्रीहीरसूरिभिराकारिता श्रीसाहिपादानापृच्छ्य श्रीसूरयः चातुर्मासिकमध्येपि चलंतः श्रीपाटणनगरे समागतास्तदा च संवत् १६५२ वर्षे श्री उंनानगरे श्रीहीरविजयसूरेश्च निर्वाणं समाकर्ण्य तत्रैवस्थिताःतत्र क्रमेण संवत् १६५४वर्षे श्रीशकंदरपूरे श्रीविजयचिंतामणि पार्श्वनाथबिंबस्थापनां विधाय लाडोलग्रामे सूरिमंत्राराधनं विधाय च श्रीस्थंभतीर्थे श्रीविजयदेवसूरिभ्यः सूरिपदं दत्वा श्रीपाटणनगरे गणाऽनुज्ञानंदि श्रीसूरयश्चक्रुः, तदा राजनगरवास्तव्यसा०सूराकेन प्रतिश्राद्धगृहं महंमूदिकालंभनिका चक्रे तस्मिन् संवत्सरे श्राद्धैर्लक्षमहंमुदिकाव्ययश्च कृतः एवमनेकभव्यजनान् प्रतिबोध्य पंचाशज्जिनप्रतिष्ठां च कृत्वा अष्टवाचकपदानि दत्वा सार्द्धशतपण्डितपदानि च दत्वा द्विसहस्रपरिकराः श्रीविजयसेनसूरयः स्थंभतीर्थे संवत् १६७१ वर्षे ज्येष्ठवदि११दिने स्वर्गं प्राप्ताः ॥५६॥

(६०) श्रीविजयसेनसूरिपट्टे षष्टितमः "श्रीविजयदेवसूरिः" तस्य च संवत् १६३४वर्षे ईडरदुर्गे उकेशजातीय सा०थिरा-भार्यारूपागृहे जन्म, संवत् १६४३ वर्षे दिक्षा, संवत् १६५५ वर्षे पन्यासपदं, संवत् १६५६ वर्षे सूरिपदं, तस्य च पदमहोत्सवे स्थंभतीर्थवासिश्रीमल्लकेन दशसहस्ररूप्यक

व्ययश्चक्रे, संवत्१६५८वर्षे पाटणनगरवासिपारिखसहस्रवीरेण पंचसहस्रमहमुंदिकाव्ययेन गणानुज्ञानंदिमहोत्सवः कृतः ॥

अत्रांतरे पातसाहि श्रीजिहांगिरः श्रीमंडपाचले समाकार्य श्रीजैनधर्मचर्चाश्रवणात् संतुष्टः सन् श्रीसूरीणां"महातपा"विरुदं दत्तवान्, तन्महोत्सवः सा०चंद्रकेन कृतः क्रमेण विहारं कुर्वन् साबलीनगरे सूरिमंत्राराधनं कृत्वा च कालांतरे ईडरनगरवासि सा०सहजूकृतमहोत्सवेन संवत्१६८२वर्षे श्रीविजयसिंहसूरिं श्रीगुरुः स्थापयामास । तदनु संवत् १६८४वर्षे जालोरनगरे मं०जयमल्लजीकेन श्रीविजयसिंहसूरीणां गणानुज्ञानंदिमहोत्सवश्चक्रे, क्रमेण श्रीउदयपुरे राणाश्रीजगसिंघजीअत्याग्रहात् चातुर्मासकं कृत्वा श्रीगुर्जरदेशे श्रीआचार्यसहिताः श्रीसूरयः समागताः । श्रीशत्रुंजयतीर्थ–यात्रां प्रतिष्ठां च कृत्वा, क्रमेण दक्षिणदेशे बर्हानपुरबीजापुरनगरादिसंघकृतमहोत्सवेन चातुर्मासचतुष्टयं श्रीसूरिः कृतवान्, तदनु संघाग्रहात् श्रीगुर्जरदेशमलंचकार ।

तस्मिन् समये "श्रीविजयसिंहसूरयोपि" मरुदेशादायाताः श्रीअह्म्मदाबादनगरे श्रीविजयदेवसूरिचरणान्नेमुः क्रमेण भव्यजीवान् प्रतिबोधयंतः श्रीसूरयः स्थंभतीर्थे चातुर्मासकं स्थितवांसः तस्मिन् समये श्रीविजयसिंहसूरिः शरीरबाधावशात् अहमदाबादनगरासन्ननवीनपुरे तस्थिवान्, तस्य च संवत्१६४४वर्षे श्रीमेडतानगरे उकेशज्ञातियसा०नथमल्ल–भार्यानायकदेगृहे जन्म । संवत् १६५४ वर्षे दीक्षा, संवत् १६७३ वर्षे वाचकपदं, संवत् १६८२ वर्षे सूरिपदं अष्टाविंशतिवर्षाणि गुरुसेवायां, संवत् १७०९ वर्षे आषाढशुदि२दिने स्वर्गगतिः ।

तदनु श्रीपरमगुरुः गंधारबंदिरे समेत्य श्रीराजनगरादिसंघाग्रहात् स्वपट्टे श्रीविजयप्रभसूरिं संस्थाप्य श्रीसुरतबंदिरे चातुर्मासकं तस्थौ, क्रमेण भव्यजीवान् प्रतिबोधयंतः श्रीआचार्यसहिताः श्रीगुरुवः सौराष्ट्रदेशसंघाग्रहात् श्रीशत्रुंजयतीर्थयात्रां कृत्वा श्रीदीवबंदिरासन्नउंनानगरे समेताः तत्र च संवत् १७१३ वर्षे आषाढशुदि११दिने स्वर्गं प्राप्तः ।

(६१) श्रीविजयदेवसूरिपट्टे एकषष्टितमः श्रीविजयप्रभसूरिः ॥ तस्य च संवत् १६७७ वर्षे कच्छदेशे मनोहरपुरे उकेशज्ञातीयसा० शिवगण भार्याभाणबाइगृहे जन्म, संवत् १६८६ वर्षे दिक्षा, संवत्१७०१वर्षे पन्यासपदं संवत्१७१०वर्षे गंधारबंदरे सूरिपदं, श्रीराजनगरीय सा० अषइदेवचंद्रभार्यासाहिबदेनाम्न्या श्राविकया पदमहोत्सवः कृतः, श्रीसूरिभिः देवतोपदेशात् "श्रीविजयप्रभसूरि" रितिनाम सप्रत्ययं प्रदत्तं । तदनु सूरयः श्रीआचार्यसहिताः संवत् १७११ वर्षे श्रीराजनगरे समागतास्तत्र चतुर्मासके समुत्तिर्णे सा० सूरारतन–सूरासाधनजीकेन बहुद्रव्यव्ययकरणपूर्वकं गणानुज्ञानंदिमहोत्सवः कृतः । क्रमेण संवत्१७१३वर्षे श्रीपरमगुरुचरणसेवां कुर्वंतः श्रीविजयप्रभसूरयः सौराष्ट्रदेशं समलंचक्रुः, तत्र चातुर्मासदशकं कृत्वा सं० १७२२ वर्षे गुर्जरदेशे समायाता स्तत्र चातुर्मासत्रयं कृत्वा सं० १७२६ वर्षे श्रीउदयपुरनगरे समागताः ।

उदयपुरवास्तव्यसा० जीवोजावरीओ (ए) प्रासाद कराव्यो, तेनी प्रतिष्ठा करावी, बहुद्रव्यव्ययः कृतः ।

ततस्तद्देशे चतुर्मासद्वयं कृत्वा श्रीमरुदेशं समलंचक्रुः । श्रीसूरयः संवत् १७३२ वर्षे श्रीनागोरनगरे पालणपुरवास्तव्यउकेशज्ञातियसा०हीराभार्याहीरादेपुत्ररत्नं श्रीविजयरत्नसूरिं स्वपट्टे संस्थाप्य श्रीमेडतानगरे चातुर्मासकं तस्थौ ।तदनु क्रमेण भव्यजीवान् प्रतिबोध्य मेवाडमेवातमरुदेशे विहृत्य च संवत् १७३८ वर्षे गूर्जरदेशसंघाग्रहात् श्रीपाटणनगरे चातुर्मासं समागताः । संप्रतिकाले अभिनवगौतमावताराः साक्षात्कल्पतरुरूपाः सकलपरिवारविराजमानाश्च सकलसंघकल्याणमालाभ्युदयप्रदा भवंतु ।

आचार्यश्रीविजयरत्नसूरिसिंहानां द्विधापि स्वभ्रातृ पं० श्रीविमलविजयगणिवाचनाकृते पट्टावलीसारोद्धारः समुद्धृत उ०श्रीरविवर्द्धनगणिभिरिति मंगलं । इति श्रीपट्टावलीसंपूर्णं लिखितं श्रीपाटणनगरे श्रीपार्श्वनाथप्रसादात् श्रीरस्तु । *अथ अनुपूर्त्तिः —*

५९—श्रीविजयसेनसूरिः ॥ ६०—राजसागरसूरिः ॥ ६१—वृद्धिसागरसूरिः ॥ ६२—लक्ष्मीसागरसूरिः ॥ ६३—कल्याणसागरसूरिः ॥

श्रीगुरुपट्टावली

[कर्ता]

श्रीमगसीश्वराय नमः । अथाऽत्र श्रीपर्यूषणापर्वणि समागते चतुर्मासस्था मुनयो मांगलिकं पर्यूषणाकल्पनामाध्ययनं पंचदिनानि वाचयन्ति ॥ तद्वाचनादनु च सर्वं हि कार्यं मुखमध्याऽन्त्यकृतमंगलं सत् सुखाय भवति ततोऽत्रापश्चिममंगलार्थं गुरुपरिपाटी वर्णनीया एतद्वर्णनस्योत्कृष्टतममंगलत्वात् । अत एव सर्वं धर्मानुष्ठानादि गुर्वाज्ञासंयुक्तं मोक्षफलदं स्यादतोगुरुपर्वक्रमलक्षणसम्बन्धज्ञापनाय पट्टावली वाचनीयैव ॥

तत्रार्हतां चरमः श्रीवर्द्धमानो भगवान् तीर्थंकर एव गुरुपाटीमूलं ॥ तस्मात्पूर्वं भगवतः स्वयंबुद्धत्वात् अन्यस्य गुरोरभावात् ॥ स च भगवान् त्रिंशद्वर्षाणि ३० गृहस्थपर्याये, सार्द्धद्वादश१२वर्षाणि छद्मस्थावस्थायां, त्रिंशत्३०वर्षाणि केवलित्वे, सर्वायुः साधिकद्वासप्तति७२वर्षाणि प्रपाल्य, सिद्धः परिनिबृत इति ॥

तत्पट्टे १ श्रीसुधर्म्मास्वामी पञ्चमगणधरः प्रथमोदयस्य प्रथमाचार्यो बभूव । स च पंचाशत् ५० वर्षाणि गृहे त्रिंशद्वर्षाणि ३० वीरसेवायां ततः श्रीवीरनिर्वाणात् द्वादशवर्षाणि छाद्मस्थ्ये अष्टौ वर्षाणि केवलित्वे सर्वायुः शतमेकं प्रपाल्य श्रीवीरात् त्रिंशतिवर्षैः सिद्धः ॥

तत्पट्टे २ श्रीजंबूस्वामी । येन राजगृहे ऋषभदत्तधारिण्योः सुतेन संजातवैराग्यान्नवनवति९९कोटिसंयुक्ताअष्टौ कन्यकास्त्यक्ताः पंचशतचौराः प्रभवादिः अष्टौ कन्यास्तन्मातृपितरः स्वमातृपितरौ एवं पंचशतसप्तविंशति ५२७ जनसंगे दीक्षा गृहिता । षोडश१६वर्षाणि गृहे, विंशति २० वर्षाणि व्रते चतुश्चत्वारिंशत् ४४ वर्षाणि युगप्रधानभावे । सर्वायुर्८०रशीति वर्षाणि प्रपाल्य श्रीवीराचतुःषष्टि६४वर्षांते सिद्धः ।

तदा मनःपर्यवज्ञानं १ परमावधिज्ञानं २ पुलाकलब्धिः ३ आहारक शरीरं ४ क्षपकश्रेणिः ५ उपशमश्रेणिः ६ जिनकल्पिमार्गः परिहारविशुद्धि-चारित्र १ सूक्ष्मसम्पराय २ यथाख्यात ३ रूपसंयमत्रयं ८ केवलज्ञानं ९ मोक्षगमनं १० एते दशपदार्था अत्र भरते व्युछिन्नाः।

तत्पट्टे ३ श्रीप्रभवस्वामी। स च त्रिंशद्वर्षाणि ३० गृहे चतुश्चत्वारिंशत् ४४ वर्षाणि व्रते एकादश ११ वर्षाणि युगप्रधानभावे सर्वायुः पञ्चाशीति ८५ वर्षाणि प्रपाल्य श्रीवीरात् ७५ पंचसप्ततिवर्षे स्वर्ययौ। (नवनंद इणांकै वारै)

तत्पट्टे ४ श्रीशय्यंभवस्वामी। स च स्वगृहे यज्ञं कुर्वाणः पंचशतद्विजैः "अहोकष्टमहोकष्टं तत्वं न ज्ञायते कचिदिति" साधुवचः श्रुत्वा यज्ञस्तंभाधःस्थितश्रीशांतिजिनबिंबदर्शनाद् बुद्धः। अष्टाविंशतिवर्षाणि गृहे स्थित्वा व्रतं ललौ। एकादश ११ वर्षाणि व्रते त्रयोविंशतिवर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुर्द्वाषष्टि ६२ वर्षाणि प्रपाल्य श्रीवीरात् ९८ वर्षातिक्रमे स्वर्ययौ।

अनेन भगवता मनकनाम्नः स्वसुतस्य पठनाय दशवैकालिकं कृतं।

तत्पट्टे ५ श्रीयशोभद्रस्वामी। स च २२ वर्षाणि गृहे १४ वर्षाणि व्रते ५० वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः षडशीति ८६ वर्षाणि प्रपाल्य श्रीवीरात् १४८ वर्षांते स्वर्ययौ।

तत्पट्टे ६ श्रीसम्भूतिविजयस्वामि–श्रीभद्रबाहुस्वामिनौ एतौ द्वौ षष्टपट्टधरौ बभूवतुः तत्र प्रथमः ४२ वर्षाणि गृहे ४० वर्षाणि व्रते अष्टौ वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुर्नवति ९० वर्षाणि परिपाल्य स्वर्ययौ।

भद्रबाहुस्वामी पुनः श्रीआवश्यकादिनिर्युक्तिकृत्। तद् भ्राता वराहमिहरस्त्यक्तव्रतो राज्ञःपुरोहितो राज्ञः पुरोनिमित्तप्रकाशाद्यैः प्राप्तप्रतिष्ठः तद्भ्रातुःपराजयकरणे सभासमक्षं ५१ पलप्रमाणो मत्स्यः कुण्डप्रान्ते पतिष्यति गुरुर्वक्ति ५२ पलप्रमाणो मत्स्यः कुण्डमध्ये पतिष्यति जिनशासनप्रभावात् गुरुवाक्यमेव सञ्जातं राजाऽपि शासनोत्सवं चकार। ततोऽसौ वराहमिहिरो मानभ्रष्टो मृत्वा व्यंतरीभूतः श्रीसङ्घमुपदद्राव, तज्ज्ञात्वा च भगवता

उपसर्गहरस्तोत्रकरणेन स उपद्रवो निवारितः । स भगवान् ४५ वर्षाणि गृहे सप्तदश१७वर्षाणि व्रते चतुर्दश१४वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः षड्सप्तति७६वर्षाणि प्रपाल्य श्रीवीरात् १७० वर्षे स्वर्ययौ ।

तत्पट्टे ७ श्री स्थूलभद्रस्वामी पूर्वपाठी १० पूर्वाणि अर्थतः ४ पूर्वाणि सूत्रतो अधीतवान् । ३० वर्षाणि गृहे २४वर्षाणि व्रते ४५ वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुर्नवनवति९९वर्षाणि प्रपाल्य श्रीवीरात् २१५वर्षे स्वर्ययौ ।

तत्पट्टे ८ श्रीआर्यमहागिरि–आर्यसुहस्तिनामानौ उभौ अष्टमपट्टधरौ जातौ। तत्र प्रथमस्य त्रिंशद्वर्षाणि गृहे चत्वारिंशद्व्रते त्रिंशत् युगप्रधानत्वे सर्वायुः शतवर्षाणि ।

द्वितीयेनाऽऽर्यसुहस्तिना पूर्वभवे कश्चिद्द्रमकः प्राव्राजितः, स च मृत्वा सम्प्रतिराजस्त्रिखंडपतिर्जज्ञे स प्रतिबुद्धः सन् सपादकोटिबिंब—सपादलक्षनव्यजिनप्रसाद—३६सहस्रजीर्णोद्धार—९५सहस्रपित्तलमयबिंब—७००सप्तशतदानशालाप्रभृतिसुकृतकृत्यैः श्रीजिनशासनं प्राभावयत् ।

श्रीसुस्थितसूरिः त्रिंशद्वर्षाणि गृहे चतुर्विंशति२४वर्षाणि व्रते ४६व० युगप्रधानत्वे चेऽति सर्वायुः शतमेकं परिपाल्य श्रीवीरात् २९१ वर्षे स्वर्ययौ +

तत्पट्टे ९ श्रीसुस्थितसूरि–श्रीसुप्रतिबद्धसूरी जातौ। नवमे पट्टे कोटिवारं सूरिमंत्रजापात् तदा कोटिकनाम्ना द्वितीयं नाम गच्छस्य जातं, पूर्वं निर्ग्रंथ इति नाम आसीत् ।

एतद्वारके बलिस्सहशिष्यः स्वातिवाचकस्तत्वार्थसंग्रहग्रन्थकारी । तच्छिष्यः कालकाचार्यः प्रज्ञापनासूत्रकृत् । श्रीवीरात् ३७६ वर्षे स्वर्ययौ ।

तत्पट्टे १० श्री इन्द्रदिन्नसूरिः

अत्रांतरे वीरात्४५३वर्षे भृगुकच्छे आर्यखपटसूरिः ।

+ टिप्पनकम्—अवंतीसुकुमालदीक्षामृतिस्थाने देवकुलं क्रमेण महाकालेति नाम संजातं ।

वीरात् ४५३ वर्षे कालिकाचार्यः सर्वसङ्घमान्यः गर्द्दभिल्लविद्याभेदकारी येन पंचमीतः चतुर्थ्यां पर्यूषणापर्व स्थापितं ।

४६७ वर्षे आर्यमंगुवृद्धवादिपादलिप्तश्रीसिद्धसेनाद्याचार्या बभुवुः ।

संवत्सरकृद्विक्रमराजोपि । तद्राज्यं चैवं—यदा श्रीवीरः सिद्धस्तदा तद्दिन एव पालकराजा राज्येऽभिषिक्तः । तद्राज्यं ६०वर्षाणि, ततो ६ नन्दराज्यं १५५वर्षाणि, १०८वर्षाणि ततो मोरिअराजराज्यं, ततः पुष्पमित्रस्य त्रिंशद्वार्षाणि ३० राज्यं, ततो बलमित्रयोःषष्टि६०वर्षाणि राज्यं, ततः ४०वर्षाणि नभःसेनराज्यं, ततः १३वर्षाणि गर्द्दभिल्लराज्यं, ततः शकस्य ४वर्षाणि राज्यं । एवं सर्वमीलने श्रीवीरात् ४७० वर्षे विक्रमादित्यराज्यं । तथा श्रीसिद्धसेनदिवाकरेणोज्जयिनीनगर्य्यां महाकालप्रसादे लिंगस्फोटनं विधाय स्तुत्या ११ काव्ये श्रीपार्श्वबिंम्बं प्रगटीकृतं, कल्याणमन्दिरस्तोत्रं कृतं ।

तत्पट्टे ११ दिन्नसूरिः । तत्पट्टे १२ श्रीसिंहगिरिसूरिः ।

तत्पट्टे १३ श्रीवज्रस्वामी । यो बाल्येपि जातिस्मृतिभाक् अधीतैकादशांगः नभोगमनविद्यया संघरक्षाकृत् दक्षिणस्यां बौधराज्ये जिनपूजार्थं पुष्पानयनेन तीर्थप्रभावको देवाभिवन्दितो दशमपूर्वविदामऽपश्चिमो बभूव । स च वीरात् ४९६वर्षान्ते विक्रमात् षडविंशतिवर्षे जातः सन् अष्टौ वर्षाणि गृहे ४४व्रते ३६वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुरष्टाशीति८८वर्षाणि परिपाल्य वीरात् ५८४वर्षांते विक्रमात् चतुर्दशाधिकशतवर्षे स्वर्ययो । दशमपूर्वं तूर्यसंहननतूर्यसंस्थानव्युच्छेदस्तदाऽजनिष्ट । वज्रशाखाप्यऽतः प्रववृते तदा ५७० वर्षे जावडिकृतोद्धारः ।

तत्पट्टे १४ श्रीवज्रसेनसूरिः स च दुर्भिक्षे श्रीवज्रस्वाम्याज्ञया सोपारके परवने गत्वा जिनदत्तगृहे ईश्वरीनाम्न्या भार्यया दुर्भिक्षभयाल्लक्षपाकभोज्ये विषक्षेपादिकारणे निवेदिते प्रातः सुकालो भावीत्युक्त्वा विषनिक्षेपं निवार्य्य नागेन्द्र १ चन्द्र २ निवृति ३ विद्याधरा ४ ख्यान् चतुरः सकटुबेभ्यपुत्रान् प्राव्राजितवान् तेभ्यश्चत्वारि कुलानि जज्ञिरे ।

स वज्रसेनो ६ वर्षाणि गृहे ११६व्रते त्रीणि वर्षाणि युगप्रधानत्वे सर्वायुः साष्टाविंशतिशतं प्रपाल्य वीरात् ६२० वर्षांते स्वर्गभाक् बभूव ।

तदा ६०६ वर्षे विक्रमात् १३६ वर्षे दिगम्बरसम्प्रदायोत्पत्तिः ।

तत्पट्टे १५ श्रीचंद्रसूरिस्तस्माच्चंद्रकुलं, "चन्द्रगच्छे"ति तृतीयं गच्छनाम संजातं क्रमादनेकगुणहेतवो अनेकसूरयो बभुवुः ।

तत्पट्टे १६ श्रीसामंतभद्रसूरिः । अस्य देवकुलादिष्ववस्थानाल्लोकैर्वनवासीति नाम कृतं ततो गच्छनाम तूर्यं "वनवासी"ति प्रवृत्तं ।

तत्पट्टे १७ श्रीवृद्धदेवसूरिः । तत्पट्टे १८ श्रीप्रद्योतनसूरिः ।

तत्पट्टे १९ श्रीमानदेवसूरिः । अस्य सूरिपदे स्कंधोपरिवाग्देवीलक्ष्म्यौ वीक्ष्य, चारित्रादस्य भ्रंशो भावीति विषण्णं विषवादप्राप्तं गुरुं विज्ञाय, भक्तकुलभिक्षाः सर्वा विकृत्यश्च येन त्यक्ताः । तत्तपसा नड्डुलपुरे पद्मा १ जया २ विजया ३ अपराजिताख्या ४भिर्देवीभिः सेवितं गुरुं दृष्ट्वा सर्वे जनाः धर्मप्रशंसां चक्रुः ।

तत्पट्टे २० मानतुङ्गसूरिः। येन बाणमयूरपंडितविद्यातिशयेन रंजितजनात् जैननिन्दां श्रुत्वा प्रभावनायै अष्टचत्वारिंशद्गुप्तातिगुप्ततमवरकमध्यस्थेनाऽऽकंठशृंखलबद्धेन भक्तामरस्तवनकरणात् गतबन्धनेन बहिरागत्य-चमत्कृतो नृपः प्रतिबोधितः । नमिऊण इत्यादिस्तवेन नागराजो वशीकृतः ।

तत्पट्टे २१ वीरसूरिः ॥ तत्पट्टे २२ जयदेवसूरिः ॥
तत्पट्टे २३ श्रीदेवानन्दसूरिः ॥ तत्पट्टे २४ श्रीविक्रमसूरिः ॥
तत्पट्टे २५ श्रीनरसिंहसूरिः ॥ तत्पट्टे २६ श्रीसमुद्रसूरिः ॥

तत्पट्टे २७ श्रीमानदेवसूरिः। तदा श्रीवीरात् वर्षसहस्रे गते सत्यमित्रसूरेः पूर्वविद्याव्यवच्छेदोभूत् तथा विक्रमात् ५८५ वर्षे चतुश्चत्वारिंशदुत्तरचतुर्दशशत १४४४ प्रकरणकृत् श्रीहरिभद्रसूरिः स्वर्गतः । तत्काले च श्रीकालिकाचार्योपि बभूव, येन ९९३ वर्षे पंचमीतश्चतुर्थ्यां पर्वानीतमिति ।

तत्पट्टे २८ श्रीविबुधप्रभसूरिः ।

तत्पट्टे २९ जयानन्दसूरिः देवाप्रभो०स्तोत्र कोधो(कृतं) ॥ तत्पट्टे ३० श्रीरविप्रभसूरिः।वीरात् १२७२ वर्षे अणहिलपुरपाटणस्थापना कृता।

तत्पट्टे ३१ श्रीयशोदेवसूरिः।

आमराजप्रबोधकश्रीबप्पभट्टसूरिः विक्रमात् ८८५ वर्षे स्वर्ययौ। तत्पट्टे ३२ प्रद्युम्नसूरिः। तत्पट्टे ३३ श्रीमानदेवसूरिः लघुशान्तिकर्ता।

तत्पट्टे ३४ विमलचन्द्रसूरिः।

तत्पट्टे ३५ उद्योतनसूरिस्तेनार्बुदाचले विस्तीर्णवटवृक्षाधः श्रीसर्वदेवसूरीणां स्वपट्टे स्थापने कृते वडगच्छ इति पंचमं नाम गणस्य जातं।

तत्पट्टे ३६ सर्वदेवसूरिः। उत्तराध्यनटीकाकृता (श्रीशांतिसूरिभिः) विक्रमात् १०९८ वर्षे धर्मघोषसूरिः (येन) विमलमंत्रीश्वरःप्रबोधितः।

धनपालःशोभनस्तुति(टीका)कर्त्ता श्रीवीरात् १४९९ वर्षे स्वर्गं ययौ।

तत्पट्टे ३७ श्रीदेवसूरिः। तत्पट्टे ३८ सर्वजयदेवसूरिः।

तत्पट्टे ३९ यशोभद्रसूरिः। नडुलाईमध्ये जिनालयं लात्वा स्थितः।

तत्पट्टे ४० सर्वदेवसूरिः विक्रमात् ११३९ वर्षे नवांगवृत्तिकृद् अभयदेवसूरिः स्वर्गं गतः × ततःमुनिचंद्रसूरिः ÷ एतद्वारके स्वगुरुभ्राता श्री-

---

÷ टिप्पनकम्ः—श्रीवीरात् + + राज्ये सं० ११३३ साल में काल पडियो। सं० + + लगे कोइ आचार्य हुओ नहीं। फिर मुनिचंद्रसूरि हुये, जिनोने सिद्धांत देखकर प्रवर्ते ॥

× "श्रीअभयदेवसूरिः" चंद्रकुलावतंसानां श्रीजिनेश्वरसूरीणां श्रीबुधिसागरसूरीणां शिष्यः तस्य वि० १०७२ वर्षे जन्म, वि०सं०१०८८वर्षे सूरिपदं वि०सं०११३५ मतांतरेण ११३९ वर्षे स्वर्गमनं। तत्कृतग्रन्थाः—नवांगानां वृत्तयः (सं०११२०–११२८), औपपातिकवृत्तिः, प्रज्ञापना तृतीयपदसंग्रहणी (गा०१३३ वृत्तिः, पंचाशकवृत्तिः (सं० ११२४) जिनचंद्रगणिकृतनवतत्वप्रकरणभाष्यं,(वृत्तिः) देवेंद्रसूरिकृतसत्तरीग्रन्थभाष्यं (षट्टीका), पंचनिग्रन्थीप्रकरणं, जयतिहुअण स्तोत्रं, आराधनाकुलकं इत्याद्याः—अयंसूरिः कस्य भगवतःशिष्यः तन्निश्चेतुं न शक्यते ॥ तद्यथा—

चन्द्रप्रभसूरिः सं० ११५६ वर्षे पूर्णिमापाक्षिकं (पूनमियागच्छं) प्ररुपितवान्। तत्समये कूर्चपुरगच्छीयचैत्यवासिश्रीजिनेश्वरसूरिशिष्यो जिनवल्लभनामा चित्रकूटे षष्ठकल्याणप्ररूपणया ऽविधिसङ्घं स्थापितवान् तत्सम्प्रदायः खरतर इति व्यवह्रीयते विक्रमात् १२०४ वर्षे जातः।
मुनिचन्द्रसूरिः अनेकग्रन्थकर्ता अभूत् निर्मलचारित्रं प्रपाल्य स्वर्गं ययौ।

१—श्रीस्थानांगसूत्र—वृत्तिः (श्लो० १४२५०) तच्चन्द्रकुलीनप्रवचनप्रणीताप्रतिबद्धविहारहारिचरितश्रीवर्धमानाभिधानमुनिपतिपादोपसेविनः प्रमाणादिव्युत्पादनप्रवणप्रकरणप्रबन्धप्रणायिनः प्रबुद्धप्रतिबन्धप्रवक्तृप्रवीणाऽप्रतिहतप्रवचनार्थप्रधानवाक्प्रसरस्य सुविहितमुनिजनमुख्यस्य श्रीजिनेश्वराचार्यस्य तदनुजस्य च व्याकरणादिशास्त्रकर्त्तुः श्रीबुद्धिसागराचार्यस्य चरणकमलचञ्चरीककल्पेन श्रीमदभयदेवसूरिनाम्ना मया महावीरजिनराजसन्तानवर्त्तिना महाराजवंशजन्मनेव, संविग्नमुनिवर्गश्रीमदजितसिंहाचार्यान्तेवासियशोदेवगणिनामधेयसाधोरुत्तरसाधकस्येव, विद्याक्रियाप्रधानस्य साहाय्येन समर्थितं। (सं० ११२०)।

२—श्रीज्ञाताधर्मकथांगवृत्तिः ॥ ग्रं०३८०० ॥ (सं०११२०)

तस्याचार्य "जिनेश्वरस्य" मदवद्वादिप्रतिस्पर्धिनः।
तद्बंधोरपि "बुद्धिसागर" इति ख्यातस्य सूरेर्भुवि ॥
छन्दोबन्धनिबन्धबन्धुरवचः शब्दादिसल्लक्ष्मणः।
श्रीसंविग्नविहारिणः श्रुतनिधेश्चारित्रचुडामणेः ॥८॥
शिष्येण "ऽभयदेवाख्य" सूरिणा विवृतिः कृता ॥
ज्ञाताधर्मकथाङ्गस्य श्रुतभक्त्या समासतः ॥६॥

३—श्रीऔपपातिकवृत्तिः। (श्लो० ३१२५) सं० ११२०

चन्द्रकुलविपुलभूतलयुगप्रवरवर्धमानकल्पतरोः।
कुसुमोपमस्य सूरेः गुणसौरभभरितभवनस्य ॥१॥
निस्सम्बन्धविहारस्य सर्वदा श्रीजिनेश्वराह्वस्य।
शिष्येणाभयदेवाख्यसूरिणेयं कृता वृत्तिः ॥२॥

तत्पट्टे ४१ अजितदेवसूरिः एतद्गुरुभ्रात्रा श्रीवादिदेवसूरिणा अणहिल्लपत्तने जयसिंहदेवस्य राजसभायां चतुरशीतिवादे लब्धयशा दिगम्बराचार्यः कुमुदचन्द्रो वादे निर्जित्य पत्तने अद्यापि दिगम्बरप्रवेशो निवारितः । विक्रमात् १२०४ वर्षे फलवर्धिग्रामे बिंबप्रतिष्ठा कृता । ८०००० सहस्र प्रमाणस्याद्वादरत्नाकरनामा तर्कग्रन्थः कृतः, एतेषां विक्रमात् १२२६ श्रावणसिते स्वर्गः । तथैतत्समये श्रीदेवचन्द्रसूरिशिष्यस्त्रिकोटिग्रंथकर्ता हेमचन्द्रसूरिर्जज्ञे ऽस्य विक्रमतः११४५वर्षे कार्तिक१५दिने जन्म, सं० १२२६ वर्षे स्वर्गं, तथा येन सं० १२१४ हेमनाममालाकृता, कुमारपालराजा प्रतिबोधितः पूर्णतलगच्छं स्थापितं । तस्याग्रे मुखवस्त्रिका श्राद्धस्य न योग्येति कृत्वांचलेन वंदनकदानादांचलिकगच्छस्थितिः प्रादुर्भूता । तथा विक्रमात् १२३६ सार्द्धपौर्णिमीयकोत्पत्तिः सं० १२५० आगमिकसम्भवः । श्रीवीरात् १६६२ वर्षे बाहडोद्धारः ।

तत्पट्टे ४२ विजयसिंहसूरिः

तत्पट्टे ४३ सोमप्रभसूरिः श्रीमणिरत्नसूरिः द्वौ पदधरौ । अस्यवारके वस्तुपालतेजपालयोः१२६२जन्म (येन) सिद्धाचलयात्रा कृता, अर्बुदाचले चैत्यालयं कारापितं १८ कोडिरजतलग्नेन, अद्यापि तीर्थप्रवृत्तिरस्ति ।

तत्पट्टे ४४ "जगच्चन्द्रसूरिः" स्वयं वैराग्यरससागरः जावज्जीवं आचाम्लतपोभिग्रहात् द्वादशवर्षे लाहडराणैः तपाबिरुदमाप्तवान् ततः षष्ठं-नाम"तपागच्छे"ति प्रसिद्धं जातं सं० १२८५ । ×

तत्पट्टे ४५ श्रीदेवेंद्रसूरि; कर्मग्रन्थश्राद्धदिनकृत्यवृत्त्यादिग्रन्थकृत् एतत्तीर्थात् विजयचन्द्रसूरेर्वृद्धशालायां द्वादशवर्षाणि यावदेकत्रस्थितात् "वृद्धशालिकनाम्ना"सम्प्रदायोऽभूत् श्रीदेवेंद्रसूरिभिः प्रह्लादनपुरे सं०१३२३ श्रीविद्यानन्दसूरयः स्वपदे निवेशिताः श्रीगुरवो विक्रमात् १३२७ स्वर्ययुः

× पद्मावतीवचनतो ऽभ्युदयं विभाव्य । यत्सूरये स्तवनसप्तशतीं स्वकीयाम् ॥
सूरिर्जिनप्रभ उपप्रददे प्रथायै । सो ऽयं सतां "तपगणो"न कथं प्रशस्यः ॥१॥

दैवयोगात् विद्यानन्दसूरयोपि त्रयोदशदिनांतरिताः स्वर्ययुः। ततः षड्भिर्मासैः सगोत्रिणा श्रीधर्मकीर्त्युपाध्यायानां "श्रीधर्मघोषसूरि" रिति नाम्ना सूरिपदं दत्तं। ÷

तत्पट्टे ४६ श्रीधर्मघोषसूरिः। अनेन भगवता एकदा कश्चित् क्षुल्लकप्रव्राजितः स गुटिकाप्रयोगेण योगिभिर्भावितः कफोणिकामदर्शयत् तदा योगिभिरपि क्षुल्लकभापनार्थं दंता दर्शिताः साधुभिस्तैर्मन्त्रप्रयोगेण निराकृतस्तदा तैरुपाश्रये मूषका विकुर्विता गुरुभिर्घटमुखं वस्त्रेण छाद्य तथा जप्तं यथा राटिं विकुर्व्वन् वृद्धयोगी आगत्य पादयोर्लग्नः इत्यादयो भूयांसो व्यतिकरास्तत्कृतग्रन्थाश्च सङ्घाचाराद्यास्ते च विक्रमात् १३५७ दिवं गताः।

तत्पट्टे ४७ सोमप्रभसूरिः। विक्रमात् १३७३ वर्षे अस्य स्वर्गः।

अन्यत्र क्वापि पुरे यात्रावतीर्णं देवतयोक्तं "यत्तपाचार्यः सौधर्मेंद्रसामानिकत्वेन समुत्पन्न" इति।

तत्पट्टे ४८ सोमतिलकसूरिः। तस्य विक्रमात् १४२४ वर्षे स्वर्गः। सर्वायुरेकोनसप्तति ६९ वर्षाणि।

÷ देवेन्द्रसूरिणा करालकलिकालपातालतलावमज्जद्विशुद्धधर्मधुरोद्धरणधुरीणश्रीमज्जगच्चन्द्रसूरिचरणसरसीरुहचंचरीककल्पेन लिखितमक्षरविन्यासीकृतं।

क्रमात्प्राप्त"तपाचार्ये"त्यभिख्या भिक्षुनायकाः।
समभूवन् कुले चान्द्रे श्रीजगच्चन्द्रसूरयः ॥४॥
जगज्जनितबोधानां तेषां शुद्धचरित्रिणाम्।
विनेयाः समजायन्त "श्रीमद्देवेन्द्रसूरयः ॥५॥
स्वान्ययोरुपकाराय श्रीमद्देवेन्द्रसूरिणा।
स्वोपज्ञशतकटीका सुबोधेयं विनिर्ममे ॥६॥
विबुधवर"धर्मकीर्ति"श्री"विद्यानन्द"सूरिमुख्यबुधैः।
स्वपरसमयैककुशलैस्तदैव संशोधिता चेयम् ॥७॥

इति स्वोपज्ञकर्म्मग्रन्थप्रशस्तौ ॥

तत्पट्टे ४९ देवसुन्दरसूरिस्तेषां शिष्याः-श्रीज्ञानसागरसूरिः "श्री कुलमण्डनसूरिः" प्रमुखा विद्वांसः क्रियापरायणा विविधग्रंथकृतो बभुवुः।

तत्पट्टे ५० सोमसुन्दरसूरिः प्राग्वंशी राणपुरप्रतिष्ठाकृत् पालणपुरे भगिन्या सह संयमं जग्राह।

तत्पट्टे ५१ मुनिसुन्दरसूरिः कृष्णसरस्वतीविरुदभृत्, संविग्नमौलिरध्यात्मकल्पद्रुम-सन्तिकरादिग्रंथकृत्। विक्रमात् १५०३ वर्षे स्वर्ययौ।

तत्पट्टे ५२ श्रीरत्नशेखरसूरिः अस्य १४५७ वर्षे जन्म १४६३ व्रतं १४८३ पंडितपदं १४९३ वाचकपदं १५०३ सूरिपदं सं० १५१७ पोस-वदि, ६ दिनेस्वर्ययौ। एतत्कृता ग्रन्थाश्च श्राद्धविध्यादयस्तदा लुम्पकाख्यलेखकात् विक्रमतः १५०८ वर्षे लुङ्कामतं प्रवृत्तं, तन्मतवेषधरास्तु १५३३ वर्षे जाताः।

तत्पट्टे ५३ लक्ष्मीसागरसूरिः। तस्य विक्रमात् १४६० (६४) वर्षे जन्म १४७० दीक्षा, १४९६ पंडितपदं, १५०१ वाचकपदं, १५०८ आचार्यपदं, सं० १५१७ गच्छनायकपदं।

तत्पट्टे ५४ सुमतिसाधुसूरिः।

तत्पट्टे ५५ हेमविमलसूरिः। यो भगवान् क्रियाशिथिलसमुदायोपि स्वयं संविग्नः क्रियोद्धारकरणे ऋषिहानाश्रीपतिऋषिगणपत्याद्या लुङ्कामतं त्यक्त्वा श्रीगुरोःपार्श्वे प्रवृज्य तन्निश्रां यावज्जीवं प्रपेदिरे।

तत्समये विक्रमात् १५६२ वर्षे कटुकमतं, १५७० वर्षे लुङ्कामतान्निर्गत्य बीजाख्येन ऋखेन बीजामतमुत्पेदे ततः विक्रमात् १५७२ वर्षे नागपुरीयतपागणान्निर्गतपार्श्वचन्द्रोपाध्यायेन सं० १५७५ पार्श्वचन्द्रमतमुद्भावितं।

तत्पट्टे ५६ श्रीआणंदविमलसूरि। सुविहिताग्रणीः कुमततमोदिनकरस्तस्य विक्रमात् १५४७ वर्षे इलादुर्गे जन्म। १५५२ व्रतं १५७० सूरिपदं येन स्वामिना दुष्कालप्रभावजन्यविविधकुपथमुह्यमानजनान् विलोक्य तदुद्धारनिर्द्धारितमतिना गुर्वाज्ञया विक्रमात् १५८२ वर्षे क्रियोद्धारकरणेन व्युच्छिन्नं तीर्थं प्रभावितं तदद्यापि संवेगमतं।

भूरयः संति सूरयो गच्छे गच्छे च गर्विताः ।
आणंदविमलादन्यो धन्यो नास्ति महीतले ।१। +

इति स्तुतिः मालवीऋषिकृता। श्रीगुरोरादेशात् संविग्नो यावज्जीवं षष्ठतपोभिग्रही श्रीविद्यासागरोपाध्यायो, मेवातमरुदेशप्रमुखदेशेषु विहृत्य बोधिबीजमुप्तवान् क्रियोद्धारादनु चतुर्दशवर्षाणि षष्ठचतुर्थाभ्यां विंशतिस्थानकाद्यनेकविकृष्टतपः गुरुवश्चक्रुः, प्रांते नवभिरुपवासैः, अहमदावादे समाधिना मृत्वा १५९६ वर्षे स्वर्ययौ ।

तत्पट्टे ५७ श्रीविजयदानसूरिः। विविधमहोत्सवजिनप्रतिष्ठाकृत् सिद्धांतपारगामी वायुवदऽनेकदेशाऽप्रतिबद्धविहारी तपस्वी यावज्जीवविकृति पंचकत्यागी बभूव । तत्समये शत्रुंजययात्रासंघाः सोत्सवा भूयांसो जज्ञिरे शत्रुंजये चतुर्मुखादिप्रासादाश्च। सं० १५८७ वर्षे कर्मासाहेन १६तम

+ श्रीआनन्दविमलसूरिभिः वि०सं०१५८२ क्रियोद्धारश्चक्रे ॥ विंशतिस्थानकस्य ४००चौथभक्ताः ४००षष्ठभक्ताः विहरमानस्य २०षष्ठाः श्रीवर्धमानस्य २२९ षष्ठाः अन्येपि षष्ठाः ज्ञानावरणीयक्षयार्थं ५द्वादशमा विघ्नक्षयार्थं ५द्वादशमा दर्शनावरणीयक्षयार्थं ६ दशमा मोहक्षयार्थं २८ अष्टमा वेदनीयायुर्गोत्रक्षयार्थं ८ दशमाष्टमाः तपांसि कृतानि ॥ इति श्रीविजयलक्ष्मीसूरिविरचितायां तपागच्छपट्टावल्यां ॥ एषा पट्टावली द्वितीयभागे मुद्रयिष्यते ॥

तथा तच्छिष्यो विजयदानसूरिः क्रियोद्धारसहायकृत् । तस्य शिष्यः, पूर्वं खरतरगच्छः पश्चात्तपोगच्छाचरणः, देवगिरौ श्रीहीरविजयसूरीणां सहाध्यायी, गिर्वाणभाषाजलपदक्षः, तिव्रबुद्धिः, प्रखरवादी, चतुर्विधवादनिष्णातः, श्रीजंबूद्वीपप्रज्ञप्तिवृत्ति (वि०सं०१६३९)—कल्पकीरणावली (श्लो० ४८१४) (वि०सं०१६२८ दीपावल्यां राजधन्यपुरे)—कुमतिकुद्दालः—प्रवचनपरीक्षा—तपागच्छपट्टावलीसूत्र—तद्वृत्ति—नयचक्र—ईरियापथिकाषट्त्रिंशिकावृत्ति (श्लो० ८००)—औष्ट्रिकमतोत्सूत्रदीपिका (वि०सं०१६१७)—पर्युषणाशतकप्रकरण—तद्वृति—गुरुतत्वदीपिका (श्लो० १०००)—प्रमुखग्रंथानां प्रणेता, उ०श्रीधर्मसागरः ॥

उद्धारः कृतः। तस्य च विक्रमात् १५५३ वर्षे जामलास्थाने जन्म। १५६२ व्रतं, १५८२ (८७) सूरिपदं, (सच) १६२२ वर्षे स्वर्ययौ।

तत्पट्टे ५८ श्रीहीरविजयसूरिः। तस्य विक्रमात् १५८३वर्षे मार्गसुदि ९ जन्म, पितुर्नाम कंवरजी, मातुर्नाम नाथीबाई, वृद्धउकेशज्ञातिः षीमसरागोत्रं सं०१५९६ दीक्षा,सं०१६०७ पंडित पदं, १६०८ वरकाणपार्श्वे, वाचकपदं, सं० १६१० सीरोहीनगरे सूरिपदं, श्रीआगरानगरे श्री चिंतामणिपार्श्वस्य १६४० प्रतिष्ठा कृता। तथा लुंपकमते ऋ०मेघजीनाम्ना स्वमतं परित्यज्य पंचविंशतिमुनिगु(ग)णेन समं श्रीसूरिपार्श्वे दीक्षा गृहीता। येषामुदपदेशामृतरसमाऽऽकन्ठं निपीय राजाधिराजपातस्याहश्रीमदकब्बरसम्राट् स्वकीये अनेकदेशसमुदायात्मकद्वादशसूबास्थाने षाण्मासिकामारिप्रवर्त्तनं, जेजीयाख्यकरमोचनं च चक्रे। तद्व्यतिकरस्तु जगतः प्रतीतः, सामस्त्येन वक्तुं वाक्पतिरप्यशक्तः। तस्य च विक्रमात् १६५२ वर्षे भाद्रपदशुक्लैकादश्यां सौराष्ट्रे उन्नतपुरे सर्वातिचारालोचनपूर्वमनशनेन स्वर्गः। तत्तीर्थं तु जलधिवेलानिलान्दोलत्पताकं स्तूपरूपं संसारार्णवतरणे यानपात्रतां स्वस्य ख्यापयज्जयति।

तत्पट्टे ५९ विजयसेनसूरिः। येन भगवता महाराजाधिराजपातस्याहअकब्बरसभायां पंचशतभट्टैः सह वादं विधाय जयश्रियाः पाणिग्रहश्चक्रे"कालीसरस्वती"बिरुदं लेभे। वैदुष्यममुष्य पुनर्वाचस्पतेरप्यतिशायि। तच्चिह्नं तु नमोदुर्वाररागादीति योगशास्त्रसूत्राद्यपद्यस्यार्थसप्तशती श्रीगुरुभिर्विदधे, सुक्तावल्याद्यनेकशो ग्रंथाश्च। विस्तारार्थं विजयप्रशस्तिरालोक्या। तेषां नारदपुर्यां विक्रमात् १६०९(४) वर्षे जन्म, १६१७(१३) दीक्षा, १६२८ सूरिपदं १६७२(७१) वर्षे श्रीस्तंभतीर्थे स्वर्गः।

तत्पट्टे ६० श्रीविजयदेवसूरिः। मानुष्येपि देवमूर्तिरेव यावज्जीवं पुनः पुनः च विकृतित्यागी संप्रति वर्तमाने तपसा षष्ठाष्टमचतुर्थादिभिरावर्तीन (?) धन्यर्षेरप्यतिशायी। श्रीवीर इव दुर्गोपसर्गेप्यक्षुब्धधैर्यः गच्छांतरीयैर्विरोधे क्रियमाणेपि सञ्जातवैराग्यशांतरसो संविग्नमौलिमा-

णिक्यं, विक्रमात् १६३४ वर्षे जन्म, १६४१ (४३) दीक्षा, १६५६ (५५) वैशाखे सूरिपदं १६७३(७१) गच्छनायकपदं। अस्य श्रीभगवतस्तपस्तेजोभिरंजितेन महाराजाधिराजपातस्याहश्रीजहांगीरसम्राजा "महातपा" इतिनाम चक्रे। तथा श्रीगुरूपदेशसुधाऽधिकरसास्वादलुब्धेन राणाश्रीजगतसिंहजीनाम्ना उदयसागरपीछोलाख्ये महासरोद्वये जीवहिंसा निषिद्धा। तथास्मिन्विजयिनि श्रीजिनशासनश्रियाः प्रभावनालंकारा भूयांसो बभुवुः भगवता स्वविहारेणानेकदेशाः पवित्रीकृताः ॥

तत्पट्टे ६१ श्रीविजयसिंहसूरयोपि जाग्रद्युगप्रधानोपमाना आसन्। तेषां विक्रमात् १६४४ मेदनीपुरे साहनाथु–भार्यानायकदेगृहे जन्म १६५४ दीक्षा१६५५पंडितपदं १६७५ (७३) वाचकपदं १६८१ (८२) आचार्यपदं यद्वचनचातुर्यमाधुर्यरञ्जितो राणाजगतसिंह श्राध्ध इव जिनधर्मानुरक्त आसीत्, १७०८ वर्षे स्वर्गं गतः२८वर्षाणि आचार्यपदं प्रपाल्य दक्षिणदेशे विजयदेवसूरीणां मुखांभोजादुपदेशं प्राप्य मृतः।

(श्रीविजयदेवसूरिरपि) विक्रमात् १७१३ आषाढशुक्ल११देवशयननाम्ना प्रतीतायां उन्नतपुरे स्वर्गं गतः।

तत्पट्टे ६२ श्रीविजयप्रभसूरिः (तस्य) १६७७ माघसुदि ११ जन्म, १६८६दीक्षा, १७१३ भट्टारकपदं, स चायं भगवानाचन्द्रार्कं विजयतां।

यस्मिन्नभ्युदिते तपागणश्रीर्युवतीव पीवरानगारागारिपयोधराभ्यां प्रचीयमानांगोपांगव्याख्यानविषयिनी विबुधजनानानन्दयति। इति।

इति गुरुपट्टावली समाप्ता

अनुपूर्तिः १ — (प्रथम लेखकेनैव संयोजिता)

तत्पट्टे ६३ श्रीविजयरत्नसूरिः × पिता हीरानन्द माता हीरादे पालणपुरे जन्म सं० १७२२ दीक्षा, सं० १७३२ आचार्यपदं, सं० १७५० सूरिपदं, सर्वायुः ६३वर्षाणि प्रपाल्य, सं० १७७३ भाद्रवावदि२ उदेयपुरे स्वर्गं गतः ।

तत्पट्टे ६४ श्रीविजयक्षमासूरिः। माताभिधानेन चतुरांदे, पिता चतुरासाह, तद्गृहे जन्म पालीमध्ये, सं० १७३८ दीक्षा, १७७३ सूरिपदं, सर्वायुर्वर्षाणि ५८ प्रपाल्य, सं० १७८५वर्षे चैत्रशुदि ५ सांगलोरमध्ये स्वर्गं गतः ।

तत्पट्टे ६५ विजयदयासूरिः । तत्पट्टे ६६ श्रीविजयधर्मसूरिः ।

अनुपूर्तिः २ —(द्वितियलेखकेन पूरिता)

तत्पट्टे ६७ श्रीजैनेन्द्रसूरिः । तत्पट्टे ६८ श्रीदेवेन्द्रसूरिः ।

अनुपूर्तिः ३ —

तत्पट्टे ६९ श्रीधरणेन्द्रसूरिः । तत्पट्टे ७० विजयराजेन्द्रसूरिः ।
तत्पट्टे ७१ विजयमुनिचन्द्रसूरिः । तत्पट्टे ७२ विजयकल्याणचन्द्रसूरिः ।

× श्रीरत्नसिंहसूरिशिष्यशिवविजयेन गीरनारतीर्थमाला रचितास्ति ।

सं० १७१२ में गुजराती लुंकाशिवजीआचार्यना शिष्य गुरुथी कदाग्रह करी निकलीने ढुंढिमांहि रह्या तपस्या करवांसु लोकां मांन्या, स्वमत "ढुंढिया" नामें थाप्यो । थापनानिक्षेपो निषेधवाथी महानिंदक, आपथापी गुरूआज्ञालोपक गोशालामती जांणवा लाहोरमध्ये ।

[१३]

उपकेशगच्छीया पट्टावलिः +

[कर्ता —]

॥ श्रीमत्पार्श्वजिनेंद्राय नमः ॥ श्रीमत्केशीकुमारगणधरेभ्यो नमः ॥ श्रीमद्रत्नप्रभसूरिसद्‌गुरुभ्यो नमः ॥ ओकेशशब्दस्यार्थाः लिख्यंते ॥

इशिक् ऐश्वर्ये, ओकेषु गृहेषु इष्टे पूज्यमाना सती या सा ओकेशा सत्यिका नाम्नी गोत्रदेवता । अत्र ओक शद्वो अकारांतः तस्यां भवस्तस्या अयमिति वा ओकेशः । भवे इत्यण् प्रत्ययः तस्येदमित्यनेन वा अणप्रत्ययः । सत्यिका देवी हि नवरात्रादिषु पर्वसु अस्मिन् गणे पूज्यते सा चास्य गणस्य अधिष्टात्री अतएवास्य गच्छस्य ओकेश इति यथार्थं नाम प्रोच्यते सद्भिरिति प्रथमोऽर्थः ॥ १ ॥ ईशनमीशः ऐश्वर्यं ओकैर्महर्द्धिकश्राद्धप्रमुखलोकानां गृहैरीशो यस्यां सा ओकेशा ओसिका नयरी । तत्र भव ओकेशः । ओसिकानगर्यां हि अस्य गणस्य ओकेश इति नाम श्रीरत्नप्रभसूरीश्वरतो विख्यातं जातमिति द्वितीयोऽर्थः ॥ २ ॥ अः कृष्णः उः शंकरः को ब्रह्मा । एषां द्वंद्वसमासे ओकास्ते ईशते पूज्यमानाः संतो देवत्वेन मन्यमानाः संतश्च येभ्यस्ते ओकेशाः ॥ ओके कृष्णशंभुब्रह्मभिर्देवैरीशते ये ते वा ओकेशाः । परशासनजनाः क्षत्रियराज्यपुत्रादयः प्रतिबोधविधानात्तेषामयं ओकेशः । तस्येदमित्यणप्रत्ययः । श्रीरत्नप्रभसूरिभिस्तेषां पारतीर्थिकधर्मनिष्ठातः सिद्धान्तोक्तविशुद्धजैनधर्म्मनिष्टायां प्रतिबोधदानेन प्रवर्तना कृता । तथा च श्रूयते पूर्व्वं हि श्रीरत्नप्रभसूरीणां गुरवः श्रीपार्श्वापत्यीयके-

+ इयं पट्टावली अर्थान्तरसंभावनाभिया किंचिदपि स्वाभिष्टं परिवर्तनं विनैव मुनिश्रीजिनविजयजीसंपादित "जैनसाहित्यसंशोधकस्य" प्रथमे भागे मुद्रिता "मक्षिका स्थाने मक्षिका" इति न्यायेन यथास्थितैव–अशुद्धप्राया एवात्र मुद्रिता ।

श्रीकुमारानगारसंतानयित्वेन विख्यातिमंतो जगति जज्ञिरे। ततः प्राप्तसूरिमंत्राः ससत्तंत्रा रमणीयाऽतिशयनिचयाः स्वकीयनिस्तुषशेमुखीप्राग्भारसंभारात् ज्ञातत्रिदशसूरयः श्रीमच्छ्रीरत्नप्रभसूरयः कियति गते काले विहरंतः संतः श्रीओसिकानगर्यां समवसृताः। तस्यां च सर्वे लोकाः पारतीर्थिकधर्म्मधारिणो संति। न कोपि जैनधर्म्मधारी। ततः साध्वाचारं प्रतिपालयद्भिः सिद्धान्तोक्ततीर्थंकरधर्म्मशुभकर्मप्ररूपणां कुर्वद्भिः सद्भिः श्रीरत्नप्रभसूरिभिः पारतीर्थकानेकच्छेकविवेकिलोकाः प्रतिबोधितास्तत एते ओकेशा इति विरूदो विख्यातो जातः। इति तृतीयो अर्थः ॥ ३ ॥ अः कृष्णः, आः ब्रह्मा, उः शंकरः, एषां द्वंद्वे आवस्ततः ओभिः कृष्णब्रह्मशंकरैर्देवैः कायते स्तूयते देवाधिदेवत्वादिति ओकः प्रस्तावात् श्रीवर्धमानस्वामी कचिदिति ड प्रत्ययः, ओकश्चासौ ईशश्च ओकेशस्तस्यायं ओकेशः वर्तमानतीर्थाधिपतिश्रीवर्धमानजिनपतितीर्थाश्रयणादिति चतुर्थोऽर्थः ॥ ४ ॥

अः अर्हन्, अः स्यादर्हति सिद्धे चेत्युक्तेः। प्रस्तावादिह अ इति शब्देन श्रीवर्धमानस्वामी प्रोच्यते। ततः अस्य ओको गृहं चैत्यमिति यावत्, ओकः श्रीवर्धमानस्वामिचैत्यमित्यर्थः। तस्मादीशः ऐश्वर्यं यस्य स ओकेशः यतोयं गणः श्रीमहावीरतीर्थंकरसान्निध्यतः स्फातिमवापेति पंचमोऽर्थः ॥५॥ एवमस्य पदस्यानेकेऽप्यर्थाः संबोभुवति परं किं बहुश्रमेणेति ॥

अथ उपकेशशब्दस्य कियंतोऽर्था लिख्यंते: उप समीपे केशाः शिरोरुहाः सन्त्यस्येति उपकेशः। श्रीपार्श्वापत्यीयकेशिकुमारानगारः। एतदुत्पत्तिवृत्तांतस्तु श्रीस्थानांगवृत्त्यादौ सप्रपंचः प्रतीत एवास्ति। तत एवावगंतव्यः। ततः उपकेशः श्रीकेशिकुमारानगारः पूर्वजो गुरुर्विद्यते यस्मिन् गणे स उपकेशः। अभ्रादित्वाद प्रत्ययः। अस्मिन् गच्छे हि श्री केशिकुमारानगारः प्राचीनो गुरुरासीत्। ततो यथार्थमुपकेश इति नाम जातमिति प्रथमोऽर्थः ॥ १ ॥ उपवर्जितास्त्यक्ताः केशा यत्र सः उपकेशः ओसिकानगरी तस्यां हि सत्यिका देव्याश्चैत्यमस्ति। तदग्रे च घनैर्जनैः प्रथमजात-

बालकानां सुदिने दिने मुंडनं कार्यते तत उपकेश इति यथार्थं नाम ओसिकानगर्याः प्रख्यातं जातं। तत्र भवो यो गच्छः स उपकेशः प्रोच्यते सद्भिर्विद्वद्भिः। अत्र हि भवे इत्यनेन सूत्रेण अणि प्रत्यये संज्ञापूर्वकस्य विधेरनित्यत्वाद्वृद्धेरभावः। श्रीरत्नप्रभसूरितो अनेकश्रावकप्रतिबोधविधानानंतरं लोके गच्छस्य उपकेशेति नाम प्रसिद्धं जातमिति द्वितीयोऽर्थः ॥ २ ॥ को ब्रह्मा, अः कृष्णः, अः शंकरः, ततो द्वंद्वे काः। तैरीष्टे ऐश्वर्यमनुभवति यः सः केशकानां ईशः ऐश्वर्यं यस्माद्वा केशः पारतीर्थिकधर्म्मः सः उपवर्जितस्त्यक्तो यस्मात्स उपकेशस्तीर्थकृदुक्तविशुद्धधर्म्मः स विद्यते यस्मिन् गच्छे स उपकेशः। अत्रापि अभ्रादित्वादप्रत्ययः। इति तृतीयोऽर्थः ॥ ३ ॥ कं च सुखं ई च लक्ष्मीः कयौ ते ईशे स्वायत्ते यत्र यस्माद्वा स केशः—अर्थात् जैनो धर्मः। स उपसमीपे अधिको वाऽस्माद्गच्छात्स उपकेशः इति चतुर्थोऽर्थः ॥ ४ ॥ कश्च अश्च ईशश्च केशाः—ब्रह्मविष्णुमहेशाः। तद्धर्म्मनिराकरणात्ते उपहता येन सः उपकेशः। प्रकरणादत्र श्रीरत्नप्रभसूरिः गुरुः तस्यायं उपकेशः। अत्रापि तस्येदमित्यणि प्रत्यये पूर्ववद्वृद्धेः अभावो न दोषपोषायेति पंचमोऽर्थः ॥ ५ ॥

इत्थमन्येऽप्यनेके अर्था ग्रन्थानुसारेण विधीयंते परमलं बहुश्रमेणेति। एवमुक्तव्यक्तयुक्तिव्यक्तिशक्त्या ओकेशोपलक्षणे उभे अपि नाम्नी यथार्थे घटां प्राचतः।

इति ओकेशोपकेशपदद्वयदशार्थी समाप्ता ॥

संवत् १६५५ वर्षे ॥ श्रीमद्विक्रमनगरे सकलवादिवृंदकंदकुद्दालश्रीकक्कुदाचार्यसंतानीयश्रीमच्छ्रीसिद्धसूरीणां आग्रहतः श्रीमद्बृहत्खरतरगच्छीयवाचनाचार्यश्रीज्ञानविमलगणिशिष्यपंडितश्रीवल्लभगणिविरचिता चेयम्। श्रीरस्तु ॥

ग्रीष्महेमंतिकान् मासान्, अष्टौ भिक्षुः प्रचक्रमे।
रक्षार्थं सर्वजंतूना वर्षास्वैकत्र संवसेत् ॥ १ ॥

मनुष्याणां सर्व्वेषु पदार्थेषु सारो धर्म्म एव। मनुष्यत्वं धर्मेणैव वर्ण्यते ॥ स धर्म्मो वर्षासु मुनिपार्श्वात् श्रोतव्यः। यतयो वर्षास्वेकत्र-

तिष्ठन्ति, किमर्थं ? सर्वजंतूनां रक्षार्थं । धर्म्मस्य सारं सर्व्वं जीवेषु दया । वर्षासु पृथ्वी जीवाकुला भवति संयमो विराध्यते । अतो जीवरक्षार्थं चतुर्मासकल्पं तिष्ठंति ।

शिवशासने पि जीवदयास्वरूपमेवं व्यावर्णितं—

पश्यन् परिहरन् जंतून् मार्जन्या मृदुसूक्ष्मया ।
एकाहविचरेद्यस्तु चन्द्रायणफलं भवेत् ॥ १ ॥

महाभारते कृष्णद्वीपायनेनाप्युक्तं—

यो दद्यात्कांचनं मेरुः कृत्स्नां चापि वसुंधरां ।
एकस्य जीवितं दद्यात् न च तुल्य युधिष्ठिरः ॥ २ ॥

परेप्येवं वदन्ति जैनवाक्यस्य किं वाच्यं । मुनयः क्षेत्रस्य त्रयोदश गुणान् वीक्ष्य तिष्ठन्ति

चखिल १ पाण २ थंडिल ३ वसहि ४ गोरस ५ जणा ६ उले ७ विज्जे ८
ओसह ६ धन्ना १० हिवइ १० पासंडा ११ भिखु १२ सिज्झाय ॥ १३ ॥

एते त्रयोदश गुणाः । तत्र स्थिता दशधा समाचारी पालयंति—

इच्छा १ मिच्छा २ तहकारो ३ आवस्सिया ४ निसीहिया ५ आपुच्छणाय ६ पडिपुच्छ ७ छन्दणा य ८ निमंतणा य ६ उपसंपयाकाले १० समाचारी भवे दसहा ॥ १ ॥ पुनः धर्म्मशास्त्राण्युपदिशन्ति । श्राद्धा वासनावासितचित्ताः शृण्वंति ॥

परं चातुर्म्मासकाल्पञ्चाशद्दिने व्यतिक्रांते कल्पावसरं ।

बीसहि दिणेही कप्पो पञ्चगहाणीय कप्पठवणायं ।
नव (६) सय तेणू(६३) एहिं वुच्छिन्ना संघआणाए ॥ १ ॥

अधुना कल्पावसरे अन्यग्रन्थादरो न । यथा दिव्यकौस्तुभाभरणं प्राप्य अन्यरत्नाभरणेषु निरादरत्वं जायते । यथा च कुंडपातालामृतं प्राप्यांबुजलास्वादो न रोचते । भारतीभूषणकविजनवचनरचनामासाद्य सामान्यजनवचांसि न रोचते । चक्रवर्तिन अग्रे सामान्यराजानोऽपसरन्ते देवानां नन्दीश्रवणेनान्यशब्दा हीनतां व्रजंति । गन्धहस्तिनो गंधे अन्यगजेन्द्रा मद-

जलविकला भवन्ति । केवलज्ञानागमने अन्य ज्ञाना अपसरन्ति । कल्पवृक्षाग्रेऽन्ये तरवाः न राजते । सूर्योदये खद्योतस्य का प्रभाः। मुक्तिसौख्याग्रे कानि सौख्यानि । सिंहध्वनेः पुरो यथा अन्ये शव्दा न राजते तथा कल्पावसरे अन्यानि शास्त्राणि आदरो न । स कल्पो अनेकविधः श्रीशत्रुंजयकल्पः गिरनारगिरिकल्पः कदम्बगिरिकल्पः अर्बुदाचलकल्पः अष्टापदकल्पः सम्मेतगिरिकल्पः हस्तिनापुरकल्पः मथुरानगरीकल्पः सत्यपुरकल्पः शंखेसरकल्पः स्तंभनतीर्थकल्पः यतीनां विहारकल्पः वस्त्रस्य कल्पसंज्ञा । अनेन प्रकारेणानेके कल्पसंज्ञाः एके कल्पाः एवं विधा वर्त्तते,यस्य प्रमाणेन श्रीपादलिप्ताचार्यो यावदायाति साधवो विहृत्य तावत् पंचतीर्थनमस्कारं विधायागच्छंति । एके कल्पास्ते उच्यते येषां प्रमाणेन अदृशीकरणं आकाशगमनं स्वर्णसिद्धिः लक्ष्मीप्राप्तिः मित्रपुत्रबांधवस्वजनप्राप्तिः प्रभृतिलब्धयः संपद्यते । परमयं कल्पो ऽमेयमहिमानिधिः इह लोकाभीष्टसौख्यकारणं । अयं कल्पो दशाश्रुतस्कन्धस्याष्टममध्ययनं । नवमपूर्वात् श्रीभद्रबाहुस्वामिनोद्धृतः अमेयमहिमानिधानः सर्व पापक्षयं करः ।

यथा श्रूयमानः द्रुमेषु कल्पद्रुः सर्वकामफलप्रदः, यथौषधीषु पीयूषं सर्वरोगहरं, परं रत्नेषु गुरुडोद्गारं यथा, सर्वविषापहारः मंत्राधिराजो मंत्रेषु यथा सर्वार्थसाधकः, यथा पर्वसु दीपाली सर्वात्मासुखावहा, तथा कल्पः सद्धर्मे शास्त्रेषु सर्वपापहरः । तथा सर्वसिद्धान्तमध्ये श्रीकल्पो गुरुतरः, यथा पर्वतानां मध्ये मेरुः तीर्थमाहिं शत्रुञ्जयः दानमध्ये अभयदान अक्षरमध्ये ॐकार देवेष्विन्द्रः ज्योतिषीषु चंद्र गजेंन्द्रेष्वैरावण समुद्रेषु स्वयंभुरमणः तुरङ्गमेषु रेवत ऋतुषु वसन्त मृतिकायां तूरी सुगंधीषु कस्तुरी धातुषु पीतं मोहनेषु गीतं काष्टेषु चन्दनं इंद्रियेषु नेत्रं व्यवहारपर्वसु दीपालिका धर्म्मशास्त्रेषु कल्पः सर्वपापहारः सर्वदुखक्षयंकरः ।

यथा जनमेजयराजा अष्टादशपर्वश्रवणात् १८ विप्रहत्यात्यागः यवनिका श्यामत्वं जातं । यथा एकस्मिन् दिवसे जनमेजयराजाग्रे पुरोहितेन कथितं पूर्वे त्रेतायुगे पांडवैश्च कौरवैः कृता अष्टादशाक्षौहिणिमृताः

महाभारतो जातः। राजा प्रोक्तं को नाभवत् यत्तेषां निवारयति पुरोहितेन कथितं त्वां न निवारयामि। यतः अद्य दिवसात् षष्टे मासे त्वं आखेटके न गन्तव्यं, यदा गमिष्यति तदा सूकरमृगं तेषां खेटके अश्वो न क्षेपणीयं यदा अस्वो क्षेपयति तदा सगर्भा मृगी तस्यां वाणं न मोचनीयं, यदा मुञ्च-ति तदा तस्या उदरं मध्ये पुत्रिका भविष्यति सा न गृहीतव्या, यदा ग्राह-यति तदा तस्या पाणिग्रहणं न करणीयं, यदा प्राणिग्रहणं करोति तदा तस्या पट्टराज्ञीपदं न दातव्यं, तस्या कथितं न मान्यं। इत्यादि भविष्यति वचनानि मया तव कथिताः स्युः परं त्वं न तिष्ठसि। अथ षट् मासाः द्वित्रिदिवसोना गता तदा मालाकारेणागत्य राज्ञः कथितं भो राजन् तव वनो सूकरैः भग्नः। राज्ञा अश्वं सज्जीकृत्य तेषां पृष्ठे गतः। ते पूर्वोक्तानि वचनानि सर्वे कृता गढवालस्य पुत्रिका दत्ता एषा त्वं पालय तेन पालिता परं स्वरूपा। अन्यदा राज्ञा दृष्टा सा परिणीता पूर्ववचनानि सर्वे विस्मृताः राज्ञा पट्टराज्ञी कृता। अन्यदा राज्ञा यज्ञो मण्डितः अष्टादशपुराणवेत्तारः अष्टादशब्राह्मणा आकारिताः यज्ञं यजमानं कश्चिद्दूतेन देशान्तरादागतेन नृपोः आहूतः राज्ञा विप्राणां कथितं अहं उत्तिष्ठामि तैः कथितं, नहि यज्ञस्य विघातो भवति। परं तव शरीरसमाना पट्टराज्ञी अस्ति, राजा उत्थितः ततः कटके किंच च्छात्रस्य रहस्यो आगतः ते ब्राह्मणाः हसिताः, राज्ञी ज्ञातं एते मम हसिता क्रुद्धा राज्ञः कथितं एते विनष्टा मां हसति ततः यदि एते मारयिष्यति तदा तव मम संबंधः। राज्ञा ते मारिता अष्टाद-शधा कुष्टा जातं। ततः पूर्वपुरोहितेन कथितं वरं त्वया न कृतं राज्ञा कथितं अधुना कथय किं करोमि तेन कथितं अष्टादश पुराणानि निसन्दे-हानि शृणु। ते चामि—आदि पर्व १ सभा पर्व २ विराट् पर्व ३ आर-ण्यक पर्व ४ उद्यान पर्व ५ भीष्म पर्व ६ द्रोण पर्व ७ कर्ण पर्व ८ शल्य पर्व ९ सौतिक पर्व १० गर्भपाल पर्व ११ शान्ति पर्व १२ शासन पर्व १३ आसुमास्य पर्व १४ मेषक पर्व १५ मूशल पर्व १६ यज्ञ पर्व १७ स्वर्गारोहण पर्व ॥ १८ ॥ एभिरष्टादशविप्रहत्याक्षयकृतायवनिकाश्या-मत्वं जाताः।

तथा अयमपि अधुना ये मुनयः उपवासत्रयेण वाचयन्ति चतुर्विधसंघो अष्टमेन शृणोति तदा तस्मिन्नेव भवे मोक्षः। यदि द्रव्यक्षेत्रकालसद्भावा भवन्ति। न चेत्तदा तृतीयभवे पंचमे भवे सप्तमे भवे अवश्यं मोक्षः। पूर्वमुनयः पाक्षिकसूत्रवत्ऊद्धर्वस्थाः कथयन्ति चतुर्विध संघ ऊद्धर्वसन्नेव श्रणोति परं श्रीवीरनिर्वाणात् ९९३ वर्षे गते आनन्दपुरे ध्रुवसेनराज्ञः सभायां पुत्रशोकापनोदाय देवर्द्धिमुनिना सभासमक्षं वाचितः श्रावकाः तांबूलदानादिप्रभावना कृता। तद्दिनादाभ्य सा रीतिः। परं त्वस्य कालस्य वाचनैवोच्यते न तु व्याख्या। पूर्वे ये पादलिप्ताचार्य—सिद्धसेनदिवाकरप्रभृतयो अभूवन् तैरपि वाचनैवोक्ता अन्येषां का वार्ता। यतः सिद्धान्तेइत्युक्तमस्ति सव्वनईणं जइहु वालुआ इत्यादि। एवंविधस्य कल्पस्य यदहं वाचनामनोरथं करोमि स बाहुभ्यां समुद्रतरणमभिलषामि। यथा कुब्ज उच्चफलं लातुमिच्छति तथाऽहं यदिच्छामि वाचनां, कर्तुं तत् संघस्य सांनिध्यं पुनः गुरूणां प्रासादः। यद्वर्षाकाले मयूरो नृत्यं करोति तज्जलधरगर्जितप्रमाणं। दृशद्रूपश्चन्द्र कांतमणिर्यदमृतं स्रूते तच्चंद्रस्य प्रमाणं। सूर्यसारथी रविः आरूणःपंगोपि यदाकाशमुल्लंघयति तत्सूर्यस्य प्रमाणं। पुत्तालिका नृत्यं करोति तद्रिंदजालिकस्य प्रमाणं। तथाऽहं मंदबुद्धिः मूर्खशिरोमणिः प्रमाणे सप्रमाणता नास्ति, लक्षणे संल्लक्षणता न, अलंकारस्याऽलंकरणं नहिं, साहित्ये साहित्यं नास्ति, छंदसि सुछंदता न, एवंविधो पि वाचनाय साहसं करोमि तत् सद्गुरूंणां प्रसादः। पुरातनैर्व्याख्या कृता। ममापि युक्तिः। कथं

जं देवो सायरो लहरिगज्जंतनीरपडिपुन्नो।
ता किं गामतलाओ जलभरिओ लहरिगा देऊ॥ १॥
जइ भरह भावछंदे नच्चइ नवरंग चंगमा तरुणी।
ता किं गाम गहिल्ली तालिछंदेन नच्चेइ॥ २॥
जइ दुद्धधवलखीरी तडफडइ विविहभंगेहि।
ता कुक्कसकणसहिया रव्वडिया मा तडव्वडह॥ ३॥

अहं यद्वेद्मि तद्गुरूणां प्रसादः ।

टोलो रोलो रुलंतो अहियं विन्नाए नाए परिहीणो ।
दिव्वुव वंदणिज्जो विहिओ गुरुसुत्तहारेण ॥ ४ ॥

ते गुरवः श्री पार्श्वनाथसंतानीयाः ।

१ श्रीपार्श्वनाथशिष्यः प्रथमोगणधरः श्रीशुभदत्तः । २ तत्पट्टे श्रीहरिदत्तः । ३ तत्पट्टे श्रीआर्यसमुद्रः । ४ तत्पट्टे श्रीकेशीगणधरः तेन परदेशीनृपः प्रतिबोधितः । राजप्रश्नीयउपांगे प्रसिद्धः ।

५ तत्पट्टे श्रीस्वयंप्रभसूरिः । (स्वयंप्रभसूरिशिष्य बुद्धकीर्तिसुं बौधमत नीकल्यो, आचारांग टीकासु जाणनो) अन्यदा स्वयंप्रभसूरि देशनां ददतां उपरि रत्नचूडविद्याधरो नन्दीस्वरे गच्छन् तत्र विमानः स्तंभितः । तेन चिंतितः मदीयो विमानः केन स्तंभितः । यावत् पश्यति तावदधोगुरुं देशनाददंतं पश्यति । स चिंतयते मयाऽविनयः कृतः यतः जंगमतीर्थस्य उल्लंधनं कृतं । स आगतः गुरुं वंदति धर्मं श्रुत्वा प्रतिबुद्धः । स गुरुं विज्ञपयति मम परंपरागता श्रीपार्श्वजिनस्य प्रतिमास्ति तस्या वंदने मम नियमोऽस्ति सा रावणलंकेश्वरस्य चैत्यालये अभवत् । यावत् रामेण लंका विध्वंसिता तावद् मदीयपूर्वजेन चंद्रचूडनरनाथेन वैताढ्ये आनीता । सा प्रतिमा मम पार्श्वेस्ति । तया सह अहं चारित्रं ग्रहीष्यामि । गुरुणा लाभं ज्ञात्वा तस्मै दीक्षा दत्ता । क्रमेण द्वादशांगी चतुर्दश पूर्वी बभूव गुरुणा स्वपदे स्थापितः । श्रीमद्वीरजिनेश्वरात् द्विपंचाशतवर्षे (५२) आचार्य पदे स्थापितः पंचशतसाधुभिसह धरां विचरति । श्रीलक्ष्मीमहास्थानं तस्याभिधानं १ पूर्वं नाम गुजरातिमध्ये कृतयुगे रयणमाला २ त्रेतायुगे रयणमाला ३ द्वापरे श्रीवीरनयरी ४ कलियुगे भीनमाल ५ तत्र श्रीराजाभीमसेन तत्पुत्रश्रीपुंज तत्पुत्र उत्पलकुमार अपरनाम श्रीकुमार तस्य बांधव श्रीसुरसुन्दर युवराज्य राज्यभार धुरंधर । तयोरमात्य चांद्रवंशीय द्वौ भ्राता तत्र निवासी सा० ऊहड १ उद्धरण २ लघु भ्राता गृहे सुवर्ण संख्या आष्टादश कोट्यः संति । वृद्धभ्रातुर्गृहे ९९ नवनवति लक्षा संति ।

ये कोटीश्वरास्ते दुर्गमध्ये वसन्ति ये लक्षेश्वरास्ते बाह्ये वसंति । तत ऊहडेन एकलक्ष भ्रातुः पार्श्वे उच्छीर्णं याचितं । ततो बांधवेन एवं कथितं भवते विना नगरं उध्वसमस्ति, भवतां समागमे वासो भविष्यति । एवं ज्ञात्वा राजकुमार ऊहडेन आलोचितवान् नूतनं नगरं वसेयं ततो मम वचनं अग्रे आयातः । ढीलीपुरे राजा श्री साधु तस्य ऊहडेन ५५ तुरगमा भेटिकृता उवएसा संतुष्टो ददौ । ततो भीनमालात् अष्टादश १८ सहस्र कुटुम्ब अगात् । द्वादश योजना नगरी जाताः । तत्र श्रीमद्रत्नप्रभसूरीपंचसयासीष्य समेत लुणद्रही समायाति । मासकल्प अरण्ये स्थिता । गोचर्यां मुनीश्वरा व्रजंति परं भिक्षा न लभते । लोका मिथ्यात्व वासिताः यादृशा गता तादृशा आगता मुनीश्वराः । पात्राणि प्रतिलेष्य मासं यावत् संतोषेण स्थिताः पश्चात् विहारः कृतः । पुनः कदाचित् तत्रायातः । शासनदेव्या कथितं भो आचार्य अत्र चतुर्मासकं कुरु । तव महालाभो भविष्यति । गुरुः पंचत्रिंशत् मुनिभिः सह स्थितः । मासी द्विमासी तृमासी चतुर्मासी उप्पोसित कारिका । अथ मंत्रीश्वर ऊहड सुतं भुजंगेन दृष्टः । अनेक मंत्रवादिनः आहूताः परं न कोपि समर्थस्तैः कथितं अयं मृतः दाघो दीयतां । तस्य स्त्री काष्टभक्षणे स्मशाने आयाता । श्रष्टस्य महान् दुःखो जातः । वादित्रान् आकर्ण्य लघुशिष्यः तत्रागतः । झंपाणो दृष्ट्वा एवं कथापयति भो ! जीवितं कथं ज्वालयत तैः श्रेष्ठिने कथितं एषः मुनीश्वरः एवं कथयति । श्रेष्ठिना झंपाणो वालितः क्षुल्लकः प्रष्टः गुरुः पृष्ठे स्थितः । मृतकामानीय गुरु अग्रे मुञ्चति श्रेष्ठि गुरुचरणे शिरं निवेश्य एवं कथयति भो दयालु मम देवो रुष्टः मम ग्रहो शून्यो भवति । तेन कारणेन मम पुत्रभिक्षां देहि । गुरुणा प्रासु जलमानीय चरणौ प्रक्षाल्य तस्य छंटितं । सहसात्कारेण सज्जो बभूव हर्ष वादित्राणि बभूव । लोकैः कथितं श्रेष्ठि सुतः नूतन जन्मो आगतः । श्रेष्ठिना गुरूणां अग्रे अनेकमणि मुक्ताफल सुवर्ण वस्त्रादि आनीय भगवान् गृह्यतां । गुरुणा कथितं मम न कार्यं परं भवद्भिः जिन धर्म्मो गृह्यतां । सपाद लक्ष श्रावकानां प्रति बोधि कारक । पूर्वं श्रेष्ठि-

ना नारायण प्रासादं कारयितुमारब्धं। स दिवसे करोति रात्रौ पतति सर्वे दर्शनिनः पृष्टा न कोपि उपायो कथितं तेन रत्नप्रभाचार्यो प्रष्टः—भगवान् मम प्रासादो रात्रौ पतति। गुरुणा प्रोक्तं कस्य नामेन कारयतः। नारायण नामेन। एवं नहि महावीर नामेन कुरु मंगलं भविष्यति। प्रासादस्यविघ्नं न भविष्यति श्रेष्टिना तथैव प्रतिपन्नं। अथ शासनदेव्या गुरूणां कथितं हे भगवन् अस्य प्रासाद योग्यं मया देव गृहात् उत्तरस्यां दिशी लूणद्रहाभिधानं डुङ्गरिकायां श्री महावीर बिंबं कारयितुमारब्धं। तत्र तेन श्रेष्टिना गोपाल वचनात् गोदुग्ध स्रावकारणं ज्ञात्वा सर्वेपि दर्शनिनः पृष्टाः तैः पृथक् पृथक् भाषया अन्यदन्यदुक्तं। ततः श्रेष्टिना स आचार्योऽभिवंद्य पृष्टः ततः शासन देव्या वाक्यात् आचार्यो ज्ञात्वा एवं कथयति तत्र त्वत्प्रासाद योग्य बिंबो भविष्यति परं षट् मासैः सार्द्ध सप्त दिनैः निष्कासनीयं। श्रेष्टि उच्छुक संजातः। किंचिदूनैर्दिनैः निष्कासितः निंबु फल प्रमाण हृदयस्य ग्रन्थी द्वय सहितं। आचार्यैः प्रोक्तं अद्यापि किंचित् असंपूर्णं बिंबं विलंबस्व श्रेष्टिना प्रोक्तं गुरुणां कर प्रासादात् संपूर्णं भविष्यति। तेनावसरे कोरंटकस्य श्राद्धानां आव्हानं आगतं। भगवन् प्रतिष्ठार्थमागच्छ। गुरुणा कथितं मुहूर्त वेलायां आगच्छामि।

सप्तत्या ७० वत्सराणां चरम—जिनपतेर्मुक्तजातस्य वर्षे
पञ्चम्यां शुक्लपक्षे सुरगुरुदिवसे ब्रह्मणः सन्मूहुर्त्ते।
रत्नाचार्यैः सकलगुणयुतैः सर्वसंघानुज्ञातैः
श्रीमद्वीरस्य बिंबे भवशतमथने निर्मितेयं प्रतिष्ठाः ॥१॥
उपकेशे च कोरंटे तुल्यं श्री वीरबिंबयोः
प्रतिष्ठा निर्मिता शक्त्या श्रीरत्नप्रभसूरिभिः ॥ २ ॥

निजरूपेण उपकेसे प्रतिष्ठा कृता वैक्रिय रूपेण कोरंटके प्रतिष्ठा कृता श्राद्धै द्रव्यव्ययः कृतः। ततस्तेन श्रेष्ठिना श्रीऔपकेश पुरस्थ श्रीमहावीर बिंब पूजा आरात्रिका स्नात्रकरण देव वंदनादिविधिः श्रीरत्नप्रभाचार्यात् शिक्षिता। तदनंतरं मिथ्यात्वाभावात् श्रावकत्वं केषांचित् श्रेष्टिसम्ब-

न्धिनां सञ्जातं । ततः आचार्येण ते सम्यक्त्वधारी कृता । एकदा प्रोक्तं भो यूयं श्राद्धा तेषां देवीनां निर्दयचित्ताया महिष बोत्कटादि जीववधास्थि भंगशब्द श्रवण कुतुहलप्रियया "अविरतायाः रक्तांकितभूमितले आर्द्रचर्म्मबद्धवंदनमाले निष्ठुरजनसेवितं "धर्मध्यानविद्यापके महावीभत्सरौद्रे श्री सच्चिकादेवि गृहे गंतुं न बुध्यते । इति आचार्यवचः श्रुत्वा ते प्रोचुः प्रभोयुक्तमेतत् परं रौद्रा देवी यदि छलिस्याम तदा सा कुटुम्बान् सारयति । पुनराचार्यैः प्रोक्तं अहं रक्षां करिस्यामि । इत्याचार्यवाक्यं श्रुत्वा ते देवी गृहे गमनात् स्थिताः । आचार्याणां प्रत्यक्षीभूय देव्या सकोपमित्युक्तं आचार्य मम सेवकान् मम देवगृहे आगच्छमानान् निवारणाय त्वं न भविष्यति । इत्युक्त्वा गता देवी परं सातिशय कालभावात् महाप्रभावात् अनेकसुरकृतप्रातिहार्ये आचार्ये देवी न प्रभवति । एकदा छलं लब्ध्वा देव्या आचार्यस्य कालवेलायां किंचित् स्वाध्यायादि रहितस्य वामनेत्रभ्रूरधिष्ठिता । वेदाना जाता । आचार्यैः यावत् सावधानीभूय पीडायाः कारणं चिंतितं तावत् देवी प्रत्यक्षीभूय इत्ति प्रोक्तं मया पीडा कृता । अहं स्वशक्त्या त्वां स्फेटयिष्यामि इति सावष्टंभं आचार्योक्तं श्रुत्वा समयाकूतं सा विनयं प्रोक्तं भवादृशानां ऋषीणां विग्रहं विवादो न युक्तः । यदि त्वं कडडमडडं ददासि तदाहं वेदनां अपहरामि । आचन्द्रार्कं त्वत्किंकरी भवामि इति श्रुत्वा आचार्यैः प्रोक्तं कडडमडडं दापयिष्यामि । यत्युक्ता गता देवी । प्रभाते श्रावकानामाकार्य तैः पक्वान्न खज्जकादि सुंडकद्वयं कप्पूरकुंकुमादिभोगश्च आनीय श्रीसच्चिकादेवी देवगृहे श्रीरत्नप्रभाचार्यः श्रावकैः सार्धं गतः । ततः श्रावकैः पार्श्वात् पूजां कराप्य वामदक्षिणहस्ताभ्यां पक्वान्नसुंडकादि चूर्णयद्भिः आचार्यैः प्रोक्तं देवी कडडमडडं दत्तमस्तिः । अतः परं ममोपासिका त्वं इति वचनानन्तरं एव समीपस्थकुमारिका शरीरे आवेशः कृतः । ततः प्रोक्तं प्रभो मया अन्यं कडडमडडं याचितं अन्यं दत्तं । आचार्यैः प्रोक्तं त्वया वधो याचितः स तु लातुं दातुं न बुध्यते इत्यादिसिद्धान्तवाक्यं कुमारी शरीरस्था श्रीसच्चिकादेवी सर्वलोक प्रत्यक्षं श्रीरत्नप्रभाचार्यैः प्रतिबोधिता । श्रीउपकेशपुरस्था श्रीमहावीरभक्ता कृता सम्यक्त्वधारिणी संजाता ॥

आस्तां मांसं कुसुममपि रक्तं नेच्छति । कुमारिका शरीरे अवतीर्णा सती इति वक्ति भो मम सेवका यत्र उपकेशपुरस्थं स्वयंभू महावीरबिंब पूजयति श्रीरत्नप्रभाचार्यं उपसेवति भगवन् शिष्यं प्रशिष्यं वा सेवति तस्याहं तोषं गच्छामि । तस्य दुरितं दलयामि यस्य पूजा चित्ते धारयामि ।एतानि शरीरे अवत्तीर्णा साकुमारी कथ्यतां । श्रीसचिकादेव्या वचनात् क्रमेण श्रुत्वा प्रचुरा जनाः श्रावकत्वं प्रतिपन्नाः । क्रमेण श्रीरत्नप्रभाचार्य ८४ वर्षे स्वर्गं गतः ।

८ तत्पट्टे यक्षदेवाचार्यः माणभद्र यक्ष प्रतिबोध कर्त्ता संघस्य विघ्नो निवारितः ।

९ तत्पट्टे कक्कसूरि । १० तत्पट्टे देवगुप्तसूरि । ११ तत्पट्टे सिद्धसूरि ।

१२ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि । १३ तत्पट्टे यक्षदेवसूरि ।

१४ तत्पट्टे कक्कसूरि । स्वयंभू श्रीमहावीर स्नात्र विधि काले, कोसौ विधिः कदा किमर्थं संजातः इत्युच्यन्ते—तस्मिन्नेव देव गृहे अष्टान्हिकादिकमहोत्सवं कुर्वंतास्तेषां मध्ये अपरिणतवयसा केषांचित् चित्ते इयं दुर्बुद्धिः संजाताः । यदुत भगवत् महावीरस्य हृदये ग्रन्थी द्वयं पूजां कुर्वतां कुशोभा करोति अतः मशकरोगवत् छेदयितां को दोषः । वृद्धैः कथितं अयं अघटितः टंकिना घातो न अर्हः । विशेषतो अस्मिन् स्वयम्भू श्रीमहावीर बिंबे । वृद्धवाक्यमवगणय्य प्रच्छन्नं सूत्रधारस्य द्रव्यं दत्वा ग्रन्थिद्वयं छेदितं तत्क्षणादेव सूत्रधारो मृतः । ग्रन्थिच्छेदप्रदेशे तु रक्त धारा छुटिता । तत उपद्रवो जातः । तदा उपकेशगच्छाधिपति श्रीकक्कसूरिभिः पायम्दिः चतुर्विधसंघेनाहूता वृत्तांतं कथितं । आचार्यैः चतुर्विधसंघ सहितेन उपवास त्रयं कृतं । तृतीय उपवास प्रान्ते रात्रिसमये शासनदेवी प्रत्यक्षी भूय आचार्याय प्रोक्तं—हे प्रभो न युक्तं कृतं बालश्रावकैः मद्द घटितं बिंबं आशातितं । कलानीशकृतं अतोनंतरं उपकेशनगरं शनैः २ उपभ्रंशं भविष्यति । गच्छे विरोधो भविष्यति । श्रावकाणां कलहो भविष्यति । गोष्ठिका नगरात् दिशोदिशं यास्यंति । आचार्यैः प्रोक्तं परमेश्वरि भवितव्यं भवत्येव परं

त्वं श्रवतुरुधिरं निवारय। देव्या प्रोक्तं घृत घटेन दधि घटेन इक्षुरस घटेन दुग्ध घटेन जल घटेन कृतोपवासत्रय यदा भविष्यति तदा अष्टादशा गोत्र मेलं कुरु; तेमी १ तातहड गोत्रं। २ बापणा गोत्रं। ३ कर्णाट गोत्रं। ४ वल गोत्रं। ५ मोराक्ष गोत्रं। ६ कुलहट गोत्रं। ७ विरिहट गोत्रं। ८ श्रीमाल गोत्रं। ९ श्रेष्ठि गोत्रं। एते दक्षिण बाहु। १ सुचंती गोत्रं। २ आइचणा गोत्रं। ३ चारवेडीया गोत्रं। ४ भाद्र गोत्रं। ५ चींचट गोत्रं (देशलहरासाखा) ६ कुंभट गोत्रं। ७ कनउजया गोत्रं। ८ डिंडभ गोत्रं। ९ लघु श्रेष्ठि गोत्रं। एते वाम बाहु स्नात्रं कर्तव्यं नान्यथाऽशिवो शान्तिर्भविष्यति। मूलप्रतिष्ठानंतरं वीर प्रतिष्ठा दिवसातीते शतत्रये ३०३ अ नेहसि ग्रंथियुगस्य वीरोरस्थस्य भेदोऽजनि दैव योगात् इत्युक्तं श्रीमदुपकेशगच्छचरित्र सूत्रे श्लोक—१७२।

१५ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि। १६ तत्पट्टे सिद्धसूरि। १७ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि।

१८ एवं अनुक्रमेण श्रीवीरात् वर्षे ५८५ श्रीयक्षदेवसूरिर्बभूव महाप्रभावकर्ता द्वादशवर्षे दुर्भिक्षमध्ये वज्र स्वामी शिष्य वज्रसेनस्य गुरोः परलोकप्राप्ते यक्षदेवसूरिणा चत्वारि शाखाः स्थापिताः—

१९ तत्पट्टे कक्कसूरि। २० तत्पट्टे देवगुप्तसूरि। २१ तत्पट्टे सिद्धसूरि। २२ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि। २३ तत्पट्टे यक्षदेवसूरि। २४ तत्पट्टे कक्कसूरि। २५ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि। २६ तत्पट्टे सिद्धसूरि। २७ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि। २८ तत्पट्टे यक्षदेवसूरि। २९ तत्पट्टे कक्कसूरि। ३० तत्पट्टे देवगुप्तसूरि ३१ तत्पट्टे सिद्धसूरि। ३२ तत्पट्टे रत्नप्रभसूरि। ३३ तत्पट्टे यक्षदेवसूरि।

३४ तत्पट्टे कक्कुदाचार्य। तत्पट्टे देवगुप्ताचार्य। तत्पट्टे सिद्धाचार्य। एतानि पंच उपकेशगच्छाधिपाचार्याणां मूलनामानि। तत्पट्टे कक्कसूरि द्वादश वर्षयावत् षष्ट तपं आचाम्लसहितं कृतवान्। तस्यस्मरणस्तोत्रेण मरोटकोटे सोमकश्रेष्टिस्य शृंखला त्रुटिता। तेन चिंतितं यस्य गुरोः नामस्मरणेन बंधनरहितो जातः एकवारं तस्य पादौ वंदामि। स भरुकच्छे आगतः। अटणवेलायां सर्वे मुनीश्वरा अटनार्थं गतास्ति। सब-

का गुरो अग्रे स्थितास्ति। द्वारो दत्तोस्ति तेन विकल्पं कृतं। शच्यका शिक्षा दत्ता मुखे रुधिरो वमति। मुनीश्वरा आगता। वृद्धगणेशेन ज्ञातं भगवन् द्वारे सोमकश्रेष्ठि पतितोस्ति। आचार्यैः ज्ञातं अयं सच्चिकाकृतं। सच्चिका आहूता कथितं त्वया किं कृतं। भगवन् मया योग्यं कृतं। रे पापिष्ठ यस्य गुरुनामग्रहणे बंधनानि शृंखलानि त्रुटितानि संति स अणाचारे रतो न भविष्यति। परं एतेन आत्मकृतं लब्धं। गुरुणा प्रोक्तं कोपं त्यज शांतिं कुरु। तया कथितं यदि असौ शान्तिर्भविष्यति तदा अस्माकं आगमनं न भविष्यति प्रत्यक्षं। गुरुणा चिंतितं भवितव्यं भवत्येव स सज्जीकृतः। सच्चिकावचनात् द्वयोर्नाम भंडारे कृताः श्रीरत्नप्रभसूरि अपरश्री यक्षदेवसूरि एते सप्रभावा एतदनेहसि अस्य उपकेशगणस्य द्वाविंशति शाखा नामानि दत्तानि—

१ नागेन्द्र २ चन्द्र ३ निर्वृत्ति ४ विद्याधराणां स्थाने १ सुंदर २ प्रभ ३ कनक ४ मेरु ५ सार ६ चंद्र ७ सागर ८ हंस ९ तिलक १० कलस ११ रत्न १२ समुद्र १३ कल्लोल १४ रंग १५ शेखर १६ विशाल १७ राज १८ कुमार १९ देव २० आनंद २१ आदित्य २२ कुंभ इति। ततः तेनैव कक्कसूरिणा अर्बूदाचलमेखलायां तृषार्तस्य संघस्य डंड स्थापनने जलं प्रगटि कृतं। तेनैव साधर्मिक वात्सल्ये जेसलपुरात् भरुकच्छे घृतो आनीतः।

३५ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि। तत्पदमहोत्सवे पाठकाः पंच स्थापिता जयतिलकादि। तेन जयतिलकेन श्रीशान्तिनाथचरित्रं निर्मितं।

३६ तत्पट्टे सिद्ध सूरि। ३७ तत्पट्टे कक्क सूर। ३८ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि

३९ तत्पट्टे सिद्धसूरि। ४० तत्पट्टे कक्क सूरि। ४१ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि। सं० ९९५ वर्षे बभूव।

४२ क्षत्रीयवंशोत्पन्नत्वात् वीणावादने तत्परं क्रियाविषयं सिथिलः। ततः चतुर्विधसंघेन तत्पट्टे वीस विस्वोपकारकः स्थापितः श्रीसिद्धसूरिः।

४३ तत्पट्टे कक्कसूरिः पंचप्रमाणग्रन्थकर्त्ता। ४४ तत्पट्टे संवत् १०७२ वर्षे श्रीदेवगुप्तसूरि।

४५ तत्पट्टे नवपद प्रकरण-स्वोपज्ञटीकाकर्ता सिद्धसूरि। ४६ तत्पट्टे कक्क सूरि।

४७ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि। ४८ तत्पट्टे सिद्धसूरि। ४९ तत्पट्टे कक्कसूरि

५० तत्पट्टे संवत् ११०८ वर्षे देवगुप्त सूरिर्बुभूव। भीनमाल नगरे साह भईसाखेन पद महोत्सवे सप्तलक्ष धन व्ययो कृतः। ततोः गुरुणा पादप्रक्षाल्येन जले विषापहार लब्धी येन भइसाख श्रेष्ठिना श्रीदेवगुप्त सूरेः पद महोत्सवः कृतः। स पूर्वं डिंडुवाण पूरे भइसा भार्या छगणाणि स्थाप्यते ततो गुरूपदेशेन ज्वालितानि छगणानि रूप्यमयानि भवन्ति ततो तेन रूप्येन गदहिया मुद्रा पातिता। भइसाख माता श्री शत्रुंजय यात्रागता खरच तुट्यते पत्तन मध्ये ईश्वरश्रेष्ठिनः पार्श्वे खरचो याचिता। तेन पृष्टं भवती कस्य माता तेन कथितं अहं भइसाख माता। तेन हसितं अस्माकं गृहे पानीयमानयंति तेषां माता इति वितर्कितं। ततोऽनंतरं पश्चात् धनं गृहीत्वा यात्रां कृत्वा संघभक्ति कृत्वा गृहे जगाम। पुत्रेण पृष्ट मातः मम कियद्भूमौ नामं वर्तते। माता कथितं भवतां प्रतोली द्वारं यावन्नाममस्ति। तेन वचनेन असन्तोषो जातः। श्रेष्टि हास्यवचनं कथितं। तद्वचनं वालयिस्यामि तदा द्वितीय वेला भोजयिष्यामि। एवं प्रतिज्ञां कृत्वा पत्तने सामान्यवेषे द्वार हट्टे गतः। भो श्रेष्टि रूप्यं ग्रहिष्यसि। तेन कथितं रोषभरेण यत्किंचिदानयिष्यसि तत्सर्वे गृह्णामि। संचकारो याचितः तेन युष्माभिर्दीयते सवालक्ष मुद्रिका दत्ता। ततो गर्दभयानि भारयत्वा पत्तने जगाम। पृष्टं एतत्किं रूप्यं वर्तते एवं श्रुत्वा श्रेष्टिनः चमत्कृताः स श्रेष्टि समग्र पत्तन श्रेष्टि मेलयित्वा चरणे पपात। भइसाखस्तदेव कथितं गुर्ज्जरधरीत्रीमध्ये महिषेण पानीयमानयेतु तदा मोचयामि। तद्धनं देशे सप्तक्षेत्रे व्ययो कृतः। ततो गादिया इति शाखा जाता।

५१ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरि। ५२ तत्पट्टे श्री कक्कसूरि संवत् ११५४ वर्षे बभूव। येन हेमसूरि कुमारपाल वचसा कृपाहीना मुनिवरा निष्कासिता।

५३ तत्पट्टे देवगुप्तसूरि येन लब्धद्रव्यं त्यजितं। ५४ तत्पट्टे श्रीसिद्धसूरि। ५५ तत्पट्टे संवत् १२५२ श्रीकक्कसूरिर्बभूव येन मरोट कोटः प्रगटी कृतं।

५६ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि। ५७ तत्पट्टे श्रीसिद्धसूरि। ५८ तत्पट्टे श्रीकक्कसूरि।

६० तत्पट्टे श्रीसिद्धसूरि। ६१ तत्पट्टे श्रीकक्कसूरि। ५६ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि। ६२ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि। ६३ तत्पट्टे श्रीसिद्धसूरि। ६४ तत्पट्टे श्रीकक्कसूरि। ६५ तत्पट्टे श्रीदेवगुप्तसूरि।

६६ तत्पट्टे संवत् १३३० वर्षे चीचट गोत्रेऽतएव उवरराय स्थापितः श्री अर्बुदाचल तलहटीकालंकारो वरणीनगरतः शा० देशलेन श्री शत्रुंजयादि सप्त तीर्थेषु चउदश १४ कोटि द्रव्य व्ययेन चउदश यात्रा कृता चतुर्दश वारान्। प्रथमं देवगुप्तसूरि तत्पट्टे सिद्धसूरि प्रमुख समग्र सुविहित सूरि हस्तेन संघपति तिलकः कारितं। उक्तं च

श्रीदेशलः सुकृत पेसल वित्त कोटी। चंचच्चतुर्दश जगज्जनितावदातः
शत्रुंजय प्रमुख विश्रुत सप्त तीर्थः। यात्रा चतुर्दश चकार महामहेन॥१॥

तत्पुत्र समरसहजाभ्यां विमलवसत्युद्धारः कारितः संवत् १३७१ वर्षे। तथा एवमपरेऽपि तिर्थयात्रा कृत्वा संघपते पदं स्वीकीरितं इत्युक्तमुपदेशरसाले। साह देशलेन पाल्हणपुरे श्री सिद्धसूरि पद महोत्सवो कृतः तेन सिद्धसूरिणा समराग्रहेण शत्रुंजये षष्ठोद्धारे श्रीआदिनाथस्य प्रतिष्ठा कृता

६७ तत्पट्टे संवत् १३७१ वर्षे साह सहजागरेण श्री कक्कसूरि पद महोत्सवो कृतः। येन गच्छप्रबन्धः कृतः। तत्र देसल पुत्राः समर—सहजानां चरित्रमस्ति। एवं उपकेश गच्छे अनेक प्रभावका ग्रन्थकर्त्तारो निरीहा सूरयो अभूवन् तेषां कियद् गण्यते एवं—

६८ तत्पट्टे श्री देवगुप्तसूरि बभूवः। कवि सार्वभौम विद्वच्चक्रचूडामणि सिद्धान्तपारगामी सर्वशास्त्रपारंगत। श्री सारङ्गधरेण सं० १४०६ वर्षे ढिल्यां मध्ये पद महोत्सवो विहितः सुवर्ण सहस्र पंचक व्ययेन।

६९ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरिः संवत् १४७५ वर्षे गुणभूरय अणहिलपाटक पत्तने चोरवेडीया गोत्रे साह झावा नीवागरेण पद महोत्सवः कृतः गुरूणां ।

७० तत्पट्टे संवत् १४९८ वर्षे श्री कक्कसूरयः चित्रकूटे चौरवेडीया गोत्रे साह सारंग सोनागर राजाभ्यां पद महोत्सवो कृतः येन चतुर्दश शत चतुः चत्वारिंसत् अधिक १४४४ कच्छ मध्ये अमारी प्रवर्ताविता। याम श्री वीरभद्रः प्रतिबोधितः । संस्कृतप्राकृतपरमामृतप्रवाहा विरचित निखिलशास्त्रावगाहाः वाणीविलासवाचस्पतितुल्याः सकलकलारंजितकोविदाः धर्मबुद्धिधुरंधरा सकलपुरन्दराः ।

७१ तत्पट्टे सं० १५२८ वर्षे जोधपुरे श्रेष्टि गोत्रे मंत्रीश्वर जयतागरेण श्री देवगुप्तसूरेः महोत्सवे नव महोत्सवो कृतः । श्री पार्श्वनाथस्य प्रासादः कारितः पौषधशालायां च । श्री शत्रुंजय यात्रा कृता। पंच पाठकः स्थापिताः । तेषां नामानि श्री धनसार १ उ० देवकल्लोल २ उ० पद्मतिलक ३ उ० हंसराज ४ उ० मतिसागर ५ ।

७२ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरयो गुणभूरयः । श्री श्रेष्टि गोत्रे मंत्रीश्वर दशरथात्मजेन मंत्रीश्वर लोलागरेण संवत् १५६५ वर्षे मेदिनीपुरे पद महोत्सवः कृतः।

७३ तत्पट्टे श्री कक्कसूरयः श्री जोधपुरे संवत् १५९९ वर्षे गच्छाधिपो जातः श्रेष्टि गोत्रे मंत्रि जगात्मजेन मंत्रीश्वर धरमसिंहेन पद महोत्सवो कृतः ।

७४ तत्पट्टे श्री देवगुप्त सूरयः श्री श्रेष्टी गोत्रे मंत्रि सहसवीर पुत्रेण संवत् १६३१ मंत्री देदागरेण पद महोत्सवः कृतः ।

७५ तत्पट्टे विद्यमान संवत् १६५५ वर्षे चैत्रसुदि १३ सिद्धसूरिर्बभूव श्री श्रेष्टी गोत्रे मंत्रि मुगुट मंत्रि शेखर सर्व विश्व विख्यात राज्यभार धुरंधर मंत्रीश्वर महामंत्रि श्री ठाकुरसिंह विक्रमपुरे महा महोत्सवेन पद महोच्छवो कृतः ।

७६ संवत् १६८९ वर्षे फाल्गुण शुद्धि ३ श्री कक्कसूरिर्बभूव । श्री

श्रेष्ठि गोत्रे मंत्रि मुगुट मंत्रि ठाकुरसिंह तत्पुत्र मं० सावलकेन तत्पत्नी साहिबदेन पद महोत्सवो कृतः।

७७ संवत् १७२७ वर्षे मृगशिर सुद ३ दिने श्री देवगुप्तसूरिर्बभूव श्रेष्ठि गोत्रे मंत्रि ईश्वरदासेन पद महोत्सवो कृतः।

७८ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरि संजातः। श्रेष्ठि गोत्रे मंत्रि सगतसिंहेन पट्टाभिषेकः कृतः संवत् १७६७ वर्षे मृगशिर सुदि १० दिने जातः।

७९ तत्पट्टे श्री कक्कसूरिर्बभूव। मंत्रि दोलतरामेन सं० १७८३ वर्षे आसाढ वदि १३ दिने महोत्सवो कृतः।

८० तत्पट्टे देवगुप्तसूरि सं० १८०७ वर्षे बभूव। मुहता दोलतरामजीना पद महोत्सवो कृत।

८१ तत्पट्टे श्री सिद्धसूरिर्बभूव। संवत् १८४७ वर्षे महासुदि १० दिने पट्टाभिषेकः संजातः। मु० श्री खुशालचंद्रेण पदमहोत्सवो कृतः। तेषां प्रासादात् अहं कल्पवाचनं करोमि। पुनः दीक्षा गुरुप्रसादात्।

८२ तत्पट्टे श्री कक्कसूरिर्बभूव। संवत् १८९१ रा वर्षे चैत्र सुद ८ अष्टमीदिने पट्टाभिषेकः संजातः। वैद्य मु० ठाकुर सुत मु० सिरदारसिंह गृहे समस्त श्रीसंघेन बीकानेर मध्ये पदमहोत्सवः कृतः।

८३ तत्पट्टे श्री देवगुप्तसूरिर्बभूव। संवत् १९०५ वर्षे भाद्रवा सुदि १३ चंद्रवासरे पट्टाभिषेकः संजातः। श्रेष्ठि गोत्रे वैद्य मुहता शाखायां प्रेमराजो तस्य परिवारे हठीसिंघजी ऋषभदासजी मेघराजजीकानां उत्संगे गृहीत्वा श्रीफलोधीनगरमध्ये समस्त वैद्य मुहता पट्टाभिषेको कृतः। तेषां प्रासादात् कल्पवाचनां करोमि।

८४ तत्पट्टे श्रीसिद्धसूरिर्बभूव। संवत् १९३५ वर्षे माघ कृष्ण ११ दिने पट्टाभिषेक संजातः श्रेष्ठि गोत्रे वैद्यमुहता शाखायां ठाकुर सुत महरावजी श्रीहरि सिंहजी पद महोत्सवः कृतः वृद्ध गृहे मध्ये धांसीवाला सुरजमलजी हस्तात् समस्त श्रीसंघसहितेन विक्रम पुर मध्ये देवदुष्य रंजित छटिका राज्य द्वारात् समागता। तेषां प्रासादात् अहं कल्पवाचनां करोमि इति॥

परिशिष्टम्—१ [मुद्रिते षोडशतमे पत्रे अनुपूर्तिः]

दुष्षमाकालश्रीश्रमणसंघस्तोत्र-संबंधः

(सूचना—ह्येतत्स्तोत्रं मुद्रितम्, पश्चात् पूज्यतमप्रवर्तकानां श्रीमतां कांतिविजयानां प्रतिर्मिलिता यस्यां विशिष्टता शुद्धिश्चाऽस्ति, अतस्तस्याः १६ श्लोकेभ्यः "परतः" सर्वासां गाथानामत्र पुनर्मुद्रणं क्रियते)

(तित्तीसं लक्खाओ, चउरसहस्साइं चउसयाइं च ॥
इगनवइ दुसमाए, "सूरिणं" मज्झिमगुणाणं ॥ २० ॥)
(पंचावन्नाकोडी, लक्खाणं हुंति तह सहस्साणं ॥
चउपन्नं कोडिसया, चउआलीसा य कोडीओ ॥ २१ ॥)
(इति उपाध्याय—वाचनाचार्यसंख्या)
तह सत्तरि कोडिलक्खा, नवकोडि सहस्सकोडिसयमेगं ॥
इगवीसकोडि इगलक्ख, सट्ठिसहस्सा सु "साहूणं" ॥ २० ॥
समणीण कोडिसहस्सा, दस नवकोडिसय बार कोडिओ ॥
छप्पन्नलक्ख बत्तीस—सहस्स एगूण दुन्निसया ॥ २१ ॥
तह सोलकोडिलक्खा, तिन्नकोडिसहस्स तिन्निकोडिसया ॥
सत्तरकोडि चुलसी—लक्खा सुसावगाणं ॥ २२ ॥
पणतीसकोडिलक्खा, सु"साविया" कोडिसहसबाणउई ॥
पणकोडिसया बत्तीस, कोडि तह बारसब्भहिया ॥ २३ ॥
एवं देविंदनयं, सिरि विज्जाणंद "धम्मकित्ति" पयं ॥
वीरजिणपवयणठिय दूसमसंघं नमह निच्चं ॥ २४ ॥

इति दुष्षमाकालश्रीसंघस्तोत्रं ॥

लिखितं पूज्यपं० "लक्ष्मीभद्र" गणिशिष्येण । श्रीस्तंभतीर्थमहानगरे ॥ सं० १५१६ वर्षे । वदि१२दिने ॥ ज्ञानमाणिक्यगणिना ॥

टिप्पनकम्—२००४ एतावंतो युगप्रधानाः (१६)। युगप्रधानसमानाः १११६००० (१८) सुचारित्रसूरयः ५५५५५५००००००० (१६) मध्यमगुणसूरयः ३३०४४६१ पाठांतरे ५५५५५५५४४,। ४३३-२६४६१ (२०) उपाध्यायवाचनाचार्यसंख्या ५५६०४४४००००००० (२१) सुसाधवः १७०६१२१०१६०००० (२२) श्रमण्यः १०६१२५६-३२१६६ (२३) सुश्रावकाः १६०३३१७८४०००० (२४) सुश्राविकाः ३५६२५३२००००००१२ (२५)॥ उक्ताधिकं, उत्तमनृपाः १११६०००॥ निर्गुणसूरयः ५५५५५५५०५॥ छ॥

इदं गाथाद्वयं विंशत्येकविंशतितमसंख्यं दीपालिकाकल्पादत्र लिखितं॥ अधिकारत्वादिति ज्ञेयं॥

एत्थं चायरियाणं, पणपन्नं होंति कोडिलक्खाओ॥
कोडिसहस्से कोडि—दसए तह एत्तिए चेव॥ १॥

इति श्रीमहानिषिथे॥

परिशिष्टम्—२

कालिकात्तास्थश्रीतपागच्छसंघग्रंथभांडागारस्य श्रीकल्पसूत्रस्थविरावलीभाषापुस्तकान्ते एता गाथा लिखिताः सन्ति—

रहवीरपुरे नयरे सिद्धिगयस्स वीरनाहस्स।
छसै नवहुत्तरीए खिमणा पाखंडिया जाया॥ १॥
दुब्भिक्खंमि पणट्ठे पुणरवि मिलित्त समणसंघाओ।
मिहुराए अणुओगो पवईओ खंदिलो सूरि॥ २॥
बारसवाससएसुं पुणिमदिवसाओ पक्खियं जेण।
चाउद्दसी पठवेसुं पकप्पीओ साहिसूरिहिं॥ ३॥
पणपण बारसएहीं हरिभद्दोसूरि आसि पुवकए।
तेरस वीसअहिए अहए बपभट्टपहू॥ ४॥

इति थविरावली समाप्तं॥ सं० १८५० वर्षे शाके १७१५ प्रवर्तमाने मागसिरशुदि४थशनौ। श्रीनवानगरमध्ये। श्रीसंतनाथजीप्रसादात्। बृहत्खरतरगच्छे बृहत्खेमशाखायां। पं० रूपचंदमुनिलिखितं। श्रीः॥

परिशिष्टम् — ३

राजवंशाः

(A) नृपकालगणना (तित्थोगालीयपइन्नयं)

जं रयणिं सिद्धिगओ, अरहा तित्थंकरो महावीरो ।
तं रयणिं अवंतीए, अभिसित्तो पालओ राया ॥ ६२० ॥
१ पालगरण्णो सट्ठी ६०, पुण पण्णसयं १५० वियाणि नन्दाणं ।
=मुरियाणं सट्ठिसयं १६०, पणतीसा ३५ पुसमित्ताणं + ॥६२१॥
÷ बलमित्ता–भाणुमित्ता, सट्ठा ६० चत्ता ४० य होंति × नहसेणे ।
गद्दभसयमेगं १०० पुण, पडिवन्नो सो सगो राया ॥ ६२२ ॥
पंचय ५ मासा पंचय—वासा छच्चेव होंति वाससया ६०५ ।
परिनिव्वुअस्सऽरिहन्तो, तो उप्पन्नो सगो राया ॥ ६२३ ॥

(B) अस्मिन्नेव ग्रंथे १७–४६तमे पत्रे (विचारश्रेणौ पावापुरीकल्पे च)

१—महनिव्वाण निसाए, गोयम ? पालयनिवो अवंतीए ।
होहीइ पाडलीअपहू, सो असुयउदाइनिवमरणे ॥१॥ युग० यंत्र० ।

पालकस्य भ्राता गोपालको दीक्षितः पालकपुत्रौ अवन्तिवर्धनराष्ट्रवर्धनौ । राष्ट्रवर्धनपुत्रौ अवन्तीषेण—मणिप्रभौ उज्जयिनीकौशाम्बीनृपौ इति आ० नि० ६११ ।

= वी० नि० सं० २१४ राजगृहे मौर्यवंशी बलभद्रो नृपः। इति आ० नि० प० ३१५ ॥

+ पुष्यमित्रो यावत्संघारामं भिक्षूंश्च प्रघातयन् प्रस्थितः स यावत् शाकलं (श्यालकोट) अनुप्राप्तः । तेनाभिहितं यो मे श्रमणशिरो दास्यति तस्याहं दीनारशतं दास्यामि ॥ इति दिव्यादाने २९॥ मुडिंवतो आयरितो सुहज्झाणो, तस्स पुस्समित्तेणं झाण विग्घंकतं ।–इति, व्यवहार सूत्र उ० ६ अवचूर्णौ ।

कलिंगनृपेण यस्मात् जिनमूर्तिः प्रापि । इति हाथीगुफालेखे ।

÷ उज्जयिन्यां भगिनीभोगी दर्पणराजा, सरस्वतीहरणेन आजीविकान्निमित्तपाठिकालिकाचार्यप्रेरितैः पण्णवतिशाहिनृप–भृगुकच्छपतिबलमित्र–भानुमित्राद्यैः

(C) राज्यत्व कालगणना

श्रीवीरनिर्वाणात् विशालायां पालकराज्यं २० + वर्षाणि । एतेन सहितं सर्वनन्दराज्यं १७८ । १०८ वर्षाणि मौर्यराज्यं, वर्ष ३० पुष्यमित्रा-

---

हतः । मुख्यशाहीराजा बभूव, तस्य शकवंशः, ततो बलमित्रो राजा–भानुमित्रो युवराजा जातः । तत्समये तन्मातुलाः कालकाचार्या उज्जयिन्यां समागताः वि० सं० ४५३ । येन प्रतिष्ठानपुरे शातवाहननृपानुरोधतः पंचमीतश्चतुर्थ्यां पर्यूषणापर्वानितं, सर्वसंघेन तत्प्रमाणीकृतं ॥ —इति, बृहत्कल्पभाष्य–चूर्णिः, पंचकल्पचूर्णिः निषीथ चूर्णिः अ० १०, कथावली, व्यवहारचूर्णिः उ० १०, कालिकाचार्यकथा, वीरनिर्वाण० कालगणना, श्रीप्रभावकचरित्रे विजयसिंहप्रबन्धः पादलिप्तप्रबन्धः ।

÷ चत्वारः कालिकाचार्याः तद्यथा–प्रथमः १ शक्रप्रतिबोधकः प्रज्ञापनासूत्रकृत् श्रीस्वातिसूरिशिष्यः श्यामाचार्यः वी० सं० ३२० तः ३३५ ॥ द्वितीयः २—अविनीतशिष्यत्यागी आजीवाकान्निमित्तपाठी गर्दभिल्लोच्छेदकः इंद्रप्रश्नोत्तरदाता, चतुर्थीपर्युषणाकारकः श्रीखपटाचार्य—श्रीपादलिप्तसूरिसमकालीनः वी० सं० ४५३ ॥ तृतीयः ३—आर्य विष्णुसूरिशिष्यः वी० सं० ७२० ॥ ४—श्रीदेवर्द्धिगणिसमकालीनः, भूतदिन्नशिष्यः, माथुरीवाचनासहायकः आनन्दपुरे कल्पसूत्रव्याख्यानरूपेन चतुर्विधसंघे चतुर्थ्यां पर्वप्रवर्तकः वी० सं० ९९३, वाचनाभेदात् वी० सं० ९८१ ॥ इति उत्तराध्यननिर्युक्तिः, विचारश्रेणिः, रत्नसंचयप्रकरणः, कालसप्ततिका गा० ४१ ॥

+ एतत्संख्याभेदस्तु श्रीभद्रबाहुस्वामि–पश्चाज्जातचंद्रगुप्तयोः कालैक्य साधनार्थं । अतएव श्रीहेमचंद्रसूरिभिरपि परिशिष्टपर्वणि सर्गं ३, श्लो० २४३ सर्गं ८ श्लो० ३८९ गणनायां पालकस्य षष्ठिः वर्षाणि न स्वीकृतानि । एवं बौद्धगणनायामपि अजातशत्रुतः नवनन्दावधि १७० वर्षाणि ॥ वायुपुराणेपि अ० ६६ श्लो० ३६८ महापद्मानंदस्यन्दस्थाने २८ वर्षाणि दत्तानि, तानि च शूगवंशे नव्यनामयुग्मेन पूर्णीकृतानि ॥

× भृगुकच्छे नहपानः प्रतिष्ठाने सालवाहन एतौ समकालिनौ, सालवाहनेन नहपानः पराजितः । इति आवश्यकनिर्युक्तिपत्रं ७१२ ॥

र्णां, बलमित्रभानुमित्रराज्यं ६० वर्षाणि। दधिवाहनराज्यं ४०। तदा ४१६। तदा च देवपत्तने चंद्रप्रभजिनभूवनं भविष्यति। अथ गर्दभिल्लराज्यं वर्ष ४४, तदनु वर्ष ५० शकवंशा राजानो जीवदयारता जिनभक्ताश्च भविष्यन्ति। श्रीवीरात् ४७०

कालंतरेण केणवि, उप्पाडित्ता सगाण तं वंसं।
होही मालवराया, नामेणं विक्कमाइच्चो ॥ १ ॥
तो सत्तनवइ ९७ वासा, पालेहि विक्कमो रज्जं।
अरिणत्तणेण सो विहु, विहए संवच्छरं निययं ॥ २ ॥
संवच्छरं तुलत्तं तम्मि सययंमि गणनाह।

श्रीवीरात् ५५० विक्रमवंशः तदनु वर्ष ३८ शून्यो वंशः।
श्रीवीरात् ६०५ शकसंवत्सरः ॥—इति, श्रीमेरुतुङ्गीयविचारश्रेणौ ॥

(D) राजगृही-पाटलिपुत्र-राजवंशाः

अधर्मि × प्रद्योतवंशानन्तरं, शिशुनागः। काकवर्णः शकवर्णो वा। क्षेत्रधर्मा क्षेत्रवर्मा वा। क्षेमजित् क्षेत्रज्ञः (प्र) सेनजीत् वा ॥ विधिसारो विन्ध्यसेनो बिंबिसारो वा व० २८। अजातशत्रुः (कोणिकः) व० २७ ॥ वंशको दर्शको दर्भको वा, व० २४ वा व० २५ ॥ अजयः उदासी उदायी वा व० ३३ ÷॥ नन्दिवर्धनः व० ४० वा व० ४२ ॥ महानन्दिः व० ४३॥ इतिक्षत्रबांधवानां × शिशुनागानां ३६० वा ३६२ वर्षाणि राज्यम् ॥

महानन्दिसूनुः शूद्रायां जातः महापद्मपतिः व० ८८। अष्टौ नन्दाः व० १२ ॥ इतिशूद्रयोनीनां × नन्दानां १०० वर्षाणि राज्यम् ॥

मोर्यः चंद्रगुप्तः व० २४ वा०...। वारिसारो भद्रसारो बिंदुसारो वा, व० २५ वा...। शोकः अशोको वा व० २६ वा व० ३६। दशरथः

× प्राय इदं परधर्माऽसहिष्णुतापरं अ-शैवनृपनिंदावचनम् ॥

÷ येन गंगाया दक्षिणे कुले पाटलिपुत्रं स्थापितं तत्रैव च राज्यं कृतं जिनभुवनमपिनिष्पादितं इति आवश्यकवृत्तौ ६८७-६६० पत्रेषु, आवश्यकचूर्णौ, परिशिष्टपर्वणि, अर्णिकापुत्रचरित्रे च ॥ तद्द्वितीयं नाम कुसुमपुरं इति वायुपुराणे अ० ६६ श्लो० ३१६, ब्रह्मांडपुराणे म० भा० उपा० ३ अ० ७४ श्लो० १३२ ॥

सुयशा कुशालः कुणालो, वा व० ८।। बन्धुपालितः संगतः सप्रतिः संप्रतिः वा, व० ८ वा व० ९ । इंद्रपालितः शालिशूको वा, व० १० वा...। सोम-शर्मा देववर्मा वा, व० ७ वा...। शतधन्वा शतधरः शतधन्वापुत्रो वा, व० ८ वा व० ६ ।। बृहद्रथः व० ७ वा व० ७०।। इति ९ (१०) मौर्याणां १३७ वर्षाणि राज्यम् ।।

पुष्यमित्रः व० ३६ वा व० ६० । सुज्येष्ठप्रमुखाः नव वा दश शूंगाः व० ६६ वा व० ७५ ।। येषूपान्त्यो राजा समाभागो विक्रममित्रो (बलमित्रो) विक्रमादित्यो वा ।।

इति धार्मिकाणां + शूंगानां १०२ वा ११२ वर्षाणि राज्यम् ।।

इति--भागवतं, स्कंध १२, अ० १, श्लो० ५–१८ ।।

मात्स्यं, अ०२७२, श्लो०६–३२ । आ०सं०ग्रं०ग्रं०, ५४ प०५५३।।
वायुपुराणं, अ०९९, श्लो०३१५–३४३ ।। आ०सं०ग्रं०४९, प०३८३।।
ब्रह्मांडपुराणं, म०भा०उ० ३, अ०७४,श्लो० ३११–३३७ ।।
तथा विष्णुपुराणं ।।

(E) बौद्धगणानायां राजवंशाः

अजातशत्रुः व० ३२, उदायी व० १६, अनुरुद्धमुण्डः व० ८, नागदासक० व० २४, सुसुनागः व० १८ कालाशोकः व० २८, तत्पुत्राः व० २२ ।। नवनन्दाः २२, चंद्रगुप्तः २४, बिन्दुसारः २८, अनभिषिक्त अशोकः ४। अशोक......।।

इति, महावंशः परिच्छेद-४ श्लो० १–८ तथा परि० ५ श्लो० १४–२२ ।।

तस्मिंश्च समये कुनालस्य सम्पदीनाम पुत्रो युवराज्ये प्रवर्तते। × × पृथिवीं निष्क्रिय संपदी राज्ये प्रतिष्ठापितः ।। इति दिव्यादानं २९ ।।

तथा—तत्पौत्रः (अशोकपौत्रः) सम्पदी नाम,......

इति क्षेमेंद्रकृता बोधिसत्वावदानकल्पलता पल्लव-७४

+ तदा शैवधर्महिता राज्यक्रान्तिर्जाता, विप्रसाहायात् सेनानी पुष्पमित्रो नपं हत्वा नृपो बभूव, यं पौराणिकाः प्रशंसन्ति, बौद्धाश्च निन्दन्ति ।।

परिशिष्टः — ४

[ऐतिहासिकं पत्रं]

(कलकत्तावाला बाबु पुरणचंदजी नहारना भंडारमांथी)

सं० १११५ नागोरकोट मंडाणो वैशाखसुद ३ (   ) ठे वासिदाहिमौ

सं० १२१२ रावल जेसे "जेसलमेर" वसायो, श्रावण शुद १२

सं० ११८१ फलोदी "पार्सनाथ" देवलरी स्थापना हुइ

सं० १२०२ अजैयासार " अजमेर " वसायो सही

सं० ७०३ दिलि तुवर वसाइ अनङ्गपाल तुअर

सं० १३१३ अलावदी पातसाह जालोरगढथी लडीयो, वीरमदे काम आयो

सं० १५०० राणा उदैसंघ उदैपुर वसायो

सं० १२१५ सहसमल देवडै सीरोइ वसाइ

सं० १५१५ जोधपुर वसायो, जोधैराव जेठ सुद ११

सं० १५४५ वीकानेर वसायो राव वीकै जोधारै बेटै

सं० १५४५ फलोदीरो कोट करायो हमीर नरावत

सं० १६४५ नवो कोट वीकानेररो करायो, राजारायसंघजी कामदार करमचन्द बछावत करायो

सं० १६१६ अकबरपातसाह अकबराबाद कोट करायो, आगरो जमुना नदीरै उपरै हुतो,

सं० १६२४ चितोडगढ पालटीयो पालटीयो पातसांही अकबर पालटीया, जै(जय)मल इसर मेडतीयो कांम आयो

सं० ११०० नाहडराव मंडोवर वसायो

सं० १४७१ अहमद पातस्याह अहिमदावाद वसाइ

सं० १६४४ पातिसाह अकबर अहमदाबाद लीधो,

सं० १६६६ किसनसंघ राजा (किसनसंघ राजा) किसनगढ वसायो,

सं० १२४० राजा कुमारपाल हुओ जइनधर्म राखीयो,

सं० ११६३ विमल मंत्रीसर हुआ आबु देहरा कराया

सं० १२६३ वस्तुपाल तेजपाल हुआ आबुजात्राकरनै आबु उपर देहरा कराया, वीरधवलवाघेलारा कामदार हुआ पगे पगे निधानहुआ वरस ३६ नो आउखो हुओ

सं० १५६६ दुदैजी मेडतो वसायो, आगै मांनधातारो हुओ ।

सं० १५५(?) जांम नवोनगर वसायो हलारमै

सं० १७३५ ओरंगाबाद वसायो औरंगसा पातस्याह

सं० १७८३ सवाइ जेसंघ जैपुर वसायो

सं० ७०छ(?) राजूवीरनारायण सिवांणो गढ करायो

सं० ६०६ चित्रांगद सोरीयो चित्रोड वसाइ

इति श्री गावोटरी वीगत संपुरणं सं० १८२२ गांव दीयावड नागोररी पटी कुपावतराज श्रीठाकुरसीवकरणजी लुणकरणोत केसरसंघोत केसरसंघ सब भए मोत सबलसंघ दलपतसंघोतरी सीवकरणजी दैकवरराचैनसंघजी कुबार कनजी, दुवार सेरसंघ कुवारप्रथीराज

(श्रीजैनश्वेताम्बरकान्फरन्सहेरल्ड पु० १४ अं० ४, ५, ६, वीर सं० २४४४ सं० १६७४)

परिशिष्टम् — ५

८४ गच्छाः (जैनसाहित्यसंशोधकः खं० ३ अं० १)

ओसवाल	मलधार	कुतगपुरा	सिद्धपुरा
जीरावला	भावराज	काछेलिया	घोषा(घ)रा
वडगच्छ	पल्लीवाल	रुद्रोली	नीगम
पुनमिया	(नागराल)	(रुद्रपालीय)	संजना (ती)
गंगेसरा	कोरंडवाल	महु(देव)करा	बारेजा
कोरंटा	नागेन्द्र	कपुरसीया	(वरडेवा)
आनपुरा	धर्मघोष	पूर्णतल	मुरंडवाल
भरुअच्छा	नागोरी	रेवइया	(सुरंडवाल)
उढवीया	उछितवाल	धुंधुका	नागउला
गुदविया	नाणावाल	थंभणा	
उ(द)काउआ	सांडेरवाल	पंचवलहीया	*१२ मतानि*
भीन्नमाल	मंडोवरा	पालणपुरा	आंचलिक
भुडासीया	सुराणा	गंधारा	पायचंद
दासवि(रु)आ	खंभाती	गुवेलिया	बीजा
गच्छपाल	वडोदरीया	सार्धपुनमीया	आगमिक
घोषवाल	सोपारा	न(म)गरकोटीया	काजा
संगोडी	मांडलीया	हीसारीया	तपा
ब्राह्मणीआ	कोठी(त्थो)पुरा	भटनेरा	[वडगच्छ]
जालोरा	जांगला(डा)	जीतहरा	लुङ्का
बोकडिया	छापरीया	(सोरठीया)	पाटणीया
मुडा(भा)हरा	(बावरावाल)	जगायन	साकर
चितो(त्रो)डा	बोरसडा	भीमसेन	कोथला
साचोरा	द्विवंदनीक	आ(ता)गडीया	कडुआ
कुचडीया	चित्रवाल	कंबोजा	आत्ममती
सिद्धांतीया	वेगडा	सेवंतरीया	
रामसेनीया	वायड	वाघेरा	( ) मतांतराणि
आगमीक	विजाहरा	वा(व)हेडीया	

परिशिष्टम्—६

॥ लघुपट्टावली ॥

[*अथ लघुपट्टावली लिख्यते*]

विदितसकलशास्त्रान् पार्श्वचंद्रान् कवींद्रान्,
भजत समरचंद्रान् भव्यराजीव सूर्यान्,
नमत विशदमूर्तीन् राजचंद्रान् मुनींद्रान्,
विमलविमलचंद्रान् सर्वसुरींद्रमुख्यान् ॥ १ ॥ मालिनी छंदः ॥
तत्पट्टे जयचंद्रसूरिमुनिपा जीता जगत् विश्रुताः,
तत पट्टोदयभास्करा गणिवराः श्रीपद्मचंद्रा बभुः,
तत्पट्टे मुनिचंद्रसूरिगणिनो नंदंतु भट्टारका—
स्तत्पट्टाब्जविभाकरा गणिवराः श्रीनेमिचंद्राह्वयाः ॥ २ ॥ शार्दूलः ॥
तत्पट्टे कनकेंदुसूरिगणिपा जाता जगत्युज्वलाः,
तत्पट्टे शिवचंद्रसूरिमुनिपा विख्यातकीर्तिव्रजाः
तत्पट्टे विमलप्रबोधसहिताः श्रीभानुचंद्राभिधाः
तत्पट्टे च विवेकचंद्रयतिपा जाता जगत्पूजिताः ॥ ३ ॥ शार्दूलः ॥
तत्पट्टमानससरोवरराजहंसाः,
श्रीलब्धिचंद्रमुनिपाः प्रबभूवुरेवं,
तत्पट्टभास्करनिभा विलसद्गुणौघाः
श्रीहर्षचंद्रमुनिवृन्दवरा अजैषुः ॥ ४ ॥ वसंततिलका ॥
तस्मिन्पट्टे प्रजयतितरां हेमचंदो मुनींद्रः
सुरलोकौघैर्विदितमहिमा गांगमंभश्चलोके,
जैने धर्मे चरिततपसा श्रावकैर्गीतकीर्ति—
र्मान्यो धीमान् विमलकविताकोमलोद्गीर्णवाणिः ॥ मंदाक्रांता ॥

संवत् १९३२ मिति जेठ सुदी १२ शनिवासरे
श्रीमकसूदाबाद अजीमगंज में मुन्नीलाल के वास्ते +

+ श्रीयुतपूरणचंदजी नाहर इत्येतेषां भंडारतः प्राप्तं
जैनश्वेताम्बरकान्फरन्स हेरल्ड पु० १४ अंक ४–५–६ वीर सं० २४४४

परिशिष्टम् ७

पल्लीवालगच्छ-सत्क ऐतिहासिकसंग्रहः

सं० ११४४ माघशुक्ल ११, सांप्रतं निःशेषनयसंजुते प्रद्योतनाचार्यगच्छे, ऐंद्रदेवसूरिणा, श्रं० बांधवैः, पालीग्रामे वीरमन्दिरे खत्तके प्र० का० ।

सं० ११५१ आ० शु० ८ गुरु, पल्लकीये प्रद्योतनाचार्यगच्छे, लखमलेन (पालीग्रामे) वीरचैत्ये देवकुलिका कारिता ॥

सं० १२१३ आ० व० १, भ० देवभद्रसूरि-शिष्यसिंहसेनसूरिणा, भं० देदा, पल्लिकायां ऋषभचैत्ये, प्रतिमा कारापिता ॥

सं० १३०० वै० व० ११ बुधैः, चंद्रगच्छीय हरिभद्रसूरिशिष्ययशोभद्रसूरिणा, सहजिगपुरवास्तव्य-पल्लीवाल ज्ञातीयठ० रतनपालेन बिं० का० ।

सं० १३२७ फा० शु० ८ वडगच्छे कुत्रडे माणिक्यसूरिणा, पल्लीवाल ज्ञातीय ठ०···प्रतिष्ठा कारापिता ॥ (अहमदावाद)

सं० १३३८ वै० शु० २ शनिः, पल्लीवालज्ञातीय ठ०···मल्लि बिंबं कारापितं, पूर्णभद्रसूरिभिः प्रतिष्ठितं ॥

सं० १३४० ज्ये० व० १० शुक्रः, कोरंटीयगच्छे × × सूरिणा, पल्लीवाल ठ०······प्रतिष्ठितं ॥

सं० १३५६ ज्ये० शु० १५ शुक्रः, कुलगुरु···आदेशेन, पल्लीवाल ज्ञातीय···देवकुलिका कारिता । (ली० आँ० रि० इ० ब्रा० प्रे० पृ० ३६३)

सं० १३७१ आ० शु० ८ रविः, पल्लीवालज्ञातीय० प्रतिष्ठा ॥

सं० १३८३ वै० व० ७ सोमः, पल्लिवाल-कीकमेन, प्रतिष्ठा० ॥

सं० १३६७ मा० शु० १० शनिः, धर्मघोषगच्छे मानतुङ्गसूरि-शिष्य हंसराजसूरिणा, पल्लीवालज्ञातीय ठ० छाडा, बिंबं कारितं ॥

सं० १४५८ फा० व० १ शुक्रः, पल्लीगच्छे शांतिसूरिणा, उपकेशीय-हट्टचायी जो०······प्रतिष्ठा ॥

सं० १५०७ फा० व० ३ पल्लीवालगच्छे यशोदेवसूरिभिः, उपकेश-धाकडगोत्र······प्रतिष्ठा कारिता ॥

सं० १५०८ ज्ये० शु० १०, श्रीपल्लिगच्छे, श्रीमालीज्ञाती-भंडावतगोत्रे शा० भोजा......कारितं ॥

सं० १५१० फा० व० ३ शुक्र:, अञ्चलगच्छे जयकेसरसूरिणा, पल्लीवाल ज्ञातीय-मं० मंडलिक......प्रतिष्ठा०

सं० १५११ मा० व० ५ शुक्र:, पल्लीवालगच्छे यशोदेवसूरिणा, जिनपट्टः प्रतिष्ठित: ॥ (बामणवाडा) ॥

सं० १५१३ वै० शु० २ सोम:, श्रीपल्लिगच्छे श्रीयश:सूरिउपदेशेन, ओसवाल—छाजडगोत्रे माधा इत्यनेन प्रतिष्ठा कारापिता ॥

सं० १५२८ मा० व० ५ बुध:, पल्लिवालगच्छे नन्नसूरिभि:, ओसवाल—धनेरियागोत्रे बिंबं कारापितं ॥

सं० १५२८ चै० व० १३ सोम:, पल्लीगच्छे नन्नसूरिपट्टे उज्जोयणसूरिभि:, उपकेशज्ञातौ वर्द्धनगोत्रे जिणदासकेन बिंबं कारापितं ॥

सं० १५३६ आ० शु० ६ श्रीपल्ली० भ०श्रीउजोअणसूरिभि: बिं०प्र०॥

सं० १६६७ भा० शु० ५ (६) शुक्रे पल्लीगच्छे भ० यशोदेवसूरिराज्ये तेजसोजी विजयराज्ये उ० देवशेखरविजयराज्ये श्रीवीरमपुर (नाकोडा) संघेन कारितं । श्रीसुमतिशेखरेण लिपीकृतं ॥

सं० १६७८ द्वि० आ० शु० २ रवि:, श्रीपालकीयगच्छे भ० यशोदेवसूरिविजयमाने छाजड......संघेन नाकोडातीर्थे वीरचैत्ये चतुष्किका कारिता ॥ पं० सुमतिशेखरेण लिखितं ॥

आषाढादि सं० १६८१ चै० व० ३ सोम:, पल्लीवालगच्छे भ० यशोदेवसूरिविजयमाने, श्रीपल्लीगच्छसंघेन (वीरमपुरे) पार्श्वचैत्ये निर्गमचतुष्किका कारापिता ॥ उ० हरशेखर—शिष्य उ० कनकशेखर—शि० उ० देवशेखर शि० उ० कनकशेखर—शि० उ० सुमतिशेखरेण लिखितं ॥

इति श्वेतांबरीय:पल्लीवालगच्छ: वडगच्छ—कोरंटगच्छसमाचार: ॥

तस्यक्षेत्रं—पाली, सहजिगपुरं, कोरंटा, बामणवाडा, वीरमपुर, नाकोडा ॥

तद्गच्छाऽन्यनामानि—प्रद्योतनाचार्यगच्छ, पल्लकीय, पालकीय, पल्ली, पल्लीवाल ॥

एवं जयपुरराज्येपि पल्लीवालसंस्थापितं श्वेतांबर-दीगंबरैरुपास्यमानं "श्रीमहावीरजी" नाम्ना श्वेतांबरतीर्थमद्यापि वर्तते ।

पट्टावली-समुच्चयान्तर्गत-शब्दानां

अकाराद्यनुक्रमः ॥

अकाराद्यनुक्रमस्य सूचिः

A *श्रीतीर्थंकर-गणधराणां नामानि ॥*

(अस्मिन्ननुक्रमे आदिस्थैः श्रीभगवदादिभिः अन्तस्थैः स्वामिगण-धरादिभिश्च सामान्यपदै रहितानि केवलानि तीर्थंकर-गणधरनामानि दर्शितानि सन्ति, एवं सर्वत्र ज्ञेयं)।

B *श्रीजैनश्वेतांबरश्रमण-श्रमणीनां नामानि ॥*

(प्रारंभस्थिताज्ञाचार्येत्यादिभिः प्रान्तस्थसूरिगणिविजयप्रमुखैः सामान्यपदै रहितानि शुद्धानि जैनश्वेतांबराचार्योपाध्यायपं०पन्यास-साधुसाध्वीनामानि)।

C *षड्दर्शन-ज्ञाति-गच्छ-कुलानां नामानि ॥*

(विविधदर्शन-ज्ञाति-मतानां, जैनीयगणगच्छकुलवंशगोत्रशाखा-प्रशाखादीनां नामानि)।

D *गृहस्थानां नामानि ॥*

(राजा-मंत्रि-मंडलिक-संघपति-श्रेष्ठि-कवीनां नामानि)।

E *देश-नगरादीनां नामानि ॥*

(देश-ग्राम-नगर-गिरि-नदी-सरः-स्थान-तीर्थानां नामानि)।

F *ग्रन्थ-स्तोत्राणां नामानि ॥*

(निर्युक्ति-भाष्य-चूर्णि-टीका-टिप्पनक-विवरण-पञ्जिका-सार-स्तबक (टब्बो) प्रमुखवैशेष्यरहितानि केवलमूलग्रन्थानां नामानि)।

G *इतरधर्माचार्य-ऋषि-देव-बिरुदानां नामानि ॥*

(जैनस्थानकमार्गि-दिगंबरसाधूनां, निन्हवानां, जैनेतरधर्माचार्याणां, बिरुदानां च नामानि)।

तथा—अत्र नाम्नां अक्षरभेदः चंद्र ( ) बन्धे दर्शितोस्ति, यथा अज्जवयर-अज्जवईर अनयोः स्थाने "वय (इ) र" इति ॥

नाम्नामधिका अक्षराश्चतुष्क [ ] बन्धे दर्शिताः सन्ति ॥

कानिचिन्नामानि एकस्मिन्पत्रे बहुश उल्लेखितानि प्राप्यन्ते, तानि सर्वाण्यत्र एकपत्रांके एव न्यासीकृतानि, यथा-१६२तमेपत्रे "कक्कसूरिः" इति॥

A श्रीतीर्थंकर–गणधराणां नामानि ॥

B *श्रीजैनश्वेताम्बरश्रमण-श्रमणीनां नामानि* ॥

C षड्दर्शन-ज्ञाति-गच्छ-कुलानां नामानि ॥

D *गृहस्थानां नामानि* ॥

E देश-नगरादीनां नामानि ॥

F ग्रंथ—स्तोत्राणां नामानि ॥

G इतरधर्माचार्य-ऋषि-देव-बिरुदानां नामानि ॥

+इति चिह्नेन अंकितानि नामानि व्यक्तिविशेषाणां पदविशेषवाचकानि (विरुदानि)।

शुद्धिपत्रकम्

पत्रं	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
१६	११	चउत्तर	चउरुत्तर
,,	२४	बारब्भहिया	बारसब्भहिया
,,	२५	सिरविजयाणंद	सिरिविज्जाणंद
१८	६	वालन्न	वालब्भ
२३	१८	३५।५०।५०	३५।५०।१५
२७	१८	श्रीसोमनप्रभ	श्रीसोमप्रभ
३६	३७	सत्यशेखरः	सत्यशेखरः
४१	१८	वर्षमान	वर्धमान
५३	२	सीम्नि	सीम्नि
६८	२	१४७७	१४७०
६६	१	१५७	१५७०
,,	१६	विजदानसूरिः	विजयदानसूरिः
८१	८	सा० मोटाख्य	सा० मोटाख्य
८३	१७	वियसेनसूरीणां	विजयसेनसूरीणां
८५	२४	साक्षाद्धन्यागारा	साक्षाद्धन्यानगारा
६१	१४	सां धिरा	सा० धिरा
६७	४	थानाख्य	थानाख्यः
१११	१	श्रीकपुरविजयगणिः	श्रीकर्पूरविजयगणिः
१२१	२१	लद्धिपलूतापुडगम्मि	लद्धिएलूतापुडगंपि
,,	२१	उट्ठुंप्पयइ	उप्पयइ
,,	२२	पलायन्ति	पलोयन्ति
१४२	१४	भारेह	भारहे
१५०	१३	श्रीइददिन्नसूरिः	श्रीइंद्रदिन्नसूरिः
१५१	४	वज्रसेनसूरिपट्टे	वज्रस्वामिपट्टे
१५२	१०	श्रीवीरप्रभसूरिः	श्रीरविप्रभसूरिः
१८४	५	प्रथभो गणधरः	प्रथमो गणधरः

सूचना—तथा त्रुटिताक्षर-मात्रा-बिन्दु-व-ब-ह्रस्व-दीर्घ-प्रमुखाणां शुद्धि विद्वद्भिः स्वयमेव कर्तव्या।